ही लोमशऋषि सचेत हो नयन उघार अपने ज्ञान ध्यान से विचार कर बोले अरे पुत्र ! तैंने यह क्या किया क्यों राजा को शाप दिया ? उसके राज्य में हम सुखी कोऊ पशु पक्षी भी न हुआ दुखी, ऐसा धर्म राज्य था कि जिसमें सिंह गाय एक साथ रहते आपस में कुछ न कहते और पुत्र जिसके देश में हम बसे ? क्या हुआ तिनके हँसे ! मरा हुआ सर्प डाला था, उसे शाप क्यों दिया ? तनिक दोष पर ऐसा शाप तैंने दिया, बड़ा यह पाप किया कुछ विचार मन में नहीं किया गुण छोड़ अवगुण ही लिया, साधु को चाहिये शील स्वभाव से रहे, आप कुछ न कहे, और की सुनले, सबका गुण ले अवगुण को तजदे ।

इतना कह लोमशऋषि ने एक चेले को बुलाके कहा कि तुम राजा परीक्षित को जाकर जंतादो कि तुम्हें शृंगीऋषि ने शाप दिया है भला लोग तो दोष देहींगे, पर सावधान होजाय । इतना वचन गुरु का मान कर चला २ वहाँ चला आया जहाँ राजा बैठा शोच करताथा, आते ही कहा— महाराज ! तुम्हें शृंगीऋषि ने यह शाप दिया है कि सातवें दिन तक्षक डसेगा, अब तुम अपना कार्य करो जिससे कर्म की फाँसी से छूटो, सुनते ही राजा प्रसन्नता से खड़ा हो हाथ जोड़ कहने लगा कि मुझपर ऋषि ने बड़ी कृपा कि जो शाप दिया, क्योंकि माया मोह के अपार शोक सागर में पड़ा था, सो निकाल बाहर किया । जब मुनि का शिष्य बिदा हुआ तब राजा ने आपतो वैराग्य लिया और जनमेजय को राज्यपाट देकर कहा बेटा ! गो ब्राह्मण की रक्षा कीजो और प्रजाकोसुख दीजो इतना कह आये रनवास, देखी रानी सभी उदास, राजा को देखते ही रानियाँ पाँवों पर गिर रो रो कर कहने लगीं महाराज ! तुम्हारा वियोग हम अबला न सह सकेंगी, इससे तुम्हारे साथ जायें तो भला राजा बोला सुनो स्त्री को उचित है जिससे अपने पति का धर्म रहे सो करे, उत्तम काज में बाधा न डाले ।

इतना कह धन जन कुटुम्ब और राज्य की माया तज निर्मोही हो आप योग साधने गंगा के तीर पर जा बैठा, इसको जिसने सुना वह

बछेरु और ग्वालबाल निकलपड़े तिससमय आनन्दकर देवताओंने फूल और अमृत बरषाय सबकी तपन हरली सब ग्वालबाल श्रीकृष्णसे कहने लगे कि भैया इस असुरको मार आज तूने भले बचाये नहीं तो सब मर चुके थे।

अध्याय १४

श्रीशुकदेव मुनि बोले हे राजा! ऐसे अघासुरको मार श्रीकृष्णचन्द्र बछड़े घेर सखाओं को साथ ले आगे चले कितनी एकदूर जाय कदम्ब की छाँहमें खड़े हो वंशी बजाय सब ग्वालबालों को बुलाय कर कहा भैया! यह भली ठौर है, इसे छोड़ आगे कहां जायं? बैठो यहीं छाक खांय सो सुनते

ही उन्होंने बछड़े तो चरने को हाँकदिये और आक ढाक, बड़, कदम्ब कमलके पातलाय पत्तलें दौने बनाय झार बुहार श्रीकृष्णके चारों ओर पाँति की पाँति बैठ गये और अपनी अपनी छाकें खोल-खोल लगे आपस में परोसने, जब परोस चुके तब श्रीकृष्णचन्द्रने सबके बीच खड़े हो पहले आप कौर उठाय खाने की आज्ञा दी; वे खाने लगे, तिनमें मोर मुकुट धरे बनमाला गलेमें पहने लकुटलिए त्रिभङ्गी छबि किये पीताम्बर पहिरे पीतपट ओढ़े हँस हँस श्रीकृष्ण भी अपनी छाकसे सबको खिलाते थे और आप एक एकके पनवारे से उठा२ चख खट्टे मीठे तीते चरपरे का स्वाद कहते जाते थे वे उस मण्डलीमें ऐसे सुहावने लगतेथे कि जैसे तारों में चन्द्रमा

हाय हाय कर पछताय२ बिन रोये न रहा, और यह समाचार जब मुनियों ने सुना कि राजा परीक्षित शृङ्गी ऋषि के शाप से मरने को गंगा तीर पर आबैठा है, तब व्यास, वशिष्ठ, भरद्वाज, कात्यायन पराशर, नारद, विश्वामित्र, वामदेव जमदग्नि आदि अठासी सहस्र ऋषि आये और आसन बिछाय पांत २ बैठ गये, अपने २ शास्त्र विचार अनेक२ भाँति के धर्म राजा को सुनाने लगे कि इतने में राजा की श्रद्धा देख पोथी कांख में लिये दिगम्बर वेष श्री शुकदेव जी भी आन पहुँचे। उनको देखते ही जितने मुनि थे सब खड़े हुये और राजा परीक्षित भी हाथ बांध खड़ा हो विनती कर कहने लगा कृपा निधान! मुझ पर बड़ी दया की जो इस समय आपने मेरी सुधि ली, इतनी बात कही तब शुकदेव मुनि भी बैठे। राजा ऋषियों से कहने लगा कि महाराज! व्यासजी के जो बेटे पराशरजी के पोते जिनको देख तुम बड़े२ मुनीश होके उठे सो तो उचित नहीं इसका कारण कहो जो मेरे मनका सन्देह जाय। तब पराशर मुनि बोले राजा! जितने हम बड़े२ ऋषि हैं पर ज्ञान में शुक से छोटे ही हैं इसलिये सबने शुक का आदर मान किया। किसी ने इस आशय पर कहा कि ये तारण तरण हैं, क्योंकि जब से जन्म लिया है तब से ही उदासी हो बनवास करते हैं, और राजा! तेरा भी कोई बड़ा पुण्य उदय हुआ जो शुकदेवजी आये, ये हम सबसे उत्तम धर्म कहेंगे, जिनसे तू जन्म मरण से छूट भवसागर पार होगा। यह वचन सुन राजापरीक्षित ने शुकदेवजी को दण्डवत कर पूछा महाराज मुझे धर्म समझाय के कहो, किस रीति से कर्म के फन्दे से छूटूंगा सात दिनमें क्या करूँगा! अधर्म है अपार, कैसे भवसागर हूंगा पार!

श्री शुकदेवजी बोले-राजा! तू थोड़े दिन मत समझ, मुक्ति तो होती है एक घड़ी के ध्यान में जैसे राजा! खट्वांग को नारद मुनि ने ज्ञान बताया था, और उसने दो ही घड़ीमें मुक्ति पाई थी, तुझेतो सात दिन बहुत हैं जो एक चित हो करो ध्यान, तो सब समझोगे अपने ही

ज्ञानसे कि क्या है देह, किसका है बास, कौन करताहै इसमें प्रकाश यह सुन राजा ने हर्ष से पूछा महाराज ! सब धर्मोंसे उत्तम कौनसा है ! सो कृपा कर कहो, तब शुकदेवजी बोले, राजा वैसे सब धर्मों में वैष्णव धर्म बड़ा है तैसे पुराणोंमें श्रीमदभागवत । जहाँ हरिभक्त वह कथा सुनाते हैं वहाँ ही सब तीर्थ और धर्म आते हैं जितने हैं पुराण पर नहीं है कोई भागवत समान । इस कारण मैं तुझे बारह स्कंध महापुराण सुनाता हूँ जो व्यास मुनिने मुझे पढ़ाया है तू श्रद्धा समेत आनन्द से चितदे सुन । तब तो राजा परीक्षित प्रेमसे सुनने लगे। और श्रीशुकदेवजी नेमसे सुनाने लगे । कथा के श्रोता सब आने लगे ।

नौ स्कंध कथा जब मुनिने सुनाई तब राजाने कहा दीनदयाल दया कर श्री कृष्णावतारकी कथा कहिये क्योंकि हमारे सहायक कुलपूज्य वही हैं। शुकदेव जी बोले राजा! तुमने मुझे बड़ा सुख दियाजो यह प्रसङ्ग पूछा सुनो में प्रसन्नहो कहताहूँ यदुकुलमें पहले भजमान नाम राजा थे तिनके पुत्र पृथु, पृथु के विदुरथे उनके शूरसेन जिन्होंने नौखण्ड पृथ्वी जीतके यश पाया । उनकी स्त्री का नाम मारिष्या उसके दश लड़के और पाँच लड़कियाँ तिनमें बड़े पुत्र वासुदेव जिनकी स्त्रीके आठवें गर्भ में श्रीकृष्णजी ने जन्म लिया। वासुदेवजी उपजे थे तब देवताओं ने सुरपुर में आनंद के

बाजन बजाये थे और शूरसेन की पांच पुत्रियों में सबसे बड़ी कुन्ती थी जो पाँडुको व्याहीथी, जिसकी कथा महाभारतमें गाईहै और वासुदेवजी पहिले तो रोहण नरेशकी बेटी रोहणीको व्याहलाये तिसके पीछे सत्रह व्याह किये तब अठारह पटरानी रानी हुईं तब मथुरामें कंसकी बहिन देवकी को व्याहा तहाँ आकाश वाणी भईकि इस लड़की के आठवें गर्भ में कंस का काल उपजेगा। यह सुन कंसने बहिन बहनोईको एक घरमें मूंदादिया-और श्रीकृष्ण ने वहाँ ही जन्म लिया। इतनी कथा सुनतेही राजा परीक्षित बोले-महाराज! कैसे कंस ने जन्म लिया। किसने उसे महावर दिया और कौन रीति से कृष्ण उपजे और फिर किस विधि से गोकुल पहुँचे जाय यह तुम मुझे कहो समझाय।

श्रीशुकदेवजी बोले- मथुरापुरी का आहुक नाम राजा तिसके दो बेटे एकका नाम देवक दूसरा उग्रसेन कितने एकदिन पीछे उग्रसेन ही वहांका राजा हुआ जिसकी एकही रानी थी उसका नाम पवनरेखा सो अति सुन्दरी और पतिव्रता थी आठों पहर स्वामी की आज्ञाही में रहे एक दिन कपड़ोंसे भई तो पति की आज्ञाले सखी सहेलीको साथ कर रथ में चढ़कर बनमें खेलनेको गई वहाँ घने२ वृक्षों में फूल फूले हुये सुगन्धवाली मंद२ ठंडी हवा बहरही कोकिल कपोत और मोर मीठी मीठी मन भावन बोलियाँ बोल रहे और एक ओर पर्वतके नीचे यमुना न्यारीही लहरें ले रहीथी कि रानी इस समय को देख रथसे उतरकर चली तो अचानक एक ओर अकेली भूलके जा निकली वहाँ द्रुमलिक नाम राक्षस भी संयोगसे आपहुँचा, वह इसके यौवन और रूप की छवि देख छक रहा और मन में कहने लगा कि इससे भोग किया चाहिये। निदान तुरन्त राजा उग्रसेन का स्वरूप बन रानीके सोहींजा बोला, तू मुझसे मिल। रानी बोली महाराज दिनको काम केलि करना योग्य नहीं क्योंकि इसमें शील और धर्म जाता है, क्या तुम नहीं जानते जो ऐसी कुमति विचारी है?

तब पवनरेखा ने इस भाँति कहा, तब तो द्रुमलिकने रानी का हाथ

पकड़ खेंचलिया और जोमन माना सो किया। इस भांति छलसे भोग करके जैसा था तैसाही बनगया। तब तो रानी अति दुःख पाय पछताय कर बोली अरे अधर्मी! पापी! चाँडाल! तूने यह क्या अंधेर किया जो मेरे सतको खो दिया। धिक्कार है तेरे माता पिता और गुरु को जिसने तुझे ऐसी बुद्धि दी। तुझसा पूत जन्मेसे तेरी मां बांझ क्यों न हुई? अरे दुष्टजो नर देह पाकर किसी का सत भंग करते हैं सो जन्म जन्म नरकमें पड़ते हैं। द्रुमलिकबोला रानी! तू शाप मतदे, तुझे मैंने अपने धर्म का फल दिया है, तेरी कोख बन्द देख मेरे मनमें बड़ी चिन्ता थी, सो गई आजसे हुई गर्भ की आस लड़का होगा दशवें मास और मेरी देहके स्वभाव से तेरा पुत्र नौ खंड पृथ्वीको जीत राज्य करेगा, और श्रीकृष्ण जी से लड़ेगा। मेरा नाम प्रथम कालनेमि था तब विष्णु से युद्ध किया था अब जन्म ले आया तो द्रुमलिक नाम कहाया। तुझको पुत्र दे चला तू अपने मन में किसी बात की चिन्ता मतकर। इतनी बात कह जब द्रुमलिक चला गया तब रानी को भी कुछ सोच समझकर मनमें धीरजभया।

दोहा—जैसी हो होतव्यता, तैसी उपजै बुद्धि। होन हार हृदय बसै, बिसरजाय सब सुद्धि।

इतने में सब सहेली आन मिलीं। रानी का शृङ्गार बिगड़ा देख एक सहेली बोल उठी- इतनी देर तुझे कहाँ लगी और यह क्या गति हुई! पवनरेखा ने कहा-सुनो सहेली! तुमने इस बनमें तजी अकेली, एक बंदर आया उसने मुझे अधिक सताया तिसके डर से मैं अबतक थर-थर काँपती हूँ यह बात सुनकर सबकी सब घबराईं और रानी को उठाकर रथपर चढ़ाय घर लाईं। जब दश महीने पुजे तब पूरे दिनोंका लड़का हुआ तिस समय बड़ी आँधी चली जिसके मारे लगी धरती डोलने अँधेरा ऐसा हुआ जो दिनकीरात होगई और लगे तारे टूट टूट कर गिरने बादल गर्जने और बिजली कड़कने।

ऐसे माघ सुदी तेरस बृहस्पतिवार को कंसने जन्म लिया। तब राजा

उग्रसेन ने प्रसन्न हो सारे नगरकी मङ्गला मुखियोंको बुलाय मङ्गलाचार करवाये और सब ब्राह्मण पण्डित, ज्योतिषियों को भी अति मान सन्मान से बुलावा भिजवाए। राजा ने बड़ी भाव भक्ति से आसन दे दे बैठाये तब ज्योतिषियों ने लग्न साध मूहूर्त विचारकर कहा–पृथ्वीनाथ! यह लड़का कंस नाम तुम्हारे वंश में उपजा सो अति बलवन्त हो राक्षसों को ले राज्य करेगा, और देवता और हरिभक्तों को दुःख दे आपका राज्य ले निदान हरि के हाथ मरेगा।

इतनी कथा कह शुकदेव मुनि ने राजा परीक्षित से कहा—राजा! अब मैं उग्रसेन के भाई देवककी कथा कहता हूँ कि उसके चार बेटे थे और छः बेटियाँ सो छहों बसुदेव को ब्याह दीं, सातवीं देवकी हुई जिसके होने से देवताओं को बड़ी प्रसन्नता भई और उग्रसेन के दश पुत्रों में सब से कंस ही बड़ा था जबसे जन्मा तब से यह उपाय करने लगा कि नगर में आय छोटे२ लड़कों को पकड़२ लावे और पहाड़ी खोह में मूँद मूँद मार डाले जो बड़े होंय तिनकी छाती पर चढ़, गला घोट जी निकाले इस दुःख से कोई कहीं निकलने न पावे, सब कोई अपने लड़कों को छिपावे प्रजा कहे दुष्ट यह कंस उग्रसेन का नहींहै कोई अंश महापापी जन्म ले आयाहै जिसने सारे नगरको सतायाहै यहबात सुन उग्रसेनने उसे बुलाकर बहुतसा समझाया, पर उसका कहना उसके जीमें कुछ न आया; तब दुःख पाय पछताय के राजा कहने लगा ऐसे पूत होनेसे मैं अपूत क्यों न हुआ, कहतेहैं जिससमय कुपूतघरमें आताहै तिस समय यश और धर्म जाता है जब कंस आठ बर्ष का भया तब मगध देश पर चढ़ गया, वहांका राजा जरासन्ध बड़ा योधा था, तिससे मिल इसने मल्लयुद्ध किया तो उसने कंसका बल देख लिया, तब हार मान अपनी दो बेटियां ब्याहदीं, यह ले मथुरामें आया और उग्रसेनसे बैर बढ़ाया एकदिन कोपकर अपने पिता से बोला कि तुम रामनाम कहना छोड़ दो और महादेवका जप करो उसने कहा मेरे तो कर्ता दुखहर्ता वहीहैं जो उनको ही न भजूंगा तो अधर्मी हो कैसे भव सागर पार हूँगा। यह सुन कंस ने

खुनसा बापको पकड़ कर सारा राज्य लेलिया और नगरमें यह डौंड़ी फेरदी कि कोई यज्ञदान, धर्म तप और रामनाम जप करने न पावेगा तब ऐसा अधर्म बढ़ा कि गो ब्राह्मण, हरिके भक्त दुःख पाने लगे, और धरती बोझसे मरने लगी जब कंस सब राजाओं का राज्य ले चुका तब एकदिन अपना दल ले राजा इन्द्र पर चढ़चला तहाँ मन्त्रीनेकहा, महाराज! इन्द्रासन बिना तप किये नहीं मिलता, आप बलका गर्व न करिये देखो, गर्वने रावण कुम्भकर्ण को कैसा खो दिया कि जिनके कुल में एक भी न रहा।

इतनी कथा कह शुकदेवजी राजा परीक्षित से कहने लगे कि राजा! जब पृथ्वी पर अति अधर्म होने लगा, तब पृथ्वी दुःख पाय घबराय गायका रूप बनाय रँभांती२ देवलोकमें गई और इन्द्रकी सभामें जाय शिरझुकाय उसने अपनी सब पीर कही कि महाराज! संसार में असुर अति पाप करने लगे, तिनके डरसे धर्म तो उठगया और मुझे आज्ञा हो नरपुर छोड़ रसातलको जाऊँ इन्द्र सुन सब देवताओं को साथ ले ब्रह्माके पास गये, ब्रह्मा सुन सबको महादेव के निकट ले गए, महादेवभी सुन सबको साथ ले वहाँ गये जहाँ क्षीर समुद्रमें नारायण सो रहे थे, उनको सोते जान ब्रह्मा, रुद्र इन्द्र, सब देवताओंको साथ ले खड़े हो हाथ जोर विनती कर देवस्तुति करने लगे–महाराजाधिराज! आपकी महिमा कौन कह सके मत्स्यरूप हो वेद डूबते निकाले, कच्छरूप बन पीठ पर गिरि धारण किया,बाराह बन भूमि को दाँत पर रख लिया, बामनहो राजा बलिको छला, परशुराम अवतार ले क्षत्रियोंको मार पृथ्वी कश्यप मुनिकोदी,राम अवतार लिया तब महादुष्ट रावण का बध किया, और जब जब दैत्य तुम्हारे भक्तों को दुःख देते हैं तब तब तुम आपही उनकी रक्षा करते हो नाथ! अब कंस के सताने से पृथ्वी अति व्याकुल हो पुकार करती है उसकी सुधि बेग लीजे असुरों को मार साधुओं को सुख दीजे।

ऐसे गुण गाय देवताओं ने कहा तब आकाश वाणी हुई सो ब्रह्मा देवताओं को समझाने लगे यह जो वाणी भई सो तुम्हें आज्ञा दी है कि तुम

सब देवी देवता ब्रजमण्डल पर जाय मथुरा नगरी में जन्म लो,पीछे चार स्वरूप धर हरिभी अवतार लेंगे बसुदेव के घर देवकी की कोख में, और बाललीलाकर नन्द यशोदाको सुख देंगे। इस रीतिसे ब्रह्माने सब बुझाकर कहा तब तो सुर मुनि किन्नर और गन्धर्व सब अपनी२ स्त्रियों समेत जन्म लेले ब्रज मण्डल में आये, यदुवंशी और गोप कहाये और जो चारों वेद की ऋचायें थीं सो भी ब्रह्मा की आज्ञा से गोपी हो ब्रजमें आईं और कहलाईं जब सब देवता मथुरापुरी में आचुके तब क्षीर समुद्रमें हरि विचार करने लगे कि पहिले लक्ष्मण होवें बलराम पीछे बासुदेव हो मेरानाम भरत प्रद्युम्न शत्रुघ्न अनिरुद्ध और सीता रुक्मिणी का अवतार लेगी ।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेम सागरे पीढ़ी बन्धन प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अध्याय २

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा हे महाराज ! कंस तो इस अनीति से मथुरा में राज्य करने लगा और उग्रसेन दुःख सहने लगे। देवक जो कंस का चाचा था उसकी कन्या

देवकी ब्याहने योग्य हुई। तब उसने जो कंस से कहा कि यह लड़की किसको दें यह बोले शूरसेन के पुत्र बसुदेव को दीजिए इतनी बात सुनते ही देवक ने एक ब्राह्मण को बुलाय शुभ लग्न ठहराय शूरसेन के घर टीका भेज दिया तब तो शूरसेन भी बड़ी धूम धाम से बरात बनाय सब देश के नरेश साथले मथुरापुरी में बसुदेव को ब्याहने आये।

बरात नगर के निकट आई सुन उग्रसेन देवक और कंस अपना अपना दल साथ ले आगे बढ़ नगर में ले गये, अति आदर मान से आगौनी कर जनवासा दिया फिर खिलाय पिलाय सब बरातियों को माँढये के नीचे ले जाय बैठाय और वेद की विधि से कंस ने बसुदेव को कन्या दान दिया, तिसके यौतुक में पन्द्रह सहस्र १५००० घोड़े चार सहस्र ४००० हाथी अठारह सौ रथ, दास दासी अनेक दे, कञ्चन के थाल, वस्त्र आभूषण रत्न जटित से भर भर अनगिनत दिये और सब बरातियों को भी अलङ्कार समेत बागे पहराये सब मिल पहुँचावन चले तहँ आकाश वाणी हुई कि अरे कंस! जिसे तू पहुँचावन चला है तिसका आठवाँ लड़का तेरा काल उपजेगा उसके हाथ से तेरी मौत है।

यह सुनते ही कंस डर कर काँप उठा और क्रोध कर देवकी की चोटी पकड़ रथ से नीचे खींच लिया, खड्ग हाथ में ले दाँत पीस२ कहने लगा—जिस पेड़को जड़ ही से उखाड़िए तिसमें फूल फल काहेको लगेगा। अब इसीको मारूँ तो निभय राज्य करूँ यह देख, सुन बसुदेव मनमें कहने लगे इस मूर्ख ने दिया सन्ताप जानता नहीं पुण्य और पाप जो मैं अब क्रोध करता हूँ तो काज बिगड़ेगा तिससे इस समय क्षमा करना योग्य है

जो बैरी खैंचे तलवार। करें साधु तिनकी मनुहार। समझा मूढ़ सोई पछिताय। जैसे पानी आग बुझाय

यह सोच समझ बसुदेव कंस के सौंही जा, हाथजोर विनती कर कहने लगे कि सुनो पृथ्वीनाथ! तुमसा बली संसार में कोई नहीं और सब तुम्हारे छाँह तले बसते हैं, ऐसे शूर हो स्त्री पर शस्त्र करो यह अति अनुचित है, और बहिन के मारने से महापाप होता है, तिस पर भी मनुष्य अधर्म

तो करे जो जाने की मैं कभी न मरूंगा. इस संसार की तो यही रीति है इधर जन्मा उधर मरा करोड़ों यत्न से पाप पुण्य कर कोई इस देह को पोषे पर यह कभी अपनी न होगी. और धन यौवन राज्य भी न आवेगा काम, इससे मेरा कहा मान लीजे और अपनी अबला अधीन बहिन को छोड़ दीजे इतना सुन वह अपना काल जान घबराकर औरभी भुँझलाया तब बसुदेव सोचने लगे यह पापी तो असुर बुद्धि किये अपने हठ की टेक पर है जिससे इसके हाथ से यह बचे सो उपाय किया चाहिए ऐसे विचार मनमें कहने लगे अबतो इससे यहकह देवकी को बचाऊँ कि जो मेरे पुत्र होगा सो तुझे दुंगा, पीछे किसने देखा है लड़का होय न होय,कि यह दुष्ट मरेकिनमरे यह अवसर तो टले फेर समझा जायगा, इस भाँति मनमें ठान बसुदेव ने कंससे कहा महाराज! तुम्हारी मृत्यु इसके पुत्रके हाथ न होयगी क्यों कि मैंने एक बात ठहराईहै कि देवकी के जितने लड़के होंगे तितने मैं लाइूंगा यह वचन मैंने तुमको दिया। ऐसी बात जब बसुदेवने कही तब समझ के कंसने मानली और देवकी को छोड़ कहने लगा हे बसुदेव! तुमने अच्छा विचार किया जो ऐसे भारी पाप से मुझे बचा लिया इतना कह विदा हो वे सब अपने घर गये।

कितने एक दिन मथुरा में रहते भये जब पहिला पुत्र देवकी के हुआ तब बसुदेव ले कंस पै गये और रोता हुआ लड़का आगे धर दिया देखतेही कंस ने कहा बसुदेव तुम बड़े सत्य वादी हो मैंने आज जाना क्यों कि तुमने मुझसे कपट न किया, निर्मोही हो अपना पुत्र ला दिया इससे डर नहीं है कुछ मुझको, यह बालक मैंने दिया तुमको, इतना सुन बालक ले दण्डवत कर बसुदेवजी तो अपने घर आये और उसी समय नारद मुनिजी ने जाय कंस से कहा राजा! तुमने यह क्या किया जो बालक उलटा फेर दिया ? क्या तुम नहीं जानते कि बसुदेवकी सेवा करने को सब देवताओं ने ब्रज में आय जन्म लिया है और देवकीके आठवें गर्भ

में श्रीकृष्ण जन्म ले सब राक्षसों को मार मार भूमिका का भार उतारेंगे? इतना कह नारद मुनिने आठ लकीर खैंच गिनवाईं जब आठही गिनतीमें आईं तब डरकर कंस ने लड़के समेत बसुदेवजी को बुला भेजा। नारद मुनि तो यों समझाय बुझाय चले गये और कंस ने बसुदेव से बालक ले मार डाला। ऐसे जब पुत्र होय तब बसुदेव ले आवें; और कंस मार डाले इसी रीति से छःबालक मारे तब सातवें गर्भमें शेषरूप जो भगवान तिन्होंने आ बास किया, यह कथा सुन राजा परीक्षित ने शुकदेव मुनि से पूछा महाराज! नारद मुनि ने जो अधिक पाप करवाया तिसका ब्यौरा समझा

कर कहो, जिससे मेरे मनका सन्देह जाय श्रीशुकदेवजी बोले राजा! नारद मुनि ने अच्छा विचारा कि यह अधिक पाप करे तो श्रीभगवान तुरन्त-प्रगट होवें।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेम सागरे देवकी विवाह बालक बधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अध्याय ३

फिर शुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगे कि राजा, गर्भमें आये हरी और ब्रह्मादिक ने स्तुति करी और देवी जिस भाँति बलदेवजी को गोकुल ले गईं तिस रीति से कहता हूँ, एकदिन राजा कंस अपनी सभामें

आय बैठा और जितने दैत्य उसके थे उनको बुलाकर कहा सुनो सब देवता पृथ्वीमें जन्म ले आये हैं तिन्हीमें कृष्णभी अवतार लेगा, यह भेद मुझसे नारद मुनि समझाय कह गये हैं इससे अब उचित यह है कि तुम जाकर सब यदुवंशियों का ऐसा नाश करो जो एक भी जीता न बचे यह आज्ञा पा सबके सब दण्डवत कर चले नगर में आ ढूँढ़२पकड़२ कर बांधने लगे। खाते, पीते, खड़े, बैठे, सोते, जागते, चलते, फिरते जिसे पाया तिसे न छोड़ा। घर२ में ढूँढ़२ खाया और जला२ डुबा२ पटक पटक दुख दे दे सब को मार डाला इसी रीतिसे दैत्य छोटे बड़े भाँति२के भयानक वेष बनाय नगर२ गाँव२ गली गली घर २ खोज २ मारने और यदुवंशी दुःख पाय २ देश छोड़२ जी ले ले भागने लगे।

उसी समय बसुदेव की जो और स्त्रियाँ थीं सो भी रोहिणी समेत मथुरा से गोकुल में आईं, वहां बसुदेव जी के परम मित्र नन्दजी रहते थे उन्होंने हित से आशा भरोसा दे रखवाईं तब वे आनन्द से रहने लगीं जब कंस देवताओं को यों सताने और अतिपाप करने लगा तब विष्णु ने अपनी आँखों से एक माया उपजाई। वह हाथ बांध सन्मुख आई, उस से कहा अब तू संसार में जा अवतार ले मथुरापुरी के बीच, जहां दुष्ट कंस मेरे भक्तों को दुख देता है, और कश्यप अदिति जो बसुदेव देवकी हो ब्रज में गये हैं तिनको मूँद रक्खा है छः बालक तो उनके कंसने मार डाले अब सातवें गर्भ में लक्ष्मणजी हैं। उनको देवकी की कोख से निकाल गोकुल में जाकर इस रीति से रोहिणी के पेट में रख दीजो कि कोई दुष्ट न जाने और सब वहां के लोग तेरा यश बखानें।

इस भाँति माया को समझाय श्रीनारायण बोले कि तू तो पहिले जाकर यह काज करके नन्द के घरमें जन्म ले, पीछे बसुदेव गेह में अवतार ले मैं भी नन्द के घर आता हूँ। इतना सुनते ही माया उठ मथुरा में आई और मोहिनी रूप बन बसुदेव के गेह में पैठ गई।

जाय छिपाय गर्भ हरि लिया। जाय रोहिणी को सो दिया॥
जाने सब पहला आधान। भये रोहिणी के भगवान॥

इस रीति से श्रावण सुदि चौदस बुधवारको बलदेवजीने गोकुल में जन्म लिया और मायाने बसुदेव देवकी को जाय स्वप्न दिया कि मैंने तुम्हारा पुत्र गर्भ से ले जाय रोहिणी को दिया है, तुम किसी बात की चिंता मत कीजो सुनतेही बसुदेव देवकी जाग पड़े और आपस में कहने लगे कि यह तो भगवान ने भला किया पर कंसको इसी समय चेताया चाहिए नहीं तो क्या जानिये पीछे क्या दुःख दे, यों सोच समझ रखवालों से बुझाकर कहा। उन्होंने कंस से जा सुनाया कि महाराज! देवकी का गर्भ अधूरा गया, बालक कुछ न पूरा भया सुनतेही कंस घबरा कर बोला कि तुम अबकी बेर चौकसी करियो. क्यों कि आठवेंही गर्भ का मुझे डर है जो आकाश वाणी कह गई है।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! बलदेवजी तो यों प्रगटे और श्रीकृष्णजी देवकी के गर्भ में आये तभी माया ने जा नन्द की नारी यशोदा के पेट में बास लिया। दोनों आधान से थीं कि एक पर्व में देवकी नहाने गई, वहां संयोग से यशोदा भी आन मिली तो आपस में दुःख की चर्चा चली निदान यशोदा ने देवकी को वचन दे कहा कि तेरा बालक मैं रक्खूंगी, अपना तुझे दूंगी, ऐसे वचन दे यह अपने घर आई और वह अपने घर गई, आगे जब कंस ने जाना कि देवकी का आठवां गर्भ रहा तब जा बसुदेव का घर घेरा चारों ओर दैत्य की चौकी बैठा दी और बसुदेवजीको बुला कर कहाकि अब तुम मुझसे कपट मत कीजो और अपना लड़का ला दीजो, तब मैंने तुम्हाराही कहना मान लिया था।

ऐसे कह बसुदेव देवकी को बेड़ी हथकड़ी पहिराय एक कोठे में मूँद कर ताला दे निज मन्दिर में आ मारे डर के उपासकर सो रहा। फिर भोर होतेही वहीं गया जहां बसुदेव देवकी थे, गर्भका प्रकाश देख कहने लगा इसी यम गुफा में मेरा काल है, मार तो डारूं पर अपयशसे डरता हूँ क्यों कि बलवान हो स्त्री को मारना योग्य नहीं भला इसके पुत्रही को मारूँगा। यों कहकर बाहर आ, गज, सिंह, श्वान और अपने बड़े बड़े

योद्धा वहां चौकी को रखवाये और आपभी नित चौकसी कर आवे पर एक पलभी चैन न पावे जहां देखे तहां आठपहर चौंसठघड़ी कृष्णरूप कालही दृष्टिमें आवे, तिसके भयसे भावित हो रात चिंतामें गवावे।

इधर कंसकी तो यह दशाथी, उधर बसुदेव और देवकी पूरे दिनों महाकष्ट में श्रीकृष्णजीको मनातेथे कि इस बीच भगवानने आ उन्हें स्वप्न दिया और इतना कह उनके मनका सोच दूर किया कि हम बेगही जन्मले तुम्हारी चिंता मेटते हैं अब मत पछिताओ,यह सुन बसुदेव देवकी जागपड़े इतने में ब्रह्मा,रुद्र, इन्द्रादि सब देवता अपने२ बिमान छोड़ अलख रूप बन बसुदेवके गेहमें आय और हाथ जोड़२ वेद गाय२ गर्भ स्तुति करने लगे तिस समय उनको तो किसीने न देखा पर वेद की ध्वनि सबने सुनी यह अचरज देख रखवाले अचम्भे में रहे और बसुदेव देवकी को निश्चय हुआ कि भगवान बेगही हमारी पीर हरेंगे।

इति तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४

श्रीशुकदेवजी बोलेकि हे राजा ! जिस समय श्रीकृष्ण जन्म लेने लगे

तिसकाल सबहीके जीमें ऐसा आनन्द उपजा कि दुःखका नामभी न रहा हर्ष से लगे बन उपबन हरे हो२ फूलने, नदी नाले सरोवर भरने, तिनपर भाँति२ के पक्षी कलोलें करने और नगर२ गाँव२घर२, मङ्गलाचार होने, ब्राह्मण यज्ञ रचने दशोंदिशाके दिक्पाल हर्षने,बादल ब्रजमण्डलपर फिरने देवता अपने२ विमानों में बैठे आकाशसे, फूल बरषाने, विद्याधर. गन्धर्व चारण ढोल दमामे भेरी बजाय२ गुणगाने और एकओर उर्वशी आदि सब अप्सरा नाच रहीथीं कि ऐसेसमय भाद्रपदबदी अष्टमी बुधबार रोहिणी नक्षत्र में आधी रातको श्रीकृष्णचन्द्रने आय जन्म लिया और मेघवर्ण चन्द्रमुख, कमलनयन हो पीताम्बर काछे, मुकुट धरे, वैजयन्ती माल, और रत्न जटित आभूषण पहरे, चतुर्भुज रूप किये शङ्ख. चक्र, गदा पद्म लिये बसुदेव देवकी को दर्शन दिया, देखतेही अचम्भेमें हो उनदोनोंने ज्ञानसे विचारा तो आदिपुरुषको जाना तब हाथ जोड़ विनतीकर कहा हमारे बड़े भाग्य जो आपने दर्शन दिया और जन्म मरणका निबेड़ा किया ।

इतना कह अपनी पहलीकथा सब सुनाई जैसे कंसने दुःखदियाथा तब श्रीकृष्णचन्द्र बोले तुम अब किसी बातकी चिंता मनमें मतकरो क्योंकि मैंने तो तुम्हारे दुःखके दूर करने को ही अवतार लिया है, पर इस समय मुझे गोकुल पहुँचादो और इसी बिरियाँ यशोदा के लड़की हुई है सो कंसको ला दो अपने जाने का कारण कहता हूँ सो सुनो ।

दो०-नन्द यशोदा तप करो,मोहीं सों मन लाय। देखन चाहत बाल सुख,रहौं कछुक दिन जाय ॥

फिर कंस को मार आन मिलूंगा तुम अपने मनमें धैर्य धरो ऐसे बसुदेव देवकी को समुझाय श्रीकृष्ण बालक बन रोने लगे और अपनी माया फैलादी तबतो बसुदेव देवकीका ज्ञान गया और जानाकि हमारे पुत्र भया यह समझ दशसहस्र गायें मनमें सङ्कल्पकर लड़केको गोदमें उठा छातीसे लगालिया,उसका मुँह देख दोनों लम्बीश्वासें भर२आपसमें कहने लगे जो किसी रीति इस लड़केको भगा दीजे तो पापीकंसके हाथसे बचे,बसुदेव बोले—

बिधिना बिन राखे नहिं कोई । कर्म लिखा सोई फल होई ॥

तब करजोरि देवकी क,हैनन्दमित्रगोकुलमें रहै॥पीर यशोदा हरै हमारी,नारि रोहिणी वहाँ तिहारी॥

इस बालकको वहां लेजाओ,यों सुन बसुदेव अकुलाकर कहने लगे इस कठिन बंधनसे छूट कैसे ले जाऊंगा, इतनी बातकही तो सब बेड़ी हथकड़ी खुलपड़ीं चारों ओर के किवाड़ उघड़गए,पहरुए अचेत नींदवश भये,तबतो बसुदेवजीने श्रीकृष्णको शूपमेंरख शिरपरधर शीघ्रही गोकुलको प्रस्थानकिया

सो०-ऊपर बरसे देव,पीछे सिंह जु गुँजरे। सोचतहैं बसुदेव,यमुना देखि प्रवाह अति ॥ २ ॥

नदीकेतीर खड़ेहो बसुदेव विचारने लगे कि पीछेतो सिंह बोलताहै और आगे अथाह यमुना बहरहीहै अबक्याकरूँ ऐसा कह भगवानका ध्यानधर आगे यमुनामें चले पैर ज्यों२आगे जाते थे त्यों२नदी बढ़तीथी जब नाकतक पानी आया तब तो ये निपट घबराए इनको ब्याकुल जान श्रीकृष्णने अपना पाँव बढ़ाया और हुँकारदिया चरणछूतेही यमुनाथाहहुई,बसुदेव पारहो नंदकी पौरपर जापहुँचे वहाँकिवाड़खुले पाए धसके देखातो सब पड़ेहैं देवीने ऐसी मोहनी डालीथी कि यशोदाको लड़की के होनेकी सुध नहींथी, बसुदेवजीने कृष्णको यशोदाके ढिंग सुला दिया और कन्याको ले चट अपना पंथ लिया नदी उतर फिर आये तहाँ देवकी बैठी सोचतीथी जब कन्या दे वहाँ की कुशल कही सुनतेही देवकी प्रसन्नहो बोली हे स्वामी। हमें कंस अब मारडाले तो भी कुछ चिंता नहीं क्योंकि इस दुष्ट के हाथसे पुत्र तो बचा।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षितसे कहने लगेकि जब बसुदेव लड़कीको लेआये और दोनोंने हथकड़ियाँ पहरलीं कन्या रो उठी रोनेकी धुनि सुन पहरुये जागतो अपन२ शस्त्र ले सावधान हो लगे तुपक छोड़ने तिनका शब्दसुन लगे हाथी चिंघाड़ने सिंह दहाड़ने और कुत्ते भूंकने तिसी समय अँधेरी रातके बीच रस्तेमें एक रखवालेने आय हाथ जोड़ कंससे कहा महाराज। तुम्हारा बैरी उपजा यह सुन वह मूर्छित हो गिरा

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कृष्णजन्म कन्या ग्रहण नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अध्याय ५

बालकका जन्म सुनतेही कंस डरता काँपता उठखड़ा हुआ और खड्ग

हाथमें ले गिरता पड़ता दौड़ा,छूटेबालों पसीनामेंमेंडूबा धुकुड़पुकुड़ करता जा बहिनके पास पहुँचा जब उसके हाथसे लड़की छीनली तब वह हाथ जोड़ बोली, हे भैया ! यह कन्या तेरी भानजीहै इसे मत मार यह पेट पोंछनी है मेरे बालक छःमारे हैं तिनका दुःख अति सताता है विनकाज कन्याको मार क्यों पाप बढ़ाताहै, कंसबोला जीती लड़की तुझे न दूंगा इसे जो व्याहेगा सो मुझे मारेगा इतना कह बाहर आय ज्योंहीं चाहे कि फिराय पत्थर पर पटके त्योंही हाथसे छूट कन्या आकाशको गई और पुकारके कहगई कि अरे कंस मेरे पटकनेसे क्या हुआ तेरा बैरी कहीं जन्म ले चुका तेरा जी न बचेगा।

यहसुन कंस अछता पछता वहांआया,जहां बसुदेव देवकीथे आतेही उन के हाथ पाँवकी हथकड़ी बेड़ी काटदी और विनती कर कहने लगा कि मैंने बड़ा पाप किया, जो तुम्हारे पुत्र मारे यह कलंक कैसे छूटेगा मेरी गति किस जन्म में होगी, तुम्हारे देवता झूठे हुए जिन्होंने कहाथा कि देवकी के आठवें गर्भमें लड़का होगा सो न हो लड़की हुई वहभी हाथ से छूट स्वर्ग को गई अब दयाकर मेरा दोष जी में मत रक्खो क्योंकि कर्म का लिखा किसी के मेटे नहीं मिटता, जो ज्ञानी हैं सो मरना जीना समान ही जानते हैं और अभिमानी मित्र शत्रु कर मानते हैं, तुम तो बड़े साधु सत्यवादी हो जो हमारे हेतु अपने पुत्रले आये।

ऐसे कह जब कंसबार२हाथ जोड़नेलगा तब बसुदेवजी बोले महाराज तुम सच कहतेहो इसमें तुम्हारा कुछ दोषनहीं विधाताने यही कर्ममेंलिखाथा यहसुन कंस प्रसन्नहो अतिहितसे बसुदेव देवकीको, अपने घर लेआया,और भोजन करवाय बागे पहराय बड़े आदर भावसे दोनोंको फेर वहीं पहुंचादिया, और मंत्रीको बुलाके कहाकि, देवी कह गईहै तेरा बैरी जगतमें जन्मा इससे अब देवताओंको जहांपावोतहांमारो क्योंकि उन्होंनेबेसमझेबूझे झूठीबातकही कि देवकीके आठवें गर्भमेंतेराशत्रु होगा,मन्त्री बोला उनका मारना क्या बड़ी बातहै वेतो जन्मके भिखारी हैं जब आप कोपिएगा तभी वे भाग जावेंगे, उनकी क्या सामर्थ्यहै जो तुम्हारे सन्मुखहों,ब्रह्मा तो आठ पहर ज्ञान ध्यानमें रहता है महादेव भाँग धतूरा खाय, इन्द्रका कुछ तुम पर न बसाय, रहा नारायण सो संग्राम नहींजाने, लक्ष्मी के साथ रहताहै सुखमाने, कंस बोला नारायणको कहां पावें, और किस विधिसे जीतें सो कहो मन्त्री ने कहा महाराज! जो नारायण को जीता चाहतेहो तो जिनके घरमें आठ पहर है उनका बास, तिनहींका अब करो विनाश, ब्राह्मण, वैष्णव, योगी, यती तपस्वी, सन्यासी बैरागी आदि जितने हरिके भक्तहैं तिनमेंसे लड़केसे ले बूढ़े तक भी जीता न रहे; यह सुन कंसने प्रधानसे कहा तुम सबको जाके मारो, आज्ञा पाकर मन्त्री अनेक राक्षस साथ ले बिदाहो नगर में लगा (गो-ब्राह्मण) बालक और हरि भक्तको छलकर ढूँढ़२ मारने।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेम सागरे कंसोपद्रवकरणो नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अध्याय ६

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले हेराजा! एकसमय नन्द यशोदा ने पुत्रकेलिए बड़ा तप किया, तहां श्रीनारायणने आय वर दिया कि हम तुम्हारे यहाँ जन्मले आयेंगे जब भाद्रपदबदी अष्टमी बुधवारको आधीरातके समय श्रीकृष्ण आए तब यशोदाने जागतेही पुत्रका मुख देख नन्दको बुला अति आनन्द माना और अपनाजीवन सफलजाना, भोर होतेही उठके नन्दजीने पण्डित और ज्योतिषियोंको बुला भेजा वे अपनी पोथी पत्रा ले२

आये, तिनको आसन दे२ आदर मानपे बैठाए, तिन्होंने शास्त्रकी विधिमे सम्वत महीना तिथि दिन नक्षत्र, योग करण ठहराय, लग्न,विचार मुहूर्त साधके कहा महाराज हमारे शास्त्रके विचारमें तो ऐसा आताहै कि यह लड़का दूसरा विधाताहो सब असुरोंको मार ब्रजका भार उतार गोपीनाथ कहावेगा सारा संसार इसीका यश गावेगा यह सुन नन्दजीने कञ्चनके शृङ्ग रूपेकेखुर तांबेकी पीठकी दोलाख गऊ पाटम्बर ओढ़ाय सङ्कल्पकीं और अनेक दानकर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे२ आशीष ले२ बिदाकिया, तब नगरकी सब मङ्गला मुखियोंको बुलाया वे आय२अपना गुण प्रकाश करने लगीं, बजंत्री बजाने नर्तक नाचने गायक गाने ढांढ़ी ढांढ़िन यश बखानने और जितने गोकुल

के गोप ग्वाल थे वे अपनी२ नारियों के शिरपर दहेड़ियां लिवाय भाँति भांतिके वेष बनाये नाचते गाते नन्दको बधाई देने आए आतेही ऐसा दधिकांदा कियाकि सारे गोकुलमें दही दही करदिया जब दधिकांदो खेल चुके तब नन्दजीने सबको खिलाय पिलाय बागे पहराय तिलककर पानदे बिदा किया

इसी रीतिसे कई दिनतक बधाई रही इस पीछे नंदजीसे जिसने जो२ आय आय मांगा सो२ पाया बधाई से निश्चिन्त हो नंदजीनें सब ग्वालों को बुलाय के कहा भाइयो ! हमने सुनाहै कि कंस बालक पकड़२ कर मँगवाताहै न जानिए कोई दुष्ट कछु बात लगा दे इससे उचितहै कि सब

मिल भेंट ले चलें और बरसौड़ी दे आवें यह वचन मान सब अपने२ घरसे दूध दही माखन ले मथुरा आए कंस से भेंट कर भेंटदी कौड़ी कौड़ी चुकाय बिदा होकर अपनी बाट ली।

ज्योंही यमुना तीर पर आये त्योंही समाचार सुन बसुदेवजी आ पहुँचे नन्दजीसे मिल जुल कुशल क्षेम कहने लगे तुमसे सगा और मित्र हमारा संसारमें कोई नहीं क्योंकि जब हमें भारी विपत्ति आई तब गर्भवती रोहिणी तुम्हारे यहां भेजदी उसके लड़का हुआ सो तुमने पाल बड़ा किया हम तुम्हारे गुण कहाँतक बखानें इतना कह फिर पूछा कहो राम कृष्ण और यशोदा रानी आनन्दसे हैं नन्दजी बोले आपकी कृपासे सब भला है और तुम्हारे पुत्र बलदेवजी भी कुशलसे हैं कि जिनके होते तुम्हारे पुण्य प्रताप से हमारे पुत्र हुआ पर एक तुम्हारे ही दुखसे हम दुखित हैं, बसुदेव कहने लगे, मित्र बिधाता से कछु न बसाय कर्मकी रेख किसीसे मेटी न जाय इससे संसार में आय दुःख पीर पाय कौन पछिताय ऐसा ज्ञान जनाय के कहा—

तुम घर जाहु वेगि आपने। कीने कंस उपद्रव घने॥
बालक ढूंढ़ मंगावे नीच। भई सकल परजा की मींच॥

तुम तो यहाँ सब चले आए हो और राक्षस ढूंढ़ते फिरतेहैं न जानिए कोई दुष्ट जाय गोकुल में उपाधि मचावे यह सुनतेही नन्दजी अकुलाकर सब को साथ लिये सोचते विचारते मथुरा से गोकुल को चले।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेम सागरे कृष्णजन्मोत्सवो नाम षष्ठोऽध्यायः॥ ६ ॥

अध्याय ७

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! कंस का मन्त्री तो अनेक राक्षस साथ लिए मारताही था कि कंसने पूतना नाम राक्षसी को बुलाकर कहा तू जा यदुवंशियों के जितने बालक पावे तितने मार, यह सुन वह प्रसन्न हो दण्डवत कर चली तो अपने जीमें कहने लगी।

दो०—भयो पूत है नन्द के,सुनो गोकुल गाँव। छलकर अबही आई, गोपी ह्वै के जाँव॥

यह कह सोलह शृङ्गार बारह आभरण कर कुच में विष लगाय मोहिनी

रूपबन, कपट किए, कमलका फूल हाथमें लिये, बनठन के ऐसीचली कि जैसे श्रृङ्गार किये लक्ष्मी अपने पतिपै जाती होय गोकुलमें पहुंच हंसती२ नन्दके मन्दिर बीच गई देख सबकी सब गोपियां मोहित हो भूलीसी रहीं यहजो यशोदाके पास बैठी और कुशल पूछ आशीषदी कि बीर तेरा कान्हा जीवै कोटिवरस ऐसे प्रीति बढ़ाय लड़केको यशोदाके हाथसेले गोदमें रख ज्यों दूध पिलावने लगी त्यों श्रीकृष्ण दोनों हाथोंसे छाती पकड़ मुंहमें लगाय लगे प्राण समेत पय पीने तबतो अति ब्याकुलहो पूतना पुकारी कैसा यशोदा तेरापूत, मानुष नहींहै यह यमदूत, जेवरी जान मैंने साँप पकड़ा जो इसके हाथसे बच जीती पाऊंगी तो फेर गोकुलमें कभी न आऊंगी यों कह भाग

गांवके बाहर आई पर कृष्णने न छोड़ी निदान उसका जी लिया वह पछाड़ खाय ऐसी गिरी जैसे आकाशसे बज्र गिरे तिसका अतिशब्द सुन रोहिणी और यशोदा रोती पीटती वहीं आईं जहाँ पूतना दो कोश में मरी पड़ीथी. और उनके पीछे सब गाँव उठ धाया देखें तो श्रीकृष्ण उसकी छातीपर चढ़े दूध पी रहे हैं भट उठाय मुख चूम हृदय लगाय घर ले आई गुणियों को बुलाय भाड़ फूंक कराने लगी और पूतनाको देख गोपी ग्वाल खड़े आपस में कह रहेथे कि भाई इसके गिरनेका धमक्का सुन हम ऐसे डरेहैं जो छाती अबतक धमकती है न जानिये बालककी क्या गतिहुई होगी,इतनेमें मथुरा से नन्दजी आये तो क्या देखतेहैं कि एक राक्षसी मरी पड़ी है और ब्रज-

वासियों की भीड़ घेरे खड़ी है, पूछा यह उपाधि कैसे हुई ! वे कहने लगे महाराज पहले तो यह अति सुन्दर हो तुम्हारे घर आशीष देती गई इसे देख सब ब्रज नारी भूल रहीं यह कृष्ण को दूध पिलाने लगी पीछे हम नहीं जानते क्या गति हुई इतना सुन नन्दजी बोले बड़ी कुशल भई जो बालक बचा यह गोकुलपर न गिरी नहीं तो एकभी जीता न बचता सब इसके बीच दब मरते यों कह नन्द जी तो घर आय दान पुण्य करने लगे और ग्वालों ने फरसे फावड़े कुदाल से काट काट पूतना के हाथ पाँव तोड़ तोड़ गड्ढे खोद खोद गाढ़ दिया और माँस चाम इकठ्ठा फूंक दिया उसके जलाने से ऐसी सुगन्ध फैली कि जिसने सारे संसार को सुगन्ध से भर दिया इतनी कथा सुन राजा परीक्षित ने श्री शुकदेवजी से पूछा महाराज ! वह राक्षसी महामलीन मद्य मांस खाने वाली उसके शरीर से सुगन्ध कैसे निकली सो कृपाकर कहो मुनि बोले राजा ! श्रीकृष्णचन्द्र ने दूध पीने से मुक्ति दी इस कारण सुगन्ध निकली ।

अध्याय ८

श्री शुकदेवजी बोले हे महाराज परीक्षित—

दोहा—जिहि नक्षत्र मोहन भये, सो नक्षत्र परी आय । चारु बधाये रीति सब, करत यसोदा माय ।।

जब सत्ताईस दिन के हरि हुये तब नन्दजीने सब ब्राह्मण और ब्रज वासियों को नोता भेजदिया वे आये तिन्हें आदरमानकर बैठाया, आगे ब्राह्मणों को बहुतसा दानदे बिदा किया और भाइयों को बागे पहिराये षटरस भोजन कराने लगे तिस समय यशोदा रानी परोसतीथी रोहणी टहल करती थी, ब्रजवासी हंस हंस खा रहे थे, गोपियां गीत गारहीं थी सब आनन्द में ऐसे मग्न थे कि कृष्ण की सुरत किसी को भी न थी, और कृष्ण एक भारी छकड़े के नीचे पालने में अचेत सोते थे कि इसमें भूखेहो जंगे तो पांव का अगूठा सुहंमें दे रोमन लगे हिलक हिलक चारोंओर देखने, उसी औसर में उड़ता हुआ एक राक्षस आ निकला कृष्ण को अकेला देख अपने मन में कहने लगा कि यह तो कोई बड़ा बली उपजा है पर आज मैं इससे

पूतना का बैर लूंगा, ये मनमें ठान शकट में आन बैठा तिसी से उसका नाम शकटासुर हुआ जब गाढ़ा चरचराय कर हिला तब श्रीकृष्ण ने बिलखते२ एक ऐसी लात मारी कि वह मरगया और छकड़ा टूकटूक हो गिरा तो जितने बासन दूध दही के थे सब फूटने का शब्द सुन सब गोपी ग्वाल दौड़ आये आते ही यशोदाजी ने कृष्ण को उठाय मुंह चूम छाती से लगालिया यह अचरज देख सब आपस में कहने लगे आज बिधनाने बड़ी कुशल की जो बालक बचरहा और शकट ही टूट गया।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले हे महाराज! जब हरि पांच महीने के हुये तब कंसने तृणावर्त को पठाया वह बगला हो गोकुलमेंआया नन्दरानी कृष्ण को गोद लिये आँगन के बीच बैठी थी कि एकाएकी कन्हैया ऐसे भारी हुये जो यशोदाने मारे बोझ के गोदसे उतारे इतने में एक ऐसी आँधी आई दिन की रात होगई और पेड़ उखड़२ गिरने लगे खप्पर लड़खने लगे तब व्याकुलहो यशोदाजी श्रीकृष्ण को उठाने लगीं पर वे न उठे ज्योंही उनके शरीर से इनका हाथ अलग हुआ त्योंही तृणावर्त आकाश को लेउड़ा और मनमें कहने लगा कि आज इसे बिना मारे न रहूँगा वह तो कृष्ण को लिये वहाँ यह विचार करता था कि यहाँ यशोदाजी ने जब कृष्ण को न पाया तब रोरो कृष्ण२ कह पुकारने लगीं यह शब्दसुन सब गोपी ग्वाल दौड़े आये साथ ही ढूंढने धाये अंधेरे में अटकल से टटोल टटोल चलते थे तिस पर भी ठोकर खाय गिर गिर पड़ते थे।

चौ-ब्रजमें गोपी ढूंढत डोलें, रोहिणी और यशोदाबोलें। नन्द मेघ धुन करें पुकार, ढूंढे गोपी गोप अपार।

जब श्रीकृष्ण ने नन्द यसोदा सहित सब ब्रजवासी अति दुखित देखे तब तृणावर्त को फिराय आंगनमें ला शिलापर पटका तुरन्त जी उसका देह से निकल सटका आंधी थम गई उजाला हुआ सब भूले भटके घर आये देखें तो राक्षस आंगनमें मरा पड़ा है श्रीकृष्ण छाती पर खेल रहे हैं आते ही यशोदा ने उठाय कंठ से लगालिया और बहुत सा दान ब्राह्मणों को दिया

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे शकट भंजनतृणावर्तवधो नाम अष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥

अध्याय ६

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा। एकदिन बसुदेवजी ने गर्ग मुनिको जो बड़े ज्योतिषी और यदुवंशियों के पुरोहित थे उन्हें बुलाकर कहा कि तुम गोकुल में जाओ और लड़के का नाम रख आओ।

नन्दजी के पुत्र हुआ है सो भी तुम्हें बुलागये हैं सुनते ही गर्गमुनि प्रसन्न हो चले और गोकुल के निकट जा पहुँचे तिसी समय किसी ने नन्द जी से आ कहा कि यदुवंशियों के पुरोहित गर्गमुनिजी आते हैं यह सुन नंदजी आनन्दसे ग्वालबाल संग भेंटले उठधाये और पाटम्बर के पांवड़े डालते बाजेसे ले आये पूजाकर आसनपर बैठाय चरणामृतले स्त्री पुरुष हाथ जोड़ कहने लगे महाराज ! बड़े भाग्य हमारे जो आपने दयाकर दर्शनदे घर पवित्र किया तुम्हारे प्रताप से दो पुत्र हुए हैं एक रोहणी के एक हमारे कृपाकर तिनका नाम धरिये गर्गमुनि बोले नामरखना उचित नहीं क्योंकि यह बात फैले कि गर्गमुनि गोकुल में लड़के का नाम धरने गये हैं और कंससुन पावे तो वह यही जानेगा कि देवकी के पुत्र को बासुदेव के मित्रके यहाँ कोई पहुंचाय आये हैं इसलिये गर्ग पुरोहित गया है यह समझ बूझके मुझको पकड़ मंगावेगा और न जानिये तुम पर भी क्या उपाधि लावे इससे तुम फैलाव मत करो चुप चाप घर में नाम धरवालो नंद बोले गर्गजी ! तुमने सच कहा इतना कह घरके भीतर लेजाय बैठ गये। तब गर्गमुनिने नंदजी

से दोनों की जन्म की तिथी और समयपूछ लग्न सोध मास ठहराया और कहा सुनो नन्दजी! बसुदेवकी रानी रोहणीके पुत्र के इतने नाम होवेंगे संकर्षण रेवतीरमण, बलदेव, बलराम, कालिन्दीभेदन, हलधर और बलबीर और कृष्णरूप;जो तुम्हारा लड़का है उनके नामतो अनगिनत हैं पर किसी समय बसुदेव के यहां जन्मा इससे बासुदेव नाम हुआ और बिचार में आता है कि ये दोनों बालक तुम्हारे चारों युगमें जब जन्मे हैं तब साथ ही जन्मे हैं नन्दजी बोले इनके गुण कहो गर्गमुनिने उत्तर दिया ये दूसरे बिधाता हैं इनकी गति कुछ जानी नहीं जाती पर मैं यह जानता हूं कि कंस को मार भूमि का भार उतारेंगे ऐसे कह गर्गमुनि चुपचाप चले गये और बसुदेव से जा समाचार कहे आगे दोनों बालक गोकुल में दिन२ बढ़ने लगे और बाललीला कर नन्द यशोदाको सुख देने, नीले पीले झिगुले पहने माथे पर छोटी छोटी लटुरियां बिखरी हुईं, ताई तगड़े बाँधे कठले गलेमें डाले खिलौने हाथ में लिये खेलते आँगन के बीच घुटनों चल२ गिर२ पड़े और तोतली२ बातें करें रोहिणी और यशोदा पीछे पीछे लगी फिरें, इसलिये की कहीं लड़के किसीसे डर ठोकर खान गिरें जब छोटे२ बछड़ों और बछियाओंकी पूंछ पकड़२ उठें और गिर२ पड़ें तब यशोदा और रोहणी अति प्यारसे उठाय छाती लगाय दूध पिलाय भांति भाँति के लाड़ लड़ावें, जब श्री कृष्ण बड़े भये तो एक दिन ग्वालबाल साथ ले ब्रज में दधि माखन की चोरी को गये ।

चौ—सूने घरमें ढूंढ़ै जाय,जो पावैं सो देय लुटाय। जिनको घरमें सोते पावें,तिनकी ढकी दही ढरकावें।

जहाँ छींके पर रक्खा देखें तहाँ पीढ़ी पर पटरा पटेरे पै उलूखल धर साथियों को खड़ाकर उसके उपर चढ़ उतारलें, कुछ खावें कुछ लुटादें ऐसे गोपियों के घर घर नित चोरी कर आवें, एक दिन सबने मता किया और गेह में मोहन को आने दिया, ज्यों घर भीतर पैठे, चाहें कि माखन दही चुरावें त्यों गोपी ने जाय पकड़कर कहा। दिन दिन आते निशि भोर, अब कहाँ जाओगे माखन चोर; यों कह जब सब गोपी मिल कन्हैया को

लिये यशोदा के पास उलाहना देने चलीं तब श्रीकृष्ण ने ऐसा छल किया कि उसीके का लड़के हाथ उसे पकड़ा दिया और आपने दौड़के अपने ग्वालवालोंका संग लिया वे चली२ नन्दरानी के निकटआय पाओं पड़ बोली जो तुम बिलग न मानो तो हम कहें जैसी कुछ उपाधि कृष्णने ठानी है।

दोहा—दूध दही माखन मही, बंचे नही व्रज माँहि। ऐसी चोरी करत है फिरत भोर अरु सांझ॥

जहाँ कहीं धरा ढका पाते हैं तहाँ निधड़क उठालाते हैं कुछ खाते हैं कुछ गिराते हैं जो कोई इनके मुख में दही लगा बतावै तासों उलटकर कहते हैं तूनेही तो लगाया है इस भांति नित चोरीकर आतेथे आज हमने पकड़ पाया सो तुमको दिखाने लाई हैं, यशोदा बोली बीर! तू किसका लड़का पकड़ लाई, कलसे तो बाहर नहीं निकला मेराकुँवर कन्हाई ऐसा सच बोलती हो? यह सुन और अपना ही बालक हाथ में देख हँस कर लजाय रहीं, तब यशोदाजी ने कृष्णको बुलाय के कहा पुत्र! तुम किसी के यहां मत जाओ, जो चाहो सो घरमें से ले खाओ।

चौपाई—सुनिकै कान्ह कहत तुतराय। मत मैया इन्हें तू पतियाय॥
झूठी गोपी झूंठी बोलें। मेरे पीछे लागी डोलें॥

कभी दोहनी, बछड़ा पकड़ाती हैं कभीघर की टहल कराती हैं मुझे द्वारे रखवाली बैठाल अपने काजको जाती हैं फिर झूटमूट आय तुमसे बातें लगाती हैं योंसुन गोपी हरिमुख देखदेख मुसकराकर चली गई, आगे एक दिन कृष्ण बलराम सखाओं के संग रेतमें खेलते थे कि कान्हने मिट्टी खाई तो एक सखा ने यशोदा से जा लगाई, वह क्रोधकर हाथमें छड़ी ले उठधाई, मांको रिसभरी आतीदेख मुह पोंछ डरकर खड़े होरहे, इन्होंने जाते ही कहा क्योंरे तूने मिट्टी क्यों खाई? कृष्ण डरते कांपते बोले मातु! तुझसे किसने कहा ये बोली तेरे सखाने, तब मोहनने कोप कर सखा से पूछा क्योंरे मैंने मट्टी कब खाई? वह भय खाकर बोला भैया! मैं तेरी बात कुछ नहीं जानता क्या कहूँ ज्योंही कान्ह सखा से बतराने लगे त्योंही यशोदाने उन्हें जा पकड़ा तहां कृष्ण कहने लगे मैया तू मत रिसाय कहीं मनुष्य भी मट्टी खाते हैं वह बोली मैं तेरी अटपटी बात नहीं सुनती जो तू सच्चा है तो

अपना मुख दिखा ज्योंही कृष्ण ने मुख खोला त्योंही उसमें तीन लोक दृष्टि आये तब यशोदा को ज्ञान हुआ तो मन में कहने लगी कि मैं बड़ी मूर्ख हूँ जो त्रिलोकी के नाथ को अपना सुत मानती हूँ।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित से बोले हे राजा ! जब नन्द रानीने ऐसा जाना तब हरि ने जगत् मोहनी माया फैलाई, इतने में मोहन को यशोदा प्यार कर कंठ लगाय घर ले आई ।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे विश्व दर्शन नाम नवमोऽध्याय ९

अध्याय १०

एकदिन दही मथने की बिरियाँ जान भोरही नन्दरानी उठी और सब गोपियों को जाय बुलाया वे आय घर झाड़ बुहार लीप पोत अपनी२ मथ- नियाँ ले ले दधि मथने लगीं तहां नन्दमहरि भी एक बड़ासा कोरा चरुआ ले इंडुये पर रख चौकी बिछा नेती और रई मंगाय टटकी२ दहेड़िया बांध२ रामकृष्ण के लिये बिलोवन बैठी तिससमय नन्दके घर ऐसा शब्द दही मथने का हो रहा था कि जैसे मेघ गरजता हो इतने में श्रीकृष्ण जागे रो रो कर मैया २ कर पुकारने लगे जब उनका पुकारा किसी ने न सुना, तब आपही यशोदा के निकट आय और आँखें डबडबाय अनमने हो सुसक२ तुतलाय२ कहने लगे कि मां तुझे कई बेर बुलाया पर मुझे कलेवा देने न आई, तेरा काज आजतक नहीं निबड़ा, इतना कह मचल पड़े और रई

चरुएसे निकाल दोनों हाथ डाल माखन काढ़२ फेंकने अङ्ग-अङ्ग लथेड़ने और पाँव पटक२आँचल खेंच रोने तब नंदरानी घबराय झुंझलाय के बोली बेटा ! यह क्या चाल निकाली ।

चौपाई-चल उठ तुझे कलेऊ देऊं । कृष्ण कहें अब मैं नहीं लेऊं ।
पहिले क्यों नहिं दीनों माय । अबतो मेरी लेइ बलाइ।

निदान यशोदाने फुसलाय प्यारसे मुंह चूम गोद में उठालिया और दधि माखन रोटी खाने को दिया हरि हँस २ खाते थे नन्दमहिर आंचल की ओट किये खिला रही थीं इसलिये कि मत किसी की दीठ लगे, इत बीच एक गोपी ने आके कहा कि तुम यहाँ बैठी हो वहांचूल्हे पर से दूध उफन गया वह सुनते ही झट कृष्ण को गोद से उतार उठधाई और दूध बचाया यहां कान्ह दहीमही के भाजन फोड़ रई तोड़ माखन भरी कमोरी ले ग्वालों में दौड़ आये एक उखल औंधा धरा पाया तिसपर जा,बैठे और चारों ओर सखाओं को बैठाय लगे आपस में हँस हँस बांट बांट माखन खाने इतने में यशोदा दूध उतार आय देखे तो आँगन और तिवारे में दही मही की कीच होरही है, तब तो सोच समझ हाथ में छड़ी ले निकली और ढूंढती२ वह आई, जहाँ श्रीकृष्ण, मंडली बनाय माखन खाय खिलाय रहे थे जाते ही पीछे से जा घेरा तो हरि माको देखते ही रोकर हाहाखाय लगे कहने कि गोरस किसनें लुटाया, मैं नही जानूं मुझे छोड़दे ऐसे दीनवचन सुन यशोदा हँसकर हाथ से छड़ी डाल और आनन्द में मग्न हो रिस के मिस कंठ लगाय, श्रीकृष्ण को उखल सेबांधने लगी तब श्रीकृष्ण नें ऐसा किया कि जिस रस्सी से बांधे वही छोटी होय यशोदाने सारे घर की रस्सी मंगवाईं तोभी श्रीकृष्ण बांधे न गये निदान माको दुखित जान आपही बंधाई ,में आगये नन्दरानी उन्हें बांध गोपियों से खोलने की सौंह दे फिर घर की टहल करने लगी ।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेम सागरे दामबधंन नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अध्याय ११

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा ! श्रीकृष्णचन्द्रको बँधे२ पूर्व जन्म की

शुधि आई कि कुबेरके बेटों को नारद ने शाप दियाहै तिनका उद्धार किया चाहिये यह सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा महराज कुबेर के

पुत्रों को नारदमुनि ने कैसे शाप दिया सो समझाय के कहो शुकदेव मुनि बोले नलकूवरनाथ कुबेर दो कैलाश में रहते थे सो शिवकी सेवा कर अति धनवान हुए स्त्रियां साथ ले वे बन बिहार को गये, वहाँ जाय मद्यपी मदमाते भये, रानियों समेत नंगे हो गङ्गा में नहाने लगे और गलबहियाँ डाल-डाल अनेक अनेक भांति की कलोलें करने लगे कि इतने में तहाँ नारदमुनि आ निकले उन्हें देखतेही रानियोंने तो निकल कपड़े पहिने और ये मतवारे वहीं खड़े रहे उनकी दशा देख मनमें नारदजी कहने लगे कि इनको धन का गर्व हुआ है इसीसे मदमाते हो काम क्रोध को सुख कर मानते हैं, निर्धन मनुष्य को अहंकार नहीं होता और धनवान को धर्म अधर्म का विचार कहां है! परन्तु मूर्ख झूटी देह से मोहकर भूल सम्पत्ति कुटम्ब देख देखके फूलें और साधूजन धनमद मनमें न आने सम्पति बिपति एकसम माने इतना कह नारदमुनि ने इन्हें शाप दिया कि इस पाप से तुम गोकुल में जा वृक्ष होओ जब श्रीकृष्ण अवतार लेंगे तब तुम्हें मुक्ति देंगे ऐसा नारदमुनि ने उन्हें शाप दिया, तिसी से वे गोकुल में आ वृक्षहुए तब उसका नाम यमलार्जुन हुआ इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! इस बात की सुरति कर श्रीकृष्ण ओखली को घसीट वहां

ले गए जहाँ यमलार्जुन पड़े थे जातेही उन दोनों तरुवरों के बीच ऊखल को अड़ा बलसे एक ऐसा झटका मारा कि वे दोनों उखड़ पड़े और उनसे दो पुरुष अति सुन्दर निकल हाथ जोड़ स्तुतिकर कहने लगे हे नाथ! तुम बिन हमसे महा पापियोंकी सुधि कौनले। श्रीकृष्ण बोले सुनो! नारद मुनिने तुमपर बड़ी दयाकी जो गोकुलमें मुक्ति दी उनकी कृपा से तुमने मुझे पाया अब वर माँगो जो तुम्हारे मनमें हो यमलार्जुन बोले दीनानाथ यह नारदमुनिजीकी ही कृपाहै जो आपके चरणपरसे और दर्शनकिए अब हमें किसी वस्तुकी इच्छा नहीं पर इतना ही दीजे जो सदा तुम्हारी भक्ति हमारे हृदयमें रहे यह सुन वर दे हँसकर श्रीकृष्णचन्द्रने तिन्हें बिदाकिया।

अध्याय १२

श्रीशुकदेवमुनि बोले हे राजा जब वे दोनों तरू गिरे तब उनकाशब्द सुन नन्दरानी घबराकर दौड़ी वहां आई जहां कृष्णको ऊखलसेबांध गईथी और उनके पीछे सब गोपी ग्वाल भी आए जब श्रीकृष्णको वहां न पाया तब व्याकुल हो यशोदा मोहन२ पुकारती और कहती चली, कहां गया यहीं बँधा था! भाई किसी ने देखा मेरा कुंवर कन्हाई, इतने में सोंहीं से आ एक बोली ब्रजनारी, कि दोपेड़ गिरे तहां बचे मुरारी, यह सुन सब आगे जाय देखें सो सचही वृक्ष उखड़े पड़े हैं और कृष्ण तिनके बीच ओखली से बँधे सिकुड़े बैठे हैं जातेही नन्दमहरने ऊखलसे खोल कान्ह को रो के गले लगा लिया सब गोपियां डरा जान लगीं चुटकी ताली दे दे हंसाने तब नन्द उपनन्द आपसमें कहने लगेकि ये युगानुयुगके रूख जमे हुए कैसे उखड़ पड़े? यह बड़ा अचम्भा जीमें आता है कुछ भेद इनका समझा नहीं जाता, इतनी सुनके एक लड़के ने पेड़ गिरने का व्यौरा ज्यों का त्यों कहा पर किसीके जीमें न आया एक बोली ये बालक इस भेद को क्या समझे; दूसरेने कहा कदाचित यही हो हरिकी गति कौन जाने ऐसी अनेक अनेक भाँति की बातें कर श्रीकृष्णको ले सब आनन्दसे गोकुल में

आये तब नन्दजी ने बहुतसा दान पुण्य किया कितने एकदिन बीते कृष्ण का जन्मदिन आया तो यशोदा रानी ने कुटुम्बको नौत बुलाया, और मङ्गलाचारकर बर्ष गांठ बांधी जब सब मिल जेवन बैठे तब नन्दराय बोले सुनो भैया अब इस गोकुलमें रहना कैसे बने, दिन दिन होने लगे उपद्रव घने, चलो कहीं ऐसी ठौर जावें जहाँ तृण जलका सुख पावें, उपनन्द बोले वृन्दाबन जाय बसिये तो आनन्द से रहिए, यह वचन सुन नन्दजीने सबको खिलाय पिलाय पानदे बैठाया त्योंही एक ज्योतिषी को बुलाय यात्रा का मुहूर्त पूछा, उसने विचारके कहा इसदिशाकी यात्राको कल का दिन अति उत्तम है बाम योगिनी पीछे दिशाशूल और सन्मुख चन्द्रमा है आप निस्संदेह भोरही प्रस्थान कीजे, यह सुन तिस समय तो गोपी ग्वाल अपने अपने घर गए पर सबेरे ही उठ अपनी अपनी वस्तुभी गाड़ी पर लाद आ इकट्ठे भये कुटुम्ब समेत नन्दजीभी साथ ही लिये और चले२ नन्दजी उधर साँझ समय जा पहुँचे, बृन्दादेवीको मनाय वृंदाबन बसाया वहाँ सब सुख चैनसे रहने लगे जब श्रीकृष्ण पाँच वर्ष के हुए तब माँसे कहने लगे, कि मां मैं बछड़े चरावने जाऊंगा तूं बलदाऊसे कहदे कि मुझे बनमें अकेला न छोड़े, वह बोली पूत बछड़े चरावने वाले बहुत हैं दास तुम्हारे, तुम मत पल ओट हो मेरे नयनों के आगे से प्यारे, कान्ह बोले जो मैं बनमें खेलने जाऊंगा तो खाने को खाऊंगा नहीं तो नहीं यह सुन यशोदाने ग्वालबालों को बुलाय कृष्ण बलराम को सौंप कर कहा कि तुम बछड़े चरावने दूर मत जाइयो और साँझ न होते दोनों को सङ्ग ले घर आइयो वनमें इन्हें अकेले मत छोड़ियो, साथ रहियो तुम इनके रखवाले हो ऐसेकह कलेवा दे राम कृष्ण को उनके सङ्ग करदिया. वे जाय यमुना के तीर बछड़े चराने लगे और ग्वाल बालों में खेलने लगे कि इतने में कंस का पठाया कपट रूप किये वत्सासुर आया उसे आते ही सब बछड़े डरकर जिधर तिधर भागे तब श्रीकृष्णजीने बलदेवजीको सैन से चिताया कि भाई!

यह कोई राक्षस आया ज्योंहीं आगे चरता चरता वह घात करने को निकट पहुँचा त्योंही श्रीकृष्णाने पिछले पाँवपकड़ फिरायं कर ऐसा पटकाकि उसका जी घटसे निकल सटका।

वत्सासुरकामरनासुनके कंसने बकासुरकोभेजा वह वृन्दावन आके अपनी घात लगाय यमुनाकेतीरपर बक सम जा बैठा उसेदेख मारे भयके ग्वालबाल कृष्णसे कहने लगे कि भैया! यह तो कोई राक्षस बगुला बन आयाहै इसके हाथसे कैसे बचेंगे? ये तो इधर कृष्णसे यों कहतेहीथे और उधर वह जींमें यह विचारताथा कि आज इसे बिना मारे न जाऊंगा इतनेमें जो श्रीकृष्ण उसके निकट गए तो उसने इन्हें चोंचमें उठाय मूंदलिया ग्वालबाल व्याकुल हो

चारों ओर देख रो२ पुकार२ लगे कहने हाय२यहाँ तो हलधर भी नहीं है हम यशोदासे क्या कहेंगे,इनकोअतिदुखित देख श्रीकृष्ण ऐसे ताते हुएकि वह मुख में न रखसका जो उसने इन्हें उगलातो उन्होंने उसीकी चोंच पकड़ ओठपाँव तले दबाय चीर डाला और बछड़े घेर सखाओंको साथले हँसते२घरआए।

अध्याय १३

श्रीशुकदेवजी बोले सुनो महाराज! प्रात होतेही एकदिन श्रीकृष्ण बछड़े चरावने बनको चले तिनके साथ सब ग्वालबाल भी अपने२ घरसे

छाक ले२ हो लिये और गोचर भूमिमें जाय छाक धर बछड़े चरनेको छोड़ लगे खरी गेरू तनसे चित्रविचित्र लगाने व बनके फल फूलोंके गहने बनाय बनाय पहन खेलने और पशु पक्षियोंकी बोली आदि से भांति२ के कुतूहल कर नाचने, इतनेमें कंस का पठाया अघासुर नाम राक्षस आया,सो अति बड़ा अजगर हो मुंह पसार बैठा। सब सखाओं समेत श्रीकृष्णभी खेलते२ वहां जा निकले जहां वह घात लगाये मुंह बाये बैठा था, दूरसे उसे देख ग्वालबाल आपसमें लगे कहने कि भाई! यहतो कोई पहाड़ है कि जिसकी कन्दरा इतनी बड़ीहै, ऐसेकहते और बछड़ा चराते उसके पास पहुँचे तबएक लड़का उसका मुख देख बोला भाई! यह अति भयावनी गुफा है, इसके

भीतर न जावेंगे हमें देखतेही भय लगता है फिर तोष नाम सखा बोला चलो इसमें धस चलें कृष्ण साथ रहते हम क्यों डरें जो कोई असुर होगा सो बकासुर की रीतिसे मारा जायगा।

यों सब सखा खड़े बात कहते ही थे कि,उसने एक ऐसी लम्बी श्वाँस खेंचीकि बछड़ा समेतसब ग्वालबाल उड़के उसकेमुखमें जापड़े विषभरी ताती भाफ जो लगी तोलगे व्याकुलहो बछड़े रांभने और सखा पुकारनेकि हेकृष्ण प्यारे वेग सुधलो नहीं तो सब जले मरतेहैं उनकी पुकार सुनतेही आतुर हो श्रीकृष्ण उसके मुखमें आ पड़ गये उसने प्रसन्न हो मुंह मूंद लिया, तब श्रीकृष्णने अपना शरीर इतना बढाया कि उसका पेट फट गया सब

तिस समय ब्रह्मादि देवता अपने२ विमानों में बैठ आकाशसे ग्वालमण्डली का सुख देखते थे इतने में ब्रह्मा आय सब बछड़े चुराय ले गया वहां ग्वाल बालों ने खाते२ चिन्ताकर श्रीकृष्णसे कहा भैया! हम तो निश्चिन्ताई से बैठे खाय रहे हैं न जानिये बछड़े कहां निकल गये होंयगे।

तब ग्वालन सों कहत कन्हाई। तुम सब जेंवत रहियो भाई॥
जनि कोउ उठै करें औसेरे। सबके बछड़े लाऊं घेर॥

ऐसे कह कितनी एक दूर बनमें जाय जब जानाकि बछड़े ब्रह्मा हर ले गया तब श्रीकृष्ण वैसेही बनाय लाये यहां आय देखें तो ग्वालबालों को भी उठाय ले गया वेभी फिर उन्होंने जैसेथे तैसेही बनाये और सांझ हुई जान सबको साथ ले बृन्दाबन आए सब ग्वालबाल अपने२ घर गये पर किसीने यह भेद न जाना कि ये हमारे बालक और बछड़े नहीं बरन और भी दिन दिन माया बढ़ती चली।

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! वही ब्रह्मा ग्वालबाल बछड़ोंको लेजाय पर्वतकी कन्दरामें भर उसके मूंह पर पत्थरकी शिला धर भूल गया, और श्रीकृष्णचन्द्र नित नई२ लीला करतेथे, इसमें एकवर्ष बीत गया, तब ब्रह्मा को सुधिहुई तो मनमें कहनेलगाकि मेरातो एकपलभी न हुआ पर नरका एक वर्ष होगया, इससे अब चल देखा चाहिये कि ब्रजमें ग्वालबालों बछड़ों बिना क्या गति भई; यहविचार उठकर वहाँ आया जहां कन्दरामें सबको मूंदगया था, शिला उठाय देखेतो लड़के और बछड़े घोर निद्रामें सोए पड़े हैं, वहां से चल बृन्दाबनमें आया बालक और बछरू सब ज्यों के त्यों देख अचम्भेमें हो कहने लगा कैसे ग्वालबछड़े यहां आए? कैसे कृष्ण नये उपजाए इतनी कह फिर कन्दराको देखने गया जितनेमें वह वहांसे देखकर आवे तितने बीच यहां श्रीकृष्णने ऐसी माया करीकि जितने ग्वालबाल और बछडे थे सब चतुर्भुज होगए और एक२ के आगे ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र हाथ जोड़े खड़े थे।

देखि बिरंचि चित्रसो भयो। भूलो ज्ञान ध्यान सब गयो॥
जनु पषाण देवी चौमुखी। भई भक्ति पूजा बिन दुखी॥

और डरकर नयन मूंद लगा थर थर काँपने जब अन्तर्यामी श्रीकृष्ण-चन्द्रने जानाकि ब्रह्मा अति व्याकुल है, तब सबका अंश हरलिया और आप अकेले रहगए ऐसे कि जैसे भिन्न बादल एक हो जाँय।

अध्याय १५

श्रीशुकदेवजी बोले हेराजा! जब श्रीकृष्णने अपनी माया उठाली तब ब्रह्माको अपने शरीरका ज्ञान हुआ तो ध्यानकर भगवानके पास आ गिड़गिड़ाया पाँवों पड़ विनती कर हाथ बांध खड़ा हो कहने लगा कि हेनाथ! तुमने बड़ी कृपाकरी जो मेरा , दूर किया इसीसे अन्धा हो रहाथा ऐसी

बुद्धि किसकी है जो बिन दया तुम्हारी तुम्हारे चरित्रों को जाने तुम्हारी मायामें सब मोहे हैं ऐसाकौन हैकि जो तुम्हें मोहे तुम सबके कर्ताहो तुम्हारे रोम रोम में मुझसे ब्रह्मा अनेक पड़े हैं मैं किस गिनती में हूँ दीनदयाल! अब दयाकर क्षमा कीजे मेरा दोष चित्त में न लीजे।

इतना सुन श्रीकृष्णचन्द्र मुसकराये तब ब्रह्माने सब ग्वालबाल और बछड़े सोते ला दिये और लज्जितहो स्तुति कर अपने स्थान को गया जैसी मण्डली आगे थी तैसे ही बन गई वर्ष दिन बीता सो किसीने न जाना जो ग्वालबालोंकी नींद गई तो श्रीकृष्ण बछेरू घेर लाये तब तिनसे लड़के बोले भैया तू बछड़े बेग ले आया हम भोजन करने भी न पाए।

सुनत बचन हंस कहत बिहारी । मोको चिंता भई तिहारी ॥
निकटही इक ठौरे पाये । अब घर चलो भोर के आये ॥

ऐसे आपस में बतराय बछरुओं को ले सब हंसते२ अपने२ घर आये।

अध्याय १६

श्रीशुकदेवजी बोले हे महाराज! जब श्रीकृष्ण आठ वर्ष के हुए तब एकदिन उन्होंने यशोदासे कहा कि माँ गायें चरावने जाऊँगा तू बाबा से समझाय कर कह, मुझे ग्वालोंके साथ पठायदें सुनतेही यशोदाने नन्दजी से कहा उन्होंने शुभ मुहूर्त ठहराय ग्वालबालोंको बुलाय कातिक सुदी आठ को रामकृष्णसे खरक पुजवाय विनती कर ग्वालोंसे कहाकि भाइयो आजसे गोचरावन अपने साथ राम-कृष्ण कोभी लेजाया करो पर इनके पास ही

रहियो बनमें अकेले न छोड़ियो ऐसे कह छाकदे कृष्ण बलरामको दहीका तिलककर सबके संग बिदा किया वे मगनहो ग्वाल बालों समेत गायलिए बनमें पहुँचे वहां बनकी छबि देख श्रीकृष्ण बलरामजी से कहनेलगे दाऊ! यह तो अति मन भावनी सुहावनी ठौर है देखो कैसे वृक्ष झुक रहे हैं और भांति भांति के पशु पक्षी कलोल करते हैं ऐसे कह एक ऊंचे टीले पर जा चढ़े और लगे दुपट्टा फिराय२ कारी, पीरी, धौरी, धूमरी, भूरी, नीली कह कह पुकारने, सुनते ही सब गायें राँभती हाँफती दौड़ आईं तिस समय ऐसी शोभा हो रही थी कि, चहुँओर से वर्ण वर्ण की

घटा घिर आईं होंय फिर श्री कृष्ण चन्द्र गो चराने को हाँक भाई के साथ छाक खाय कदम्ब की छाँ में एक सखा की जाँघ पर शिर धर सोगये कितनी एक बेर में जो जागे तो बलराम जी से कहा—

दाऊ सुनो खेल यह करें। न्यारो कटक बांधके लरें॥

इतना कह आधी आधी गायें और ग्वाल बाँट लिये फिर बनके फल फूल तोड़ झोलियों में भर भर लगे तुरही, भेरी, भोंपू ढफ ढोल दमामे से, मुख ही से बजाय२ लड़ने और मार२ पुकारने, ऐसे कितनी एक बेर तकलड़े फिर अपनी-अपनी टोली निरालीले ,गाय चरावने लगे इस बीच बलदेव जी से किसी सखा ने कहा महाराज ! यहाँ से थोड़ी ही दूर एक तालवन है तिस में अमृत समान फल लगे हैं वहाँ गधे के रूप में एक राक्षस रखवाली करताहै इतनी बात सुनते ही बलराम जी ग्वालबालों के समेत उस बन में गयेऔरलगे ईंट पत्थर ढेला लाठियां मारमार फल झाड़ने तिसका शब्द सुनकर धेनुक नाम खर रेंकता आया और उसने आते ही फिर कर बलदेव जी की छातीमें दुलत्ती मारी तब उन्होंने उसे उठाय कर दे पटका फिर वह लोट पोट के उठा और धरती खूंद खूंद कान दबाय हट हट दुलत्तियाँ झाड़ने लगाइस तरह बड़ी देर तक लड़ता रहा निदान बलराम जीने उसकी दोनों पिछली टांगें पकड़ फिराय कर एक ऊंचे पेड़ परफेंका कि गिरते ही मर गया, और उसके साथ वह रूख भी टूट पड़ा दोनों के गिरने से अति भारी शब्द हुआ और सारे बन के वृक्ष हिल उठे।

देख दूर सों कहत मुरारी। हाल्यौ रूख शब्द भयो भारी॥
तबहिं सखा हलधरके आए। चलहु कृष्ण तुम बेगि बुलाए॥

एक असुर माराहै सो पड़ा है इतनी बात के सुनते ही कृष्ण भी बल-राम के पास जा पहुंचे तब धेनुक के साथी जितने राक्षस थे सो सब चढ़ आये तिन्हें श्रीकृष्णचन्द्र जी ने सहजही मार गिराये, तब तो सब ग्वाल-बालों ने प्रसन्न हो निधड़क फल तोड़ मन तोड़ मन मानती झोलियाँ भरलीं और गायें घेर घेर श्रीकृष्णजी ने बलदेवजी से कहा महाराज ! बड़ी देर से आये हैं अब घर को चलिये इतना बचन सुनतेही दोनों भाई गायें लिये

ग्वालबालों समेत हँसते खेलते साँझको घर आए और फल लाएथे सोसारे वृन्दाबनमें बटवाय सबकी बिदा दे आप सोये फिर भोर के तड़के उठतेही श्रीकृष्ण ग्वालबालों को बुलाय कलेऊ कर गायें ले बनको गए और गौ चराते कालीदह जा पहुँचे वहाँ ग्वालों ने गायोंको पानी पिलाया और आप भी पिया जो जल पी वहां से उठे तो गायों समेत मारे विषके सब लोट गए तब श्रीकृष्ण चन्द्र ने अमृतकी दृष्टिसे देख सबों को जिलाया।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे धेनुकासुर बधो नाम षोड़शोऽध्यायः॥ १६॥

अध्याय १७

अथ नागलीला प्रारम्भ।

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! ऐसी सबकी रक्षा कर श्रीकृष्ण ग्वाल बालों के साथ गेंद खेलने लगे, और जहां कालियाथा तहां चार कोस तक यमुना का जल उसके विषसे ऐसा खौलताथा कि कोई पशु पक्षी जहां न जा सकता, जो भूल कर जाता सो लपट से झुलस दह में गिर पड़ता और तीरमें कोई रूख भी नहीं उपजता, एक अविनाशी कदम्ब तटपरथा, सोई था, राजाने पूछा महाराज वह कदम्ब कैसे बचा? मुनि बोले एक समय अमृत चोंच में लिए गरुड़ उस पेड़ पर आ बैठा था, तिसके मुंहसे एक बूंद गिरा था इसलिए वह रूख बचा।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! श्रीकृष्णचन्द्रजी कालिया का मारना जीमें ठान गेंद खेलते२ कदम्ब पर जा चढ़े और नीचे से सखा ने गेंद चलायी तो यमुना में गिरी उसके साथ श्रीकृष्णभी कूदे इतनेमें कूदने का शब्द कानसे सुनकर वह कालिया विष उगलने लगा और अग्निसम फुंकार मार२ कहने लगाकि यह ऐसा कौन है जो अबलग दह में जीता है कहीं अक्षय वृक्ष तो मेरा तेज न सहिके टूट पड़ा कि कोइ पशु पक्षी आया है जो अब तक जल में आहट होता है यों कह वह एक सौ दश फणों से विष उगलने लगा और श्रीकृष्ण पैरते फिरते थे तिस समय सखा रो२ हाथ पसार२ पुकारते थे, गायें मुंह बाए चारों ओर रांभती हूँकती फिरती थीं ग्वाल बाल न्यारेही कहते थे, श्याम बेग निकल आइए नहीं तुम बिन घर जाय, हम क्या उत्तर देंगे? ये तो यहां दुःखित हो यों कह रहे थे, इतने में किसीने वृन्दाबन में जा सुनाया कि, श्रीकृष्ण कालीदहमें कूदपड़े यहसुन रोहिणी यशोदा और नन्द गोपी गोप समेत रोते पीटते उठधाये और सबके सब गिरते पड़ते कालीदहआये तहां श्रीकृष्णको न देख व्याकुल हो नन्दरानी दौड़ गिरने चली पानी में, तब गोपियों ने बीचही जा पकड़ा और ग्वाल बाल नन्दजी को थाम ऐसा कह रहे थें।

आँड़ महाबन या बन आये। ताँहूँ दैत्यन अधिक सताये॥
बहुत कुशल असुरन तें करी। अब क्यों दह ते निकसत हरी॥

कि इतने में पीछे से बलदेवजी वहीं आये, और सब ब्रजबासियों को समझा कर बोले अभी आवेंगे अबिनाशी, तुम काहेको उदास होते हो।

आज साथ आयो मैं नाहीं। मो बिन हरि पैठे दह माहीं॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी राजा परीक्षित से कहने लगे कि महाराज। इधर तो बलरामजी सबको यों आशा भरोसा देते थे और उधर श्रीकृष्णजी तैरकर उसके पास गये तो वह आ इनके सारे शरीर में लिपट गया तब श्रीकृष्ण ऐसे मोटे हुए कि उसे छोड़ते ही बन आया फिर ज्यों वह फुंकार मार मार इन पर फण चलाता था त्यों२ ये अपनेको

वचाते थे निदान ब्रज बासियों को अति दुःखित जान, श्रीकृष्ण एकाएकी उचक उसके शिर पर जा चढ़े।

दोहा—तीन लोकका बोझ ले, भारी भये मुरारि। फण२ पर नाचत फिरें, बाजे पग पटतार॥

तबतो मारे बोझ के काली मरनेलगा और फण पटक२उसने जीभें निकालदीं तिनसे लोहू की धार बह चली जब बिष और बल का गर्व गया तबउसने मन में जाना कि आदि पुरुष ने अवतार लिया; नहीं इतनी किसमें सामर्थ्य है जो मेरे बिष से बचे, यह समझ जीव की आशा तज शिथिल होरहा, तब नाग पत्नी ने आय हाथ जोड़शिरनवाय बिनतीकर श्रीकृष्णचन्द्र से कहा महाराज! आपने भला किया जो इस दुखदाई अति अभिमानी का गर्व दूर किया अब इसके भाग्य जागे जो तुम्हारा दर्शन पाया, जिन चरणों को ब्रह्मादिक सब देवता जपतपकर ध्यावते हैं सोइ पद काली के शीश पर बिराजते हैं, इतना कह फिर बोली महाराज! मुझपर दया कर इसे छोड़ दीजे नहीं तो इसके साथ मुझे बध कीजे; क्योंकि स्वामी बिन स्त्री का मरण ही भला है और जो बिचारिये तो इसका भी कुछ दोष नहीं यह जाति स्वभाव है दूध पिलाये बिष बढ़े।

इतनी बात नाग पत्नी से सुन श्रीकृष्णचन्द्र उस पर से उतर पड़े तब प्रणाम कर हाथजोड़ काली बोला नाथ! मेरा अपराध क्षमा कीजे मैंने अनजान आप पर फण चलाये, हम अधम जाति सर्प हमें इतना ज्ञान कहां जो तुम्हें पहिचाने? श्रीकृष्ण बोले भला जो हुआ सो हुआ पर अब तुम यहां न रहो कुटम्ब समेत रमणकद्वीप में जा बसो यहसुन कालीने डरते कांपतेकहा कृपानाथ! वहाँ जाऊं तो गरुड़ मुझे खा जायगा, उसके भय से मैं यहां भाग आया हूँ। श्रीकृष्ण बोले अब तू निर्भय चला जा हमारे पद के चिन्ह तेरे सिरपर देख तुमसे कोई न बोलेगा; ऐसे कह श्री कृष्णचन्द्र जी ने तिसी समय गरुड़ को बुलाय काली के मनका भय मिटाय दिया, तब काली ने धूप दीप, नैवेद्य समेत बिधि से पूजाकर बहुत सी भेंट श्रीकृष्ण के आगे धर हाथ जोड़ बिनती करबिदा हो कहा।

चौपाई—चार घरी नाचे मो माथ। यह मन प्रीति राखियो नाथ॥

यों कह दण्डवत कर काली तो कुटुम्ब समेत रमणकद्वीप को गया और श्रीकृष्णचन्द्र जलसे बाहर आए।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कालीमर्दनो नाम सप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

अध्याय १८

इतनी कथा सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा महाराज! रमणकद्वीप तो भली ठौर थी काली वहां से क्यों आया और किसलिए यमुना में रहा यह मुझे समझा कर कहो, जो मेरे मन का सन्देह जाय श्रीशुकदेवजी बोले, राजा! रमणकद्वीपमें हरिका बाहन गरुड़ रहताहै सो अति बलवान है तिसमे वहांके बड़े बड़े सर्पोंने हारमान उसे एक साँप नित देना कहा नित एक रूख पर धर आवें, वह आवे और खा जाय, एक दिन कद्रू का पुत्र काली अपने विष का घमण्ड कर गरुड़ का भक्ष्य खाने गया इतने में वहां गरुड़ आया और दोनोंमें अति युद्ध हुआ, निदान हारमान काली अपने मनमें कहने लगाकि अब इसके हाथसे कैसे बचूं और कहाँ जाऊँ? इतना कह सोचाकि वृन्दावनमें यमुनाकेतीर जा रहूँ तो बचूं क्योंकि यह वहां जा नहीं सकता ऐसे विचार काली वहां गया, फिर राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवमुनिसे पूछा की महाराज! वह गरुड़ वहां क्यों नहीं जा सकता था, सो भेद कहो, श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! किसी समय यहाँ यमुना के तटपर सौरभऋषि बैठे तप करते थे, वहां गरुड़ ने जाय एक मछली मार खाई तब ऋषिने क्रोधकर उसे शाप दियाकि तू इस ठौर फिर आवेगा तो जीता न रहेगा,इस कारण वह वहां न जा सकता था,और जब से काली वहां गया तभीसे उस थल का नाम कालीदह हो गया।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीबोले हेराजा! जब श्रीकृष्णचन्द्र निकले तब नन्द यशोदाने आनन्दकर बहुतसादानपुण्यकिया पुत्रकामुखदेख नयनों को सुखदिया,और सब ब्रजवासियोंके भी जीमें जी आया, इस बीच साँझ हुई तो आपसमें कहने लगेकि, अब दिनभरके हारे थके भूखे प्यासे घर कहाँ जांयगे रातकीरात यहींकाटें भोरहुये वृन्दावन चलेंगे यहकह सब सोय रहे।

आधी रात बीत जब गई। मारी कारी आँधी तब भई ॥
दावा अग्नि लगी चहुं ओर। अतिझरि बरै वृक्ष बन ठौर ॥

आग लगते ही सब चौंक पड़े और घबराय कर चारों ओर देख हाथ पसार२ लगे पुकारने कि कृष्ण ! हे कृष्ण ! इस आगसे बेग बचाओ,

नहीं तो छण भरमें हम सबको जलाय भस्म करती है जब नन्द यशोदा समेत सब ब्रजवासियों ने ऐसा पुकारा श्रीकृष्णजी ने उठतेही आग पल में पी लई सबके मनकी चिंता दूरकी, भोर होते ही सब वृन्दाबन आये,घर घर आनन्द मङ्गल भए बधाये।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे दावाग्निमोचनो नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अध्याय ५१

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! अबमैं ऋतुवर्णन करता हूँ कि जैसे श्रीकृष्णचन्द्रने तिनमें लीला करी सो चितदेसुनो प्रथमग्रीष्मऋतु आई तिसने आतेही सब संसारका सुख लेलिया, और धरती आकाश को तपाय अग्निसम किया, पर श्रीकृष्णके प्रतापसे वृन्दाबन में सदा वसन्त ही रहे, जहाँ घने घने कुञ्जों पर बेलें लहलहा रहीं वर्ण२ के फूल फूलेहुए तिन पर भौरों के झुण्डके झुण्ड गुञ्जे आमोंकी डलियोंपै कोयल कूक रही ठण्डी२ छायाओंमें मोर नाच रहे,सुगन्ध लिये मीठी२ पवन बह रही,और बनकेएक ओर यमुना न्यारी ही शोभा दे रही थी तहाँ कृष्ण बलराम गायें छोड़ सब

सखा समेत आपसमें अनूठे खेल खेल रहे थे, इतने में कंस का पठाया ग्वाल का रूप बनाया प्रलम्ब नाम राक्षस आया उसे देखतेही श्रीकृष्ण चन्द्र ने बलदेवजीको सैन मे कहा।

अपनो सखा नहीं बलबीर। कपट रूप यह असुर शरीर॥
याके बध को करो उपाय। ग्वालरूप मारो नहिं जाय॥
जब यह रूप धारिहै अपनो। तब तुम याहि ततक्षण हनो॥

इतनी बात बलदेवजी को चिताय श्रीकृष्णजीने प्रलम्ब को हँस कर पास बुलाय हाथ पकड़ के कहा —

सबते नीको वेष तिहारो। भलो कपट बन मित्र हमारो॥

यों कह उसे साथले आधे ग्वाल बाल बाँट लिए और आधे बलरामजी को देदिए लड़कोंको बैठाय लगे फल फूलोंकेनाम पूछने और बताने,इतने में बताते२ श्रीकृष्ण हारे बलदेव जीते तब श्रीकृष्णजी की ओरके ग्वाल

बलदेवजी के साथियों को काँधे पर चढ़ाय२ लेचले तहाँ प्रलम्ब बलरामजी को सबसे आगे ले भागा और बनमें जाय उसने अपनी देह बढ़ाई, तिस समय उस काले काले पहाड़ पर बलदेवजी ऐसे शोभाय मानथे जैसे श्याम घटा पै चाँद और कुंडल की दमक बिजलीसी चमकतीथी, पसीना मेह सा बरसता था, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! ज्यों ही अकेले पाय वह बलरामजी को मारनेको हुआ त्योंही उन्होंने मारे घूंसों के उसे मार गिराया।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे प्रलम्ब बधो नाम एकोनविंशोऽध्यायः॥ १९॥

अध्याय २०

दावाग्निमोचन

श्रीशुकदेवजी बोले हे राजा! प्रलम्ब को मार के चले बलराम, तभी सोंही सों सखाओं समेत आन मिले घनश्याम, और जो ग्वालबाल बनमें गाय चरातेथे वे भी असुर मरा सुन गाय छोड़ उधर देखने को चले तौलों इधर गायें चरती थांभ कास से निकल मुंज बनमें बढ़ गईं वहांसे आय दोनों भाई यहां देखें तो एकभी गाय नहीं।

बिछुरी गैया पिछरे ग्वाल। भूले फिरें मूंज बन ताल॥
रूखन चढ़े परस्पर टेरैं। ले ले नाम पिछौरों फेरैं॥

इतने में किसी ने आय हाथ जोड़२ श्रीकृष्णसे कहाकि महाराज! गाय सब मुंज बनमें पैठ गईं तिनके पीछे ग्वालबाल न्यारे ढूंढ़ते भटकते फिरते हैं, इतनी बातके सुनते ही श्रीकृष्णने कदम्ब पर चढ़ ऊंचे स्वर से जो बंशी बजाई तो सुन, ग्वालबाल सब गायें मुंज बन को फाड़कर ऐसे आन मिलीं जैसे सावन भादों की नदी तुङ्ग तरङ्ग को चीर समुद्रमें जा मिले इस बीच देखते क्या हैं, बन चारों ओर से दहड़ दहड़ जलता चला आता है, यह देख ग्वालबाल और सखा अति घबराय भय खाय कर पुकारे हे कृष्ण! इस आग से बेग बचाओ, नहीं तो अभी क्षण एकमें सब जले मरते हैं कृष्ण बोले तुम अपनी आँखें मूंदो श्रीकृष्ण जी ने पल

भर में आग बुझाय एक और माया करी कि गायों समेत सब ग्वालबालों को भाण्डीर बनमें ले आए और कहाकि अब आँख खोलदो।

ग्वाल खोल दृग कहत निहारी। कहाँ गई वह आग मुरारी॥
कब फिर आये बन भण्डीर। होत अचम्भा यह बल वीर॥

ऐसे कह गायें ले सब मिल कृष्ण बलराम के साथ वृन्दाबनमें आए और सबोंने अपने२घर जाय कहा कि, आज बनमें बलरामजीने प्रलम्बनाम दैत्य को मारा,और मुञ्जबन में आगलगीथी सो भी हरिके प्रतापसे बुझगई।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने कहा हे राजा! ग्वालबालों के मुख से यह बात सुन ब्रजवासी उसे देखने गये, पर उन्होंने श्रीकृष्ण चरित्र का भेद कुछभी न पाया।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे दावाग्नि मोचनो नाम विंशोऽध्यायः॥ २०॥

अध्याय २१

* अथ वर्षा ऋतु वर्णन लीला प्रारम्भः *

शुकदेव मुनि बोले कि महाराज! ग्रीष्म की अति अनीति देख पावस प्रचण्ड नृप मेघ पृथ्वीके पशु पक्षी जीव जन्तुकी दया विचार चारों ओर से दल बादल साथ ले लड़ने को चढ़ आया तिस समय घन जो गर्जता था

सोई तो धोंसा बजाता था, और वर्ण वर्ण की घटा घिर आई थी सोई शूरवीर रोवते थे तिनके बीच बीच बिजली की दमक शस्त्र सी चमकतीथी बगले की पांतें ठौर ठौर श्वेत ध्वजासी फहराय रही थीं, दादुर मोर बन्दी की भाँति यश बखानतेथे, बड़ीर बूंदोंकी झड़ी बाणोंकीसी झड़ी लगी थी इस धूम धामसे पावसको आते देख ग्रीष्म खेत छोड़ अपना जीवले भागा तब मेघ पियाने बरष पृथ्वीको सुखदिया, उसनेजो आठमहीने पतिकेवियोग में योग कियाथा तिसका मोलभर लिया,कुछ गिरिशीतल हुए,और गर्भरहा उसमेंसे अठारह भार पुत्र उपजे, सोभी फल फूल भेंट लेर पिता को प्रणाम करने लगे उसकाल वृन्दाबनकी भूमि ऐसी सुहावनी लगतीथी कि, जैसे शृङ्गार किए कामिनी और जहाँ तहाँ नदी नाले सरोवर भरे हुए तिनपर हंस सारस मोर शोभा देरहे ऊँचे रूखों की डालियां झूम रहीं उनमें पिक, चातक, कपोत, कीर बैठे कोलाहल कर रहेथे ठांवर सूहे कुसुम्भे जोड़े पहिरे गोपी ग्वाल झूलों पै झूलर ऊँचेर सुरोंसे मलार गातेथे उनके निकट जाय जाय श्रीकृष्ण बलरामजी बाललीला करर अधिक सुख दिखाते थे इसी तरह अनान्दसे वर्षाऋतु बीती श्रीकृष्ण ग्वालबालों से कहने लगे कि भया! अबतो सुखदाई शरद ऋतु आई।

सबसे सुख भारी अब जानौं। स्वाद सुगन्ध रूप पहिचानौं॥
निशि नक्षत्र उज्वल आकाश। मानहु निर्गुण ब्रह्म प्रकाश॥
चार मास आ बिरमे गेह। भये शरद तिन तजे सनेह॥
अपने अपने काज सिधाये। भूप चढ़े लखि देख पराये॥

अध्याय २२

श्रीशुकदेवजी बोले कि हेराजा! इतनी बात कह श्रीकृष्णचन्द्र फिर ग्वालबाल साथ ले लीला करने लगे और जब लग कृष्ण बनमें धेनु चरावें तब लग सब गोपी घरमें बैठी हरि का यश गावें, एक दिन श्रीकृष्णने बनमें वेणु बजाई तो वंशीकी ध्वनिको सुन सारी ब्रजयुवतियाँ हड़बड़ाय उठ धाईं और एक ठौर मिलकर बाटमें आ बैठीं, तहाँ आपसमें कहने लगीं

कि हमारे लोचन सफल तब होंगे जब श्रीकृष्ण के दर्शन पावेंगी, तभीतो कान्ह गौओं के साथ बनमें नाचते गाते फिरते हैं, साँझ समय इधर आवेंगे तब दर्शन मिलेंगे यों सुन एक गोपी बोली—

सुनो सखी वह वेणु बजाई। बाँस वंश देखौं अधिकाई॥

इसमें इतना क्या गुण है जो दिनभर श्रीकृष्णके मुंह लगी रहती है और अधरामृत पी आनन्द की वर्षा वर्षाती है, क्या हमसेभी यह है प्यारी जो निशिदिन लिये रहते हैं बिहारी।

मेरे आगे को यह गढ़ी। अब भई सौत बदन पर चढ़ी॥

जब श्रीकृष्ण इसे पीताम्बर से पोंछ बजातेहैं तब सुर किन्नर मुनि और गन्धर्व अपनी२स्त्रियोंको साथ ले विमानों पर बैठ२हौंसकर सुननेको आतेहैं

और सुनकर मोहित हो जहां के तहाँ चित्रसे रहजाते हैं ऐसा इसने क्या तप कियाहै जो सब इसके आधीन होते हैं इतनीबात सुनकर गोपीने उत्तर दिया कि,पहले तो इसने बाँसके वंशमें उपज हरिका स्मरण किया,पीछे घाम शीत जल ऊपर लिया,निदान टूक२हो देह जलाय धुआँ पिया।

इसने तप कीन्हों है कैसा। सिद्ध हुई पाया फल ऐसा॥

यह सुन कोई ब्रज नारी बोलीकि हमको वेणु क्यों न रची ब्रजनाथ जो निशिदिन रहती हरी के साथ, इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी राजा

परीक्षित से कहने लगे महाराज ! जब तक श्रीकृष्ण धेनु चराय बनसे न आवें तब तक नित्य गोपी हरि के गुण गावें ।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोपी वेणु गीत नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अध्याय २३

* अथ चीरहरण लीला प्रारम्भः *

श्रीशुकदेवजी बोले शरद ऋतु के जातेही हेमन्त ऋतु आई और जाड़ा पाला पड़ने लगा, तिस काल ब्रजबाला आपस में कहने लगीं सुनो सहेली अगहन के नहान में जन्म२के पातक जाते हैं और मनकी आशा पूजती है यों हमने प्राचीन लोगों के मुख से सुना है यह बात सुन सबके मनमें आई कि अगहन नहाइये तो निस्सन्देह श्रीकृष्ण वर पाइये ऐसा विचार होतेही भोर उठ वस्त्र आभूषण पहन सब ब्रजबाला मिल यमुना नहाने आईं स्नानकर सूर्यको अर्घ्य दे जल से बाहर आय माटी की गौरी बनाय चन्दन अक्षत फल फूल चढ़ाय धूप दीप नैवेद्य आगे धर पूजाकर हाथजोड़ शिर नवाय गौरी को मनाय के बोलीं हे देवि ! हम तुमसे बराबर यही वर माँगती हैं कि कृष्ण हमारे पति होंय, इस विधिसे गोपी नित नहावें दिनभर ब्रत कर साँझको दही भात खा भमिपर सोवें ।

इसलिये कि हमारे ब्रतका फल शीघ्र मिले एकदिन जब ब्रजबाला

मिल स्नान को औघट घाट गईं और वहां जाय चीर उतार तीरपर धर नग्नहो नीरमेंपैठ लगीं हरिके गुण गाय२जलक्रीड़ा करने उसकाल श्रीकृष्ण भी वंशी बटकी छांहमें बैठे धेनु चरावतेथे इनके गानेकाशब्द सुन वेचुपचाप चले आये और लगे छिपकर देखने। निदान देखते२ जो कुछ इनके जी में आई तो सब वस्त्र चुराय कदम्ब पर जा चढ़े और गठरी बांध आगे धरली इतनेमें ही गोपिका जो देखें तो तीरपर चीरनहीं तब घबराय कर चारोंओर उठ२लगीं देखने और आपसमें कहने कि अभी तो यहां एक चिड़िया भी नहीं आई वसन कौन हर ले गया भाई? इस बीच एक गोपी ने देखा कि शिरपर मुकुट, हाथमें लकुट केशर तिलक दिये,बनमाला हिये,पीताम्बर पहरे कपड़ोंकी गठरी बांधे मौन साधे, श्रीकृष्ण कदम्ब पर चढ़े छिपे हुए बैठे हैं वह देखतेही पुकारी सखी! वह देखो हमारे चित्तचोर कदम्ब पर पटलिए बिराजतेहैं यह वचन सुन और सब युवतियां कृष्णको देख लजाय पानीमें पैठ हाथ जोड़ शिर नवाय विनती कर हा हा खाय बोलीं—

दीनदयाल हरण दुख प्यारे,दीजैमोहन चीरहमारे,ऐसेसुनके कहैं कन्हाई,यों नहिं दूंगा नन्ददुहाई॥
एक एक चल बाहर आयो। तो तुम अपने कपड़े पाओ॥

ब्रजबाला रिसायके बोलीं यह तुम भली सीख सीखे हो जो हमसे कहते हो नङ्गी बाहर आओ, अभी अपने पिता बन्धुसे जाय कहें तो वेतुम्हें चोर२ कर आय पकड़ें और नन्द यशोदाको जो सुनावें तो वे भी सीख भलीभांति से सिखावें हम करती हैं किसीकी कान, तुमने मेटी सब पहिचान।

इतनी बातके सुनतेही क्रोधकर श्रीकृष्णजीने कहा कि अब चीर तभी पाओगी जब तिनको बुला लाओगी, नहीं तो नहीं, यह सुन डर कर गोपी बोलीं दीनदयाल हमारे सुखके लिवैया पतिके रखैया तो आपहीहैं हम किसे लावेंगी तुम्हारे हेतु नेमकर मार्गशीर्ष मास नहाती हैं, श्रीकृष्ण बोले जो तुम मन लगाय मेरे लिये अगहन नहाती हो तो लाज और कपट तज आय अपने चीर लो जब श्रीकृष्णचन्द्रने ऐसे कहा तब सब गोपी आपस में विचार करने लगीं कि चलो सखी जो मोहन कहते हैं सोई मानें क्योंकि ये हमारे

तनमन की सब जानते हैं, इनसे लाज क्या ? यों आपस में ठान, कृष्ण की बात मान हाथसे कछु देह दुराय सबयुवती नीरसे निकल शिर नहुराय जब सन्मुख तीरपर जाके खड़ीहुईं तब श्रीकृष्ण हँस के बोले अब तुम हाथ जोड़ आगे आओ तो मैं वस्त्र दूं, गोपी बोली—

काहे कपटकरतनन्दलाला,हम सूधी भोरी ब्रजबाला। परी ठगौरी सुधिबुधिगई,ऐसीतुम हरिलीला ठई मन सम्भारि के करिहैं लाज। अब तुम कछू करो ब्रजराज॥

इतनी बात कहगोपियोंने हाथजोड़े तो श्रीकृष्णचन्द्र वस्त्रदे उनकेपास आय बोलेकि तुम अपने मनमें कछु इस बातका गुस्सा मत मानो यह मैंने तुम्हें सीख दी है क्योंकि जलमें वरुण देवता का वास है इससे जो कोई नग्न होय जलमें नहाता है उसका सब धर्म बह जाता है, तुम्हारे मनकी लगन देख मगन हो मैंने यह भेद तुमसे कहा अब अपने२ घर जाओ फिर कार्तिक महीने में आय मेरे साथ रास कीजियो।

इतना वचन सुन प्रसन्न हो सन्तोष कर गोपियां अपने घरोंको गईं और श्रीकृष्ण बंशीबटमें आय गोप ग्वालबाल सखाओंको सङ्गले आगेचले तिससमय चारोंओर सघनबन देख बृक्षोंकी बड़ाई करनेलगे कि देखो ये संसारमें आ अपनेपर कितने दुःखसह लोगोंको सुखदेतेहैं जगतमें ऐसाही पर-काजियों का आना सफलहै यों कह आगेबढ़ यमुनाके निकट जाय पहुँचे।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेम सागरे चीरहरणो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः॥ २३॥

अध्याय २४

श्रीशुकदेवजी बोले कि जब श्रीकृष्ण यमुना के पास पहुँचे रूख तले लाठी टेक खड़े हुये तब सब ग्वाल और सखाओंने आय कर जोड़ कहाकि महाराज! हमें इस समय बड़ी भूख लगी है जो कुछ छाक लाये थे सो खाई पर भूख न गई,कृष्ण बोले देखो वह जो धुआँ दिखाई देताहै तहां मथुरिये कंसके डरसे छिपके यज्ञ करते हैं उनके पास जा हमारा नाम ले दण्डवत कर हाथ बांध खड़ेहो दूरसे कहो भोजन दो, ऐसे दीनहो मांगियो जैसे भिखारी

अधीन हो मांगता है, यह बात सुन ग्वाल चले२ वहां गये जहां माथुर बैठे यज्ञ करते थे जातेही उन्होंने प्रणामकर निपट अधीनता से करजोरके कहा महाराज ! आपको दण्डवतकर हमारे द्वारा श्रीकृष्णचन्द्रजीने यह कहलाया है कि हमको अति भूख लगी है, कुछ कृपाकर भोजन भेज दीजिये इतनी बातें ग्वालोंके मुखसे सुन मथुरिये क्रोध कर बोले तुम बड़े मूर्खहो जो हमने अभी यहबातकहतेहो,बिनहोम हो चुके किसीको कुछनदेंगे सुनो,जब यज्ञकर लेंगे तब जोकुछ बचेगा देंगे फिर ग्वालोंने गिड़गिड़ायके बहुतेरा कहा कि महाराज घरआये भूखोंको भोजन करवानेसे पुण्य होताहै पर वे इनके कहने

को कुछ ध्यानमें न लाये वरन इनकी ओर मुंह फेर आपसमें कहने लगे—

बड़े मूढ़ पशुपालक नीच । माँगत भात होम के बीच ॥

तबतो ये वहाँसे निराशहो पछताय श्रीकृष्णके पास आय बोले महाराज भीख माँग मान महत गमाया तो भी खानेको कुछ हाथ न आया,अब क्या करें श्रीकृष्णजीने कहा कि अब तुम उनकी स्त्रियोंसे जामाँगो,वे बड़ी दया वन्त धर्मात्मा हैं उनकी प्रीति भक्ति देखियो वे तुम्हें देखतेही आदर मानसे भोजन देंगीं यों सुन वे फिर वहां गये जहां वे बैठो रसोई करती थीं,जातेही उनसे कहाकि, बनमें श्रीकृष्णको धेनु चराते क्षुधा भई है,सो हमें तुम्हारे

पास पठाया है,कुछ खानेको होय तो बता दो, इतना वचन ग्वालोंके मुखसे सुनतेही वे सब प्रसन्न हो कञ्चन थालोंमें षटरस भोजन भर ले ले उठ धाईं और किसीके रुके न रुकीं एक मथुरनी के पतिने तो जाने न दिया तो वह ध्यानकर देह छोड़ सबसे पहिले ऐसे जा मिलीकि जैसे जल जलमें जा मिले और पीछे से सब चली चली वहाँ आईं जहां श्रीकृष्णचन्द्र ग्वालबालों समेत वृक्षकी छाँहमें सखाके कांधे पर हाथ दिये त्रिभङ्गी छबि किये कमलका फूल करमें लिए खड़ेथे, आतेही थाल आगे धर दण्डवत कर हरिमुख देख देख आपस में कहने लगीं कि सखी! येई हैं नन्दकिशोर,जिनका नाम सुन२ध्यान धरतीथीं, अब चन्द्रमुख देख लोचन सफल कीजे और जीवनका फल लीजे ऐसे बतराय हाथ जोड़ विनती कर श्रीकृष्णसे कहने लगीं, कि कृपानाथ! आपकी कृपा बिन तुम्हारा दर्शन कब किसी को होता है? आज धन्य भाग्य हमारा जो दर्शन पाया और जन्म जन्म का पाप गँवाया।

मूरखविप्रकृपणअभिमानी,श्रीमदमोहलोभमति सानी। ईश्वरकोमानुषकरमानैं,मायाअन्ध कहाँपहिचानैं
जप तप यज्ञ जासु हित कीजै। ताको कहा न भोजन दीजै॥

वही धन्यहै धन,जन,लाज जो आवे तुम्हरे काज और सोईहैतप,ज्ञान जिसमें आवे तुम्हारा ध्यान,इतनीबात सुन श्रीकृष्णचन्द्र उनकीकुशलपूछ कहनेलगेकि

माता जनि मोहि करौ प्रणाम। मैं हूँ नन्द महर को श्याम॥

जो ब्राह्मणकी स्त्रीसे पाँव पुजवाते हैं सो क्या संसारमें कुछ बड़ाई पाते हैं? तुमने हमको भूखे जान दयाकर बनमें आन सुधि ली, अब हम यहां तुम्हारी क्या पहुनाई करें।

वृन्दावन घर दूर हमारा। किस विधि आदर करें तुम्हारा॥

जो वहां होते कुछ फूल फल ला आगे धरते, तुम हमारे कारण दुःख पाय जङ्गल में आईं और यहां हमसे तुम्हारी टहल कुछ न बन आई इस बात का पछतावाही रहा ऐसे शिष्टाचार कर फिर बोले तुम्हें आये बड़ी देरहुई अब घरको सिधारिए, क्योंकि ब्राह्मण तुम्हारी बाट देखते होंगे, इसलिए कि स्त्री बिन यज्ञ सफल नहीं होता, यह वचन श्रीकृष्णसे सुनतेही

हाथ जोर बोलीं महाराज ! हमने आपके चरण—कमल सेवन कर कुटुम्ब की माया सब छोड़ी, क्योंकि जिनका कहा न मान हम उठ धाईं तिनके यहाँ अब कैसे जायँ ? जो वे घरमें आनंदें तो फिर कहाँ बसें ? इससे आपकी शरण में रहें सो भला, और नाथ ! एक नारी हमारे साथ तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा किये आवती थी उसके पतिने रोक रक्खा तब स्त्री ने अकुलाकर अपना जीव दिया, इस बातके सुनतेही हँसकर श्रीकृष्णचन्द्रने उसे दिखाया जो देह छोड़ आई थी, और कहा कि सुनो, जो हरि से हित करता है तिसका विनाश कभी नहीं होता, यह तुमसे पहले आ मिली है ।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! उसको देखतेही एक बार तो सब अचम्भेमें रहीं पीछे ज्ञान हुआ, तब हरिगुण गाने लगी इस बीच श्रीकृष्णचन्द्र ने भोजन कर उनसे कहा कि अब स्थान को प्रस्थान कीजै तुम्हारे पति कुछ न कहेंगे जब श्रीकृष्णने उन्हें ऐसे समझाय बुझाय के कहा तब वे बिदाहो दण्डवत कर अपने घर गईं और उनके स्वामी सोच विचार कर पछताय कह रहे थे कि हमने कथा पुराणमें सुना है कि किसी समय नंद यशोदाने पुत्र के निमित्त बड़ी बड़ी तपस्या की थी,तहाँ भगवान ने आय उन्हें यह वर दिया था कि हम यदुकुल में अवतार ले तुम्हारे यहाँ जन्मेंगे वे ही जन्म ले आये हैं उन्होंने ग्वालबालों के हाथ भोजन मँगवाय भेजा था सो हमने यह क्या किया जो आदि पुरुष ने माँगा और भोजन न दिया ।

यज्ञ धर्म जा कारण ठये । तिनके सन्मुख आज न भये ।
आदि पुरुष हम मानुष जान्यो । नाहिं बचन ग्वालन को मान्यो ।
हम मूरख पापी अभिमानी । कीन्ही दया न हरि गति जानी ।

धिक्कार है हमारी मति को और इस यज्ञ करनेको जो भगवान को पहिचान सेवा न करी, हमसे नारी ही भलीं जिन्होंने जप तप बिन किये साहस कर जा कृष्णके दर्शन किये, और अपने हाथों उन्हें भोजन दिया, ऐसे पछताय मथुरियों ने अपनी स्त्रियोंके सन्मुख हाथ जोड़ कहा कि, धन्य भाग्य तुम्हारा जो हरि का दर्शन कर आईं तुम्हारा ही जीवन सफल है ।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे द्विजपत्नीयाचन नाम चतुर्विंशोऽध्याय ॥२४॥

अध्याय २५

अथ गोवर्द्धन पूजन लीला

श्रीशुकदेवजी बोले जैसे श्रीकृष्णचन्द्रने गिरिगोवर्धन उठाया और इन्द्रका गर्व हरा सोई कथा अब कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो सब ब्रजवासी वर्ष वें दिन कार्तिक बदी चौदस को नहाय धोय केसर चन्दन से चौकपुराय भांति २ मिठाई और पकवान धर धूप दीप कर इन्द्रकी पूजाकिया करें यह रीति उनके यहां परम्परा मे चली आवती थी एकदिन वही दिवस आया तब नन्दजीने बहुतसी खानेकी सामग्री बनवाई और ब्रजवासियोंके भी घर २ सामग्री भोजन की होरही थी तहां श्रीकृष्णने आ माँसे पूछा कि माँ

आज घर घरमें पकवान मिठाई जो हुईहै सो क्याहै इसका भेद मुझे समझाय कहो जो मेरे मनकी दुविधा जाय यशोदा बोली कि बेटा इससमय मुझे बात कहने का अवकास नहीं तुम अपने पिता के पास जा पूछो वे समझायकर कहेंगे यहसुन नन्द उपनन्दके पास आय श्रीकृष्णने कहाकि पिता आजकिस देवताके पूजनकी ऐसी धूमधामहै जिसकेलिये घर घर पकवान औरमिठाईहो रही है वे कैसे भुक्तिमुक्तिवर के दाता हैं उनका नाम और गुण कहो जो मेरे मनका सन्देह जाय नन्दमहर बोले कि पुत्र यह भेद तूने अब तक नहीं समझा कि, मेघों के पति जो हैं सुरपति तिनकी पूजा है जिनकी कृपासे इस

संसार में ऋद्धि सिद्ध मिलती है और तृणा जल अन्न होता है बन उपबन फूलते फलते हैं इससे सब जीव जन्तु पशुपक्षी आनन्दमें रहते हैं यह इंद्रपूजा की रीति हमारे यहाँ पुरुखाओंके आगेसे चली आती है कछु आज नई नहीं निकली नन्दजीसे इतनी बातसुन श्रीकृष्णचन्द्रजीबोले हेपिताजी हमारे बड़ों ने जाने अनजाने इंद्रकी पूजाकी तो की पर अब तुम जान बूझकर धर्मका पन्थ छोड़ औघट घाट क्यों चलते हो इंद्र के मानने से कुछ नहीं होता क्योंकि वह मुक्ति मुक्ति का दाता नहीं और उससे ऋद्धि सिद्ध किसने पाई है ? यह तुमही कहो उसने किसे वर दिया है ? हाँ एक बात यहहै कि यज्ञ करनेसे देवताओं ने अपना राजा बनाकर इंद्रासन दे रक्खा है इससे कुछ परमेश्वर नहीं हो सकता सुनो ! जब असुरोंसे बार २ हारता है तब भागके कहं जा छिपकर अपने दिन काटताहै ऐसे कायर को क्या मानो, अपना धर्म किस लिये नहीं पहचानो ? इंद्रका किया कुछ नहीं होसकता जो कर्ममें लिखा है सोई होता है सुख सम्पत्ति दारा, भाई बन्धुभी सब अपने धर्म कर्म से मिलतेहैं और आठ मास जो सूर्य जल सोखताहै सो चार महीने बरसता है, तिसीसे तृण, जल, अन्न होता है और ब्रह्माने जो चार वर्ण बनाये हैं ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र तिनके पीछे भी एक २ कर्म लगा दिया है कि ब्राह्मण तो वेद विद्या पढ़ें क्षत्रिय सबकी रक्षा करे वैश्य खेती बणिज करें शूद्र इन तीनों की सेवा में रहें पिता हमवैश्य हैं गायें बढ़ीं इससे गोकुल हुआ तिसी से नाम गोप पड़ गया हमारा यह कर्महै कि खेती बणिज करें और गौ ब्राह्मण की सेवा में रहें वेद की आज्ञा है कि अपनी कुल रीति न छोड़िये जो लोग धर्म तज औरका धर्म पालतेहैं सो ऐसेहैं जैसे कुलबधू हो पर पुरुष २ प्रीतिकरे इससे अब इंद्रकी पूजा छोड़ दीजे और बन पर्वत की पूजा कीजे क्योंकि हम बनवासी हैं हमारे राजा वेई हैं जिनके राज्यमें हम सुखसे रहते हैं तिन्हें छोड़ और को पूजना हमें उचित नहीं इससे अब सब पकवान मिठाई अन्न ले चलो और गोवर्धन की पूजा करो।

इतनी बात के सुनते ही नन्द उपनन्द उठकर वहाँ गये जहाँ बड़े २ गोप

अथाई पर बैठे थे, इन्होंने जातेही सब कृष्णकी कही बात उन्हें सुनाई वे सुनते ही बोले कि, कृष्ण सच्ची कहता है, तुम बालक जान उसकी बात मत टालो भला तुम्हीं विचारो कि इन्द्र कौन है, और हम किस लिये उसे मानते हैं उनकी तो पूजाही छोड़ देना चाहिये ।

हमें कहा सुरपति सों काजू । पूजें बन सरिता गिरिराजू ।

ऐसे कह सब गोपों ने कहा ।

दोहा—भलो मतो कान्हा दियो तजिये सिगरे देव । गोवर्धन पर्वत बड़ो, ताकी कीजे सेव ॥

यह वचन सुनते ही नन्दजीने प्रसन्न हो गोपों में ढिंढोरा फिरवा दिया कि कल हम सारे ब्रजवासी चलकर गोवर्धन की पूजा करेंगे जिसके घर इन्द्र की पूजाके लिये पकवान मिठाई बनीहै सो सब ले ले भोरहीगोवर्धन परजाइयो इतनी बात सुन सकल ब्रजवासी दूसरे दिन भोर तड़केही स्नान ध्यान सब सामग्री झालों, परातों थालों डोली हांडों चरुओं में भरकर गाड़ी बहँगियों पर रखवाय गोवर्धनको चले तिसीसमय नंद उपनंदजी कुटुम्ब समेत सामग्री ले सबके साथ हो लिये और बाजे गाजेसे चले सबमिल गोवर्धन पहुँचे वहां जाय पर्वतों को चारों ओर से झाड़ बुहार जल छिड़क घेवर पापर जलेबी लाडू, खुरमे, अमरती, फेनी पेड़े, बरफी, खाझे, गूझे, मठुलिया, सीरा, पूरी कचौरी, सेव,पापड़ पकौड़े आदि पकवान और भांति २ के भोजन व्यंजन संधान चुन २ रख दिये,इतने कि जिनसे पर्वत छिप गया और ऊपरफूलोंकी माला पहराय वर्ण २ के पाटम्बर तानदिये तिस समयकी शोभा वर्णी नहीं जाती गिरि ऐसा सुहावना लगताथा कि जैसे किसीको गहने कपड़े पहराय नखशिखसे शृंगारा होय और नन्दजीने पुरोहित बुलाय सब ग्वालबाल साथ ले रोलीअक्षत पुष्प चढ़ाय धूप दीप नैवेद्य कर पान सुपारी दक्षिणा धर वेद की विधिसे पूजाकी तब श्रीकृष्णने कहा कि अब तुम शुद्ध मनसे गिरिराजका ध्यान करोतो वे आय दर्शन दे भोजनकरें श्रीकृष्णसे यों नसुनते ही नन्द यशोदा समेत सबगोपी गोप करजोर नयन मूँद ध्यान लगाय खड़े हुये तिसकाल नन्दलाल उधर तअति मोटी भारी दूसरी देहधर बड़े २ हाथ

पाँव कर कमल नयन चन्द्रमुखहो मुकुट धरे, बनमाला गेर पीत वसन और रत्न जटित आभूषण पहर मुँह पसारे चुपचाप पर्वतके बीचसे निकले और इधर आपहीने अपने दूसरे रूपको देख सबसे पुकारके कहा देखो गिरिराज ने प्रगट हो दर्शन दिया जिनकी पूजा तुमने जी लगाय कीनी है।

इतना वचन सुनाय श्रीकृष्णचन्द्रजीने गिरिराजको दण्डवतकी उनकी देखा देखी सब गोपी गोप प्रणामकर आपसमें कहने लगेकि इस भांति इन्द्र ने कब दर्शन दियाथा हमने वृथा इसकी पूजाकी.और क्या जानिए पुरुषाओंने ऐसे प्रत्यक्ष देवताको छोड़ क्यों इन्द्रको मानाथा ? यहबात समझी नहीं जाती यों सब बतराय रहेथे कि श्रीकृष्ण बोले अब देखते क्या हो जो भोजन लाए हो सो खिलाओ इतना वचन सुनतेही गोपीगोप षटरस भोजन थाल परातोंमें भर उठाय लगे देने और गोवर्धननाथ हाथ बढ़ाय२ ले ले भोजन लगे करने निदान जितनी सामग्री नन्द समेत ब्रजवासीलेगएथे सो खाई, तब वहसूरत पर्वत में समाई फिर पर्वत की परिक्रमा दे दूसरे दिन गोवर्धन से चले हँसते२ बृन्दाबन आए तिसकाल घर घर मङ्गल बधाए होने लगे और ग्वाल बाल सब गाय बछड़ों को सङ्ग ले उनके गलेमें गण्डे घण्टालियाँ घुंघरू बांध बांध न्यारेही कुतूहल कर रहेथे।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोवर्धन पूजा पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अध्याय २६

दो०—सुरपति पूजा तजी,करि पर्वत की सेव।
तबहिं इन्द्र मन कोपि के,सबै बुलाये देव॥

जब सारे देवता इन्द्रके पासगए तब वह उनसे पूछने लगाकि तुमसुझे समझाकरकहो कल ब्रजमें किसकी पूजाथी इसबीच नारदजी आय पहुँचेतो इन्द्रसे कहनेलगे कि सुनो महाराज तुम्हें सबकोई मानतेहैं परएक ब्रजवासी नहीं मानते क्योंकि नन्दके एकबेटाहुआहै तिसीका कहा सबकरते हैं उन्होंने तुम्हारीपूजा मेटकर पर्वतपुजवाया,इतनी बातकेसुनतेही इन्द्र क्रोधकर बोला कि ब्रजवासियोंके धन बढ़ाहै इसीसे उन्हें गर्व हुआ है।

जप तप यज्ञ तज्यो व्रत मेरो। काल दरिद्र बुलायो नेरो॥
मानुष कृष्ण देव कर माने। ताकी बातें साँची जाने॥
वह बालक मूरख अज्ञाना। बहुवादी राखे अभिमाना॥
उनका अबहिं गर्व परिहरौं। पशुखोइ लक्ष्मी बिन करौं॥

ऐसे बकझक खिजलायकर सुरपतिने मेघपतिको बुला भेजा वह सुनते ही डरता काँपता आ हाथजोड़ खड़ाहुआ तिसे देखतेही इन्द्र स्नेहकर बोला कि तुम अभीअपनादल साथले जाओ और गोवर्धनपर्वत समेत ब्रजमण्डल को बरसकर बहाओ ऐसाकि कहीं गिरिका चिह्न और ब्रजवासियोंका नाम न रहे इतनी आज्ञापाय मेघपति दण्डवतकर राजा इन्द्रसे बिदा हुआ और उसने अपने स्थानपर आय बड़े२मेघोंको बुलायके कहा कि सुनो महाराज की आज्ञाहै कि तुम अभीजाय ब्रजमण्डलको बरसाके बहादो यहवचनसुन सबमेघ अपने दल बादलले मेघपतिकेसाथ होलिए उसने आतेही ब्रजमण्डल को घेरलिया और गर्ज गर्ज बड़ी बड़ी बूंदोंसे लगामूसलधार जल बरसावने और अंगुलीसे गिरिको बतावने इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज! जब ऐसे चहुँओरसे घनघोर घटा घिरि आई और अखण्डजल बरसने लगा तब नन्द यशोदासमेत सब गोपीग्वाल बाल भयखाय भीगते थर थर काँपते श्रीकृष्णके पासजाय पुकारेकि हे कृष्ण इस महा प्रलय के जलसे कैसे बचेंगे तब तो तुमने इन्द्र की पूजा मेट पर्वत पुजवाया अब उनको बेग बुलाइये जोआय रक्षा करें,नहींतो क्षण भर में

नगर समेत सब डूबे मरते हैं इतनी बात सुन और सबको भयातुर देख श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि, तुम अपने जी में किसी बातकी चिन्ता मत करो, गिरिराज अभीआय तुम्हारी रक्षा करते हैं, यों गोवर्धन को तेजसे तपाय अग्नि सम किया। और बायेंहाथ की उंगली पर उठाय लिया, तिस काल सब ब्रजवासी अपने डेरों समेत आ उसके नीचे खड़े हुए और श्रीकृष्णचन्द्र को देख२ अचरज कर आपसमें कहने लगेकि—

है कोउ आदि पुरुष अवतारी। दीखतहै कोउ देव मुरारी।
मोहन मानुष कैसो भाई। अंगुरीपर क्योंगिरिठहराई॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि राजा परीक्षित से कहने लगे कि उधर तो मेघपति अपना दल लिए क्रोध कर मूशलधार जल बरसाता था, इधर पर्वत पै गिरते ही छनाक से तवेकीसी बूंदहोजातीथी यह समाचार सुन इन्द्र भी कोपकर आप चढ़ आया और लगातार इसीभांति सात दिन बरसा, पर ब्रजमें हरि प्रतापसे एक बून्दभी न पड़ी, जब सब जल निबड़ा तब मेघोंने हाथ जोड़ कहा—हेनाथ! जितना महा प्रलयका जलथा सबका सब हो चुका, अब क्या करें। यह सुन इन्द्रने अपने ज्ञान ध्यानसे विचारा कि, आदि पुरुषने अवतार लिया है नहीं तो किसमें इतनी सामर्थ्य थी जो गिरि धारण कर ब्रजकी रक्षा करता ऐसे सोच समझ अछता पछता मेघों समेत इन्द्र अपने स्थान को गया, और बादल उघड़ प्रकाश हुआ, तब सब ब्रजवासियों ने प्रसन्न हो श्रीकृष्णसेकहा महाराज! अब गिरि उतार धरिए मेघ जाता रहा,यह सुनतेही श्रीकृष्णजीने पर्वत जहां का तहां रख दिया।

अध्याय २७

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि जब हरि ने गिरि करसे उतार धरा तिस समय सब बड़े२ गोप तो अद्भुत चरित्र को देख यही कहरहेथे कि जिसकी शक्ति ने महाप्रलय से आज ब्रजमण्डलको बचाया तिसे हम नन्द सुत कैसे कहेंगे। हां किसी समय नन्द यशोदाने महातप किया था इसीसे भगवान

ने आ इनके घर जन्म लिया है और ग्वालबाल आय श्रीकृष्णके गले मिल मिल पूछने लगेकि भैया! तूने इस कमलसे कोमल हाथपर कैसे ऐसे भारी पर्वतका बोझ संभाला, और नन्द यशोदाने करुणा कर पुत्रको हृदयसे लगाया, हाथ दबाय अंगुली चटका कहने लगे कि सातदिन गिरि

कर पर रक्खा हाथ दुखता होयगा, और गोपियाँ यशोदा के पास आय पिछली सब कृष्णकी लीला गाय कहने लगीं—

यहजोबालक पूततिहारो, चिरजीवौं व्रजको रखवारो। दानव दैत्य असुर संहारे, कहाँ२ व्रज जनन उबारे
जैसी कही गर्गऋषि आई। सोई बात होत है माई॥

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे श्रीकृष्णलीलानाम सप्तविंशतितमोऽध्यायः॥ २७॥

अध्याय २८

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! भोर होते ही सब गायें और ग्वालबालोंको सङ्गकर अपनी२ छाकले कृष्ण बलराम वेणुबजाते और मधुर२ सुर से गाते जो धेनु चरावन बनको चले तो राजाइन्द्र सकल देवताओंको साथ लिए कामधेनुको आगे किए ऐरावत हाथीपर चढ़ सुर लोकसे चला वृन्दावन में आया बनकी बाट रोक खड़ा हुआ, जब श्रीकृष्णचन्द्र उसे दूरसे दिखाई दिए तब गजसे उतर नंगे पांवों गले में कपड़ा डाल थर थर काँपता दौड़ कर श्रीकृष्णके चरणों पर गिरपड़ा और पछताय पछताय रो रो कहने लगा कि, हे ब्रजनाथ मुझपर दया करो।

मैं अभिमान गर्व अति किधा। राजस तामस में मन दिया ॥
धन मदकर संपति सुखमाना। भेद न कछू तुम्हारो जाना ॥
तुम परमेश्वर सबके ईश। और दूसरा को जगदीश ॥
ब्रह्मा रुद्र आदि बरदाई। तुम्हरी दई सम्पदा पाई ॥
जगतपिता तुम निगमनिवासी। सेवत नित कमला भई दासी ॥
जगके हेत लेत औतारा। तब तब हरत भूमि को भारा ॥
दूर करो सब चूक हमारी। अभिमानी मूरख हौं भारी ॥

तब ऐसे दीनहो इन्द्रने स्तुति करी तब श्रीकृष्ण दयालुहो बोलेकि अब तो तू कामधेनुके साथ आया इससे तेरा अपराध क्षमा किया, पर फिर गर्व मतकीजो क्योंकि गर्व करनेसे ज्ञान जाता है और कुमति बढ़ती है, इससे अपमान होताहै इतनी बात श्रीकृष्णके मुखसे सुनतेही इन्द्रने उठकर वेदकी विधि से पूजा की और गोविन्द नाम धर चरणामृतले परिक्रमा करी तिस

समय गंधर्व भांति२ के बाजे बजाय२ श्रीकृष्णकायश गाने लगे और देवता अपने२ विमानोंमें बैठे आकाशसे फूल बरसाने लगे उसकाल ऐसी शोभा हुई कि मानो फेरकर श्रीकृष्णने जन्म लिया, जब निश्चिन्त हो इन्द्र हाथ जोर सन्मुख खड़ाहुआ तब श्रीकृष्णने आज्ञादी कि अबतुम कामधेनु समेत अपने पुरको जावो, आज्ञा पातेही कामधेनु और इन्द्र बिदाहो दण्डवतकर इन्द्रलोक को गये और श्रीकृष्णचन्द्र गौचराय साँझहुये ग्वालोंको लिये बृन्दाबन आये उन्होंने देखा सो अपने घर जाय कहा आज हमने इन्द्रका दर्शन बनमें किया

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षितसे कहाकि महाराज! यह जो श्रीगोविन्द की कथा मैंने तुम्हें सुनाई इसके सुनने और सुनाने से संसार में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पदार्थ मिलते हैं,।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे इन्द्रस्तुति करणो नाम अष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥२८॥

अध्याय २९

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! एकदिन नन्दजीने संयम कर एकादशी व्रत किया, दिनतोस्नान,ध्यान,भजन,जप, पूजामें काटा और रात्रि जागरण में बिताई,जब छः घड़ी रैन रही और द्वादशी भई तब उठके देह शुद्धकर भोर हुआ जान धोती अंगोछा झारीले यमुना नहाने चले तिनके पीछे कई एक ग्वाल भी हो लिये जब तीर पर जाय प्रणाम कर कपड़े उतार नन्द

जी ज्यों नीरमें बैठे त्यों वरुणके सेवक, जो जलकी चौकीदेते थे कि कोई रात में नहाने नपावे उन्होंने जा वरुण से कहा कि महाराज! कोई इस समय यमुनामें नहाय रहा है सो हमें क्या आज्ञा होती है? वरुण बोले उसे अभी पकड़ लावो, आज्ञा पातेही सेवक फिर वहां आये जहांनन्दजी स्नान कर जलमें खड़े जप करते थे आतेही अचानक नाग फांस डाल नन्द जी को वरुण के पास लेगये तब नंदजी के साथ जो ग्वालवाल गये थे उन्होंने आय श्रीकृष्णसे कहा कि महाराज! नंदरायजी को वरुणके गण यमुना तीरसे

पकड़ वरुण लोक को लेगये इतनी बातके सुनतेही श्रीगोविन्द क्रोधकर उठ धाये और पल भर में वरुण के पासजा पहुँचे इन्हें देखते ही वह उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ विनती कर बोला—

चौपाई—सफल जन्म है आज हमारो। पायो यदुपति दरश तुम्हारो॥
कीजै दोष दूर सब मेरे। नन्द पिता इस कारण घेरे॥
तुमको सबके पिता बखाने। तुम्हारे पिता नहीं हम जाने॥

रातको नहाते देख अनजान गण पकड़ लाये, भला इस मिस मैंने आपके दर्शन पाये अब दया कीजै, मेरा दोष चितमें न लीजे ऐसे अति विनती कर बहुतसी भेंट लाय और श्रीकृष्णके आगे धर जब वरुण हाथ जोर शिर नवाय सन्मुख खड़ा हुआ तब श्रीकृष्ण भेंटले पिता को साथ कर वहाँसे चल वृन्दावन आये, इनको देखतेही सब ब्रजबासी आय मिले तिस समय बड़े२ गोपोंने नन्दराय से पूछा कि तुम्हें वरुणके सेवक कहाँ लेगये थे? नंद बोले सुनो जो वे पकड़ मुझे वरुण के पास लेगये त्योंही पीछे से श्रीकृष्ण पहुँचे इन्हें देखतेही वह सिंहासन से उतर पावों पर गिर अति विनती कर कहने लगा नाथ! मेरा अपराध क्षमा कीजे मुझसे अनजाने यह दोष हुआ सो चितमें न लीजे इतनी बात नन्दजी के मुखसे सुनते ही गोप आपसमें कहने लगेकि भाई! हमने तो यह तभी जाना था जब श्रीकृष्ण चन्द्र ने गोवर्धन धारणकर ब्रज की रक्षा की कि, नन्दमहर के घर में आदि पुरुषने आय अवतार लिया है ऐसे आपसमें बतराय फिर सब गोपोंने हाथ जोर श्रीकृष्णजी से कहा महाराज! आपने हमें बहुत दिन भरमाया, पर अब सब भेद तुम्हारा पाया तुम्हीं जगत के कर्ता हो त्रिलोकी नाथ! दया कर हमें वैकुण्ठ दिखाइये इतने वचन सुन श्रीकृष्णने क्षणभर में वैकुण्ठ रच उन्हें ब्रज में दिखाया, देखते ही ब्रज बासियों को ज्ञान हुआ तो कर जोर शिर झुकाय बोले, हे नाथ! तुम्हारी महिमा अपरम्पार है हम कुछ कह नहीं कह सकते पर आपकी कृपासे आज हमने यह जाना कि तुम नारायण हो भूमिका भार उतारने को संसार में जन्म ले आये हो।

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जब ब्रजबासियोंने इतनी बात कही

तब श्रीकृष्णाचन्द्रजीने सबको मोहित कर जो वैकुण्ठकी रचना रची थी सो उठायली और अपनी माया फैलादी तबतो सब गोपोंने स्वप्नसा जाना और नन्दजीने भी माया के बश हो श्रीकृष्ण को अपना पुत्र कर माना।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे वैकुण्ठ चरित्र नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥२६ ॥

अध्याय ३०

इतनी कथासुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज!

दोहा—जैसे हरिगोपिन सहित, किन्हो रास विलास। सो पंचाध्यायी कहौं, जैसी बुद्धिप्रकाश ॥

जब श्रीकृष्णाजीने चीर हरे थे तब सब गोपियोंको यह वचन दिया था कि हम कार्तिक महीने में तुम्हारे साथ रास करेंगे। तभी से गोपियाँ रास की आस किये मन में उदास हो नित उठ कार्तिक मास ही को मनाया करें, उनके मनाते२ सुखदाई शरदऋतु आई।

चौपाई—लाग्यो जबते कातिक मास। घाम शीत वर्षा को नास ॥
निर्मल जल सर घर भर रहे। फूले कमल होय डहे डहे ॥
कुमुद चकोर कंत कामिनी। फूलहिं देख चन्द यामिनी ॥
चकई मलिन कमल कुम्हिलाने। जे निज मित्र भानुको माने ॥

ऐसे कह फिर शुकदेवमुनि बोले कि पृथ्वीनाथ! एकदिन श्रीकृष्णाचन्द्र कार्तिक पूनों की रात्रि को घरसे निकल बाहर आय देखेंतो निर्मल आकाश में तारे छिटक रहे हैं चाँदनी दशों दिशान में फैल रही है शीतल सुगन्धि सहित मन्दगति पवन बहरही है, और एक ओर सघन बनकी छवि अधिक

ही शोभा दे रहीहै, ऐसा समय देखतेही उनके मनमें आयाकि हमने गोपियों को यह वचन दियाथा कि जो शरदऋतुमें तुम्हारे साथ रास करेंगे सोपूरा किया चाहिये, यह विचारकर बनमें आय श्रीकृष्णने बाँसुरी बजाई वंशीकी ध्वनि सुन सब ब्रजयुवती बिरहकी मायाछोड़ कुल कान पटक गृहकाजतज हड़बड़ा उलटा पुलटा शृङ्गार कर उठ धाईं एक गोपीजो अपने पतिके पाससे उठ चलीतो उसके पतिने बाटमें .जारोकी और फेर कर घर ले आया,जाने न दिया, तबतो वह हरिका ध्यान कर देहछोड़ सबसे पहिले जामिली उसके चित्तकी प्रीति देख श्रीकृष्ण चन्द्रने तुरन्तही मुक्ति दी।

इतनी कथा सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूछाकि कृपानाथ! गोपीने श्रीकृष्णजीको ईश्वरजानके तो नहींमाना केवलबिषयकीवासनाकर भजा, वह मुक्त कैसे हुई सो मुझे समझाय के कहो जोमेरेमनका सन्देहजाय श्रीशुकदेवजी बोले धर्मावतार। जो जन श्रीकृष्णचन्द्रकी महिमाकाअनजाने भी गुणगाते हैं सो भी निस्सन्देह भुक्ति मुक्ति पाते हैं, जैसे कोई बिनजाने अमृत पियेगा, वहभी अमर हो जायगा और जानके पियेगा,उसेभी गुणहोगा यह सब जानते हैं कि पदार्थ का गुणऔर फल बिन हुए रहता नहीं ऐसे ही हर भजनका प्रताप है कोई किसी भावसे भजे मुक्ति होयगी कही है—

दो०—जप माला छापा तिलक,सरैन एकौ काम। मनकाचे नाचे वृथा,साँचेराचे राम॥

और सुनो जिन२ने जिसभावसे श्रीकृष्णको मानकेमुक्तिपाईसो कहता हूँ कि नन्द यशोदा इन्होंने तो पुत्रकर बूझा,गोपियोंने जार कर समझा कंस ने भय कर भजा, ग्वालबालोंने मित्रकर जपा, पांडवोंने प्रीतम कर जाना शिशुपालने शत्रुकर माना, यदुवंशियोंने अपनाकर ठाना, और योगी यती मुनियोंने ईश्वर कर ध्याया, पर अन्तमें मुक्ति पदार्थ सबहीने पाया जोएक गोपी प्रभुका ध्यान कर तरी तो क्या अचरज हुआ।

यह सुन राजापरीक्षितने श्रीशुकदेवमुनिसे कहाकि कृपानाथ! मेरेमन का सन्देह गया,अब कृपाकर आगे कथा कहिये, श्रीशुकदेवजी बोले महाराज तिसकाल सब गोपियां अपने२ झुण्डलिए श्रीकृष्णचन्द्र जगत उजागर रूप

सागरमें धायकर यों जाय मिलीं जैसे पानीमें पानी जाय मिले, उस समयके बनावटकी शोभा बिहारीलालजीकी कुछ वर्णी नहीं जातीकि सबशृङ्गारकर नटवर वेष धरे,ऐसे मन भावने,सुन्दर सुहावने लगतेथेकि ब्रजयुवतियां हरि-छवि देखते ही छकि रहीं, तब मोहन उनकी कुशल क्षेम पूँछ रूखे हो बोले कहो रात समय भूत प्रेतकी बिरियाँ भयावनीबाटकाट उलटे पुलटे वस्त्र आभूषण पहने अति घबराई कुटुम्बकी माया तज इस महाबनमें कैसे आई ऐसा साहस करना नारियोंको उचितनहीं, स्त्रीको कहाहै कि कायर कुमति कपटी कुरूप कोढ़ी, काना अन्धा लूला लंगड़ा दरिद्री कैसा ही पतिहो पर उसकी सेवा करना योग्यहै इसीमें उसका कल्याणहै और जगत में बड़ाई कुलवती पतिव्रताका धर्म है कि पतिको क्षण भर न छोड़े और जो स्त्री अपने पुरुष को छोड़ पर पुरुषके पास जातीहै सो जन्म२ नरक वास पाती है ऐसे कह फिर बोले कि—सुनो तुमने आय सघन बन निर्मल चाँदनी और यमुना तीरकी शोभा देखी अब घरजा मन लगाय कन्तकी सेवा करो इसमें तुम्हारा सब भाँति भला है इतना वचन श्रीकृष्णके मुखमें सुनतेही सब गोपियाँ एक बार तो अचेत हो अपार शोच सागरमें पड़ीं पीछे—

नीचे चितै उसासैं लईं । पद नखते भू खोदत भईं ॥
यों दृग सों छूटी जलधारा । मानो टूटे मोती हारा ॥

निदान दुःखसे अतिघबराय रो२कहने लगींकि अहो कृष्ण तुम बड़े ठग हो पहलेतो बशीबजाय अचानक हमारा ज्ञान ध्यान मन धन हरलिया अब निर्दयी हो कपटकर कर्कश वचन कह प्राणलिया चाहतेहो योंकह पुनिबोली-

लोग कुटुम्ब घर पति तजे,तजी लोक की लाज । हैं अनाथ कोऊ नहीं,राखि शरण ब्रजराज ॥

और जो जन तुम्हरे चरणोंमें रहते हैं सो धन तन लाज, बड़ाई नहीं चाहते उनके तो तुमही हो जन्म२के कन्त हे प्राण रूप भगवन्त ।

करिहैं कहा जाय हम गेह । उरझे प्राण तुम्हारे नेह ॥

इतनी बातके सुनतेही श्रीकृष्णचन्द्र ने मुसकुराय सब गोपियों को निकट बुलायके कहा, जो तुम राजी हो इस रङ्ग, तो खेलो रास हमारे सङ्ग,

यह वचन सुन दुःख तज गोपियाँ प्रसन्नतासे चारों ओर घिर आईं और हरि मुख निरख२ लोचन सफल करने लगीं—

दोहा-ठाढ़े बीच जु श्याम घन, इहि छवि कामिनि केलि।
मनहु नील गिरिके तरे, उलटी कञ्चन बेलि॥

आगे श्रीकृष्णने अपनी मायाको आज्ञादी कि हम रासकरेंगे उसकेलिए तू एक अच्छा स्थान रच और वहीं खड़ी रह जो जो जिस वस्तुकी इच्छा करे सो सो ला दीजे महाराज उसने सुनतेही यमुनाकेतीर जाय एककञ्चन का मण्डलाकार बड़ा चौतरा बनाय मोती हीरे जड़ उसके चारोंओर सपल्लव केलेके खम्भ लगाये तिनमें बन्दनवार और भाँति२के फूलोंकी माला बांध आ श्रीकृष्णसे कहा ये सुनतेही प्रसन्न हो सब व्रजयुवतियोंको साथले यमुना तीर को चले वहां जाय देखेंतो चन्द्रमण्डलसे रासमण्डलकी चौतरे की चमक चौगुनी शोभा देरहीहै उसके चारोंओर रेती चाँदनीसी फूलरहीहै सुगंधसमेत शीतल मीठी२ पवन चल रही है और एक ओर सघन बनकी हरियाली उजाली रातमें अधिकही छबि दे रही है इस समय को देखते ही सब गोपियाँ मग्न हो उसी स्थानके निकट मानससरोवर नाम एक सरोवर था, तिसकेतीर जाय मन मानते सुथरे वस्त्र आभूषण पहर नख शिखसे शृङ्गारकर अच्छे बाजे बीण पखावज आदि सुर बाँध२ ले आईं और लगीं प्रेममद मातीहो सोच सङ्कोच तज श्रीकृष्णके साथ मिल बजाने गाने नाचने उस समय श्रीगोविन्द गोपियों की मण्डलीके मध्य ऐसे सुहावने लगतेथे जैसे तारामंडल में चन्द्रमा शोभा देय है इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले सुनो महाराज! जब गोपियोंने ज्ञान विवेक छोड़ रासमें हरिको विषयी पति कर माना, और आधीन जाना तब श्रीकृष्णचन्द्रजीने मनमें विचाराकि—

अब मोहि इन अपने वश जान्यो। पति विषयी सम मनमें आन्यो॥
भई अज्ञान लाज तजि देह। लपटहिं पकरहिं कन्त सनेह॥
ज्ञान ध्यान मिलिके बिसरायो। छोड़ जाऊँ इन गर्व बढ़ायो॥

देखूँ मुझ बिन पीछे बनमें क्या करती हैं और कैसे रहती हैं ऐसे विचार राधिकाजीको साथले कृष्ण अन्तरध्यान हुये।

अध्याय ३१

❋ अथ रासमण्डल लीला प्रारम्भः ❋

श्रीशुकदेवमुनिबोलेकि महाराज ! एकाएकी श्रीकृष्णचन्द्रको न देखते ही गोपियों की आंखोंके आगे अन्धेरा होगया, और अतिदुख पाय ऐसे अकुलाईं जैसे मणि खोय सर्प घबराताहै इसमें एक गोपी कहने लगी—

कहो सखी मोहन कहाँ,गये हमें छिटकाय । मेरे गरे भुजा धरे,रहे हुते उरलाय ॥

अभी तो हमारे संग हिलमिल रास बिलास कर रहे थे इतनेही में कहाँ गये ! तुममेंसे किसीने भी जाते न देखा यह वचन सुन सबगोपियां बिरह की मारी निपट उदास हो हाय मार बोलीं—

कहांजाँय कैसी करें,कासोंकहैं पुकारि । हैं कित कछू न जानिये,क्योंकर मिले मुरारि ॥

ऐसे कह हरिमद माती ह्वै सब गोपी लगी चारों ओर ढूँढ़२ गुण गाय गाय रो रो यों पुकारने—

हमको क्यों छोड़ी ब्रजनाथ । सर्वस दियो तुम्हारे साथ ॥

जब वहां न पाया तब आगे जाय आपसमें बोलीं—सखी ! यहांतो हम किसीको नहीं देखतीं, किससे पूछें कि हरि किधर गये—यों सुन एक गोपीने कहा सुनो आली ! एक बात मेरे जीमें आई है कि यह जितने इस बनमें

पशु-पक्षी और वृक्ष हैं सो सब ऋषिमुनि हैं, ये कृष्णलीला देखने को अवतार ले यहाँ आये हैं इन्हींसे पूछें ये यहाँ खड़े देखते हैं जिधर गये होंगे तिधर बता देंगे इतना वचन सुनते ही सब गोपियाँ विरह से व्याकुल हो क्या जड़ क्या चेतन लगी एक एक से पूँछने—

हे बड़ पीपल पाकर वीर। लह्यो पुण्य कर उच्च शरीर।
पर उपकारी तुम्हीं भये। वृक्ष रूप पृथ्वी पर ठये॥
घाम शीत वर्षा दुख सहो। काज पराये ठाढ़े रहो॥
बकला फूल मूल फल डार। तिनसों करत पराई सार॥
सबका मनधन हर नन्दलाल। गये किधर को कहो दयाल॥
अहो कदम्ब अम्ब कचनारी। तुम कहुँ देखे जात मुरारी॥
हे अशोक चम्पा करवीर। जात लखे तुमने बलवीर॥
हे तुलसी अतिहरिकी प्यारी। तनुते कहूँ न राखत न्यारी॥
फूली आज मिले हरि आय। हमहूँको किन देत बताय॥
जाही जुही मालती माई। इतहैं निकरे कुँवर कन्हाई॥
मगहि पुकारि कहैं ब्रजनारी। इत तुम जात लखे बनवारी॥

इतनीकह श्रीशुकदेवजी बोले कि—महाराज! इस रीतिसे सब गोपी पशु पक्षी द्रुम, बेलि से पूँछती श्रीकृष्णमयहो लगीं पूतना, दावा आदि सब श्रीकृष्णकी करीहुईबाललीलाकरनें और ढूँढ़ने,निदान ढूढ़ते२कितनीएक दूर जाय देखें तोश्रीकृष्ण के चरणचिन्हकमल,यव ध्वजा अंकुशसमेत रेतपर जग मगारहेहैं देखतेही ब्रजयुवतियाँ जिसरजको सुर नर मुनिखोजतेहैंतिसरजको दंडवत करशिरचढ़ाय हरिके मिलनकी आश धर वहाँसे बढ़ीं तो देखाकि उन चरणचिह्नोंके आसपास एकनारीके भी पाँव उपड़ेहुये देख अचरज कर आगे जाय देखें तो एकठौर कमलपत्ताकेबिछौनेपर सुन्दरजड़ाउदर्पण पड़ा उससे लगीं पूछने जबविरहभरावहभीनबोला तब उन्होंने आपसमें पूछा कहोआली यह क्योंकर लिया उसीसमय जो प्रियाप्यारी की मनकी जानतीथी,उसनेउत्तर दिया कि,सखी! जब प्रीतम प्यारीकीचोटी गूथनबैठेऔरसुन्दरबदनबिलोकने में अन्तर हुआ तिस बिरियाँ प्यारीने दर्पण पियाकोदिखाया तब श्रीमुखका-

प्रतिविम्बसन्मुखआयायहबातसुन गोपियां कुछनकोपियां वरन् कहनेलगींकि उसनेशिव पार्वतीकोअच्छी रीतिसेपूजा है और बड़ा तपकियाहै,जोप्राणपति केसाथ एकान्तमें निधड़क बिहार करतीहै महाराज सबगोपियांतो इधरविरह मदमाती बकरझकर२ढूँढ़ती थी कि उधर श्रीराधिकाजी हरिके साथ अधिक सुखमान प्रीतमकोअपनेवश जानआपकोसबसे बड़ाठान मनमें अभिमानआन बोलीं प्यारे! अबसुझसे चला नहीं जाता काँधे चढ़ाय ले चलिये इतनीबातके सुनतेही गर्व प्रहारी अन्तरयामी श्रीकृष्णचन्द्रजीने मुसकराय बैठकर कहा कि आइए हमारे कांधे पर चढ़लीजिए जब वह हाथ बढ़ाय चढ़नेको तैय्यारहुई तब कृष्ण अन्तर्ध्यान हुए जो हाथ बढ़ाये थे सो हाथ पसारे खड़ी रह गई ऐसे कि जैसे घनमे मान कर दामिनी बिछुड़ रही हो कै चन्द्रसे चन्द्रिका रूप पीछे रह गई होय, और गोरे तनुकी ज्योति छूटि छिति छाय यों छबिदेरही थी–मानो सुन्दर कंचन की मूर्ति भूमि पै खड़ीहै नयनोंमें जलकी धार बह रहीथी औरसुवासकेवश मुखपास भंवरआय२बैठतेथे तिन्हेंभीउड़ायनसक्तीथी औरहाय२कर बनमेंबिरहकीमारी इसभाँतिरोरहीथी अकेली,कि जिसकेरोने की धुनि सुनि सब रोते थे पशु पक्षी और द्रुम बेली,और यों कहरही थी—

हा हा नाथ परमहितकारी,कहांगये स्वच्छन्दबिहारी। चरणशरण दासीमैं तेरी,कृपासिंधुलीजै सुधमेरी

इतने में सब गोपियाँ भी ढूँढ़ती उसके पास जा पहुँचीं और उसके गले लग सबोंने मिल मिल ऐसा सुखमानाकि जैसे कोईमहाधनखोय आधा धन पाय सुखमाने, निदान सबगोपियाँभी उसे अतिदुखितजान साथले महाबन में पैठीं और जहाँ लग चाँदनी देखी तहाँ लग गोपियोंने बनमें श्रीकृष्णको ढूंढ़ा जब सघन बनमें अंधेरेमें बाट न पाई तब वेसब वहाँसे फिर धीरजधर मिलनेकी आशकर यमुनाके उसी तीर पर आय बैठीं जहाँ श्रीकृष्णचन्द्रजी ने अधिक सुख दिया था।

अध्याय ३२

शुकदेवजी बोलेकि महाराज सब गोपियाँ यमुनातीर बैठ प्रेममदमाती हरिके चरित्र और गुण गाने लगीं, कि प्रीतम जबसे तुम ब्रजमें आये; तबसे

नये२सुख यहाँ आकर छाये,लक्ष्मीने कर। तुम्हारे चरणकी आश,अचलआय के कियाहै वास, गोपीहैं दास तुम्हारी, सुध लीजिए दयाकर हमारी, जबसे सुन्दर साँवली सलोनी मूर्ति देखी है तेरी तबसे हुई हैं बिन मोलकी चेरी, तुम्हारे नयन बाणोंने हने हैं हिय हमारे. सो प्यारे किसलिए लेवेनहीं तुमारे जीव जातेहैं हमारे, अब करुणा कीजे तजकर कठोरता बेग दर्शन दीजे जो तुम्हें मारनाहीथा तो हमको बिषधर आग और जलसे किसलिए बचाया ? तभी मरने क्यों न दिया ? तुम केवल यशोदा सुत नहींहो तुम्हें तो ब्रह्मा

रुद्र इन्द्रादि सब देवता विनती कर लाए हैं संसारकी रक्षा केलिए हेप्राण-नाथ ! हमें एकअचरज बड़ाहैकि जो अपनेहीको मारोगे तो करोगे किसकी रखवाली प्रीतम तुम अन्तर्यामी हो हमारे दुःखहर मनकी आशा क्यों नहीं पूरी करते ? क्या अबलाओं पर ही शूरता धरीहै हे प्यारे ! जबतुम्हारी मंद मुसकानयुत प्यार भरी चितवन और भृकुटी की मरोर नयनों की सिकोर मुकुट ग्रीवाकी लटक और बातोंकी चटक हमारे जियमें आती है तब महा दुःख पाती हैं और जिस समय तुम गो चरावन जातेथे बनमें तिस समय तुम्हारे कोमल चरणोंका ध्यान करनेसे बनके कङ्कर काँटे आसकतेथे हमारे मनमें, भोरके गए साँझको फिर आतेथे तिसपरभी हमें चार महर चारयुग से जाते थे जब सन्मुख बैठे सुन्दर बदन निहारती थीं तब अपने जी में

बिचारती थीं कि ब्रह्मा कोई बड़ा मूर्ख है जो पलकें बनाई हैं हमारे इकटक देखने में बाधा डालने को ।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज इसी रीति से सब गोपी बिरहकी मारी श्रीकृष्णचन्द्रके गुण और चरित्र अनेक प्रकार से गाय गाय हारीं तिसपर भी न आये बिहारी तब तो निपट निरास हो मिलने की आश तज जीनेका भरोसा छोड़ अति अधीरतासे अचेतहो गिर गिर ऐसे रोय पुकारीं कि सुनकर चरअचर भी दुखितभये भारी ।

अध्याय २२

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! जब श्रीकृष्णचन्द्र अंतर्यामी ने जाना कि अब ये गोपियां मुझ बिन जीती न बचेंगी,

छन्द—तब तिनही में प्रगट भये, नन्द नन्दन यों
दृष्टि बंधकर छिपे, फेर प्रकटे नटवर ज्यों ॥
आये हरि देखे जबै, उठीं सबै यों चेत ।
प्राणपरे ज्यों मृतक में, इन्द्री जगे अचेत ॥
बिन देखे सबको मन व्याकुल होत भयो ।
मानो मनमथ भुजङ्ग, सबनि डसकै गयो ॥
पीर खरी प्रिय जान, पहूँचे आइ के ।
अमृत बेलिन सींच लई, सब ज्याइ के ॥

दो०-मनहुं कमल निशि मलीन है, ऐसे हो ब्रजलाल, कुण्डल रवि छवि देखिके फूले नयन विशाल,

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! श्रीकृष्णचन्द्र

आनन्दकंदको देखते ही सब गोपियां एकाएकी विरहसागरसे निकल उनके पास जाय ऐसे प्रसन्न हुईं कि जैसे कोई अथाह समुद्र में डूब थाह पाय प्रसन्न होय और चारों ओरसे घेरकर खड़ीभईं तब श्रीकृष्ण उन्हें साथलिये वहाँ आये जहाँ पहिले रास विलास कियाथा जातेही एक गोपीने अपनी ओढ़नी उतारके श्रीकृष्णके बैठनेको बिछा दी जो इसपर बैठे तो कई एक गोपी क्रोधकर बोलीं कि महाराज! तुम बड़े कपटी हो बिराना मन धन लेना जानते हो पर किसी का कुछ गुण नहीं मानते इतना कह आपस में कहने लगीं।

दो०—गुण छाँड़े अवगुण गहे रहे कपट मन भाय। देखो सखी विचार के तासोंकहा बसाय॥

यहसुन एक उनमेंसे बोली कि सखी तुम अलगहीरहो अपने कहेकुछ शोभा नहीं पाती देखो मैं कृष्णही से कहावतीहों यों कह उसने मुसकराय के श्रीकृष्णसे पूछा कि महाराज एक बिनगुण किये गुण मानले दूसरा किये उसका पलटादे तीसरा गुणके पलटे अवगुण करै चौथाकिसी के लिये गुणको भी मनमें न धरे इनचारोंमें कौन भलाहै और कौन बुरा यह तुम हम से समझाके कहो श्रीकृष्णचन्द बोलेकि तुमसब मनदे सुनो भला और बुरा मैं बुझाकर कहताहूँ उत्तम तो वहहै जो बिन कियेकरै जैसे पिता पुत्र को चाहताहै और कियेपर करनेसे कुछपुण्य नहींसो ऐसेहैं जैसे बेटाके हेतु गौ दूध देतीहै गुणको अवगुण मानें तिसे शत्रु जानिये उससे बुराकृतघ्नी जो कियेको मेटे इतना बचन सुनते ही सब गोपियां आपस में एक एकका मुँह देख २ हँसनेलगीं तबतो श्रीकृष्णचन्द्र घबराके बोले कि सुनो मैं इन चार की गिनती में नहीं जो तुम जानके हँसती हो बरन मेरी तो यह रीतिहै कि जो मुझसे जिसबातकी इच्छा रखताहै तिसके मनकी बांछा पूरी करताहूँ कदाचित तुम कहो जो तुम्हारी यह चाल है तो हमें बनमें ऐसे क्यों छोड़ गये? इसका कारण यहहै कि मैंने तुम्हारी प्रीतिकी परीक्षा ली इस बात का बुरा मत मानो सच्चा ही जानो यों कहकर फिर बोले

अब हम परचौ लियो तिहारो। कीन्हो सुमिरण ध्यान हमारो।
मोही सों तुम प्रीति बढ़ाई। निधं नं मनो संपदा पाई॥
ऐसे आई मेरे काज। छांड़ी लोक वेद की लाज।

ज्यों बैरागी छाँड़े गेह,मनदे हरिसे करैं सनेह। कहा तिहारी करैं बड़ाई,हमपै पलटो दियो न जाई

जो ब्रह्माके सौवर्ष जियें तौभी हम तुम्हारे ऋणसे उऋण न होंय।

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे गोपी कृष्ण संवादो नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३॥

अध्याय ३४

श्रीशुकदेवमुनि बोले हे राजा, जब श्रीकृष्णचन्द्रने इस ढबसे रसके वचन कहे तबतो सब गोपियाँ रिस छोड़ प्रसन्नहो उठहरि से मिल भांति २ के सुख मान आनन्द में मग्न हो कौतूहल करनेलगीं तिस समय—

दो—कृष्ण अंश माया ठई, भये अङ्ग बहु देह। सबको सुख चाहत दियो, लीला परम सनेह॥

महाराज जितनी गोपियाँथीं तितने ही शरीर श्रीकृष्णचन्द्रने धरउसी रासमंडलके चौतरे पर सबको साथले फिर रासबिलासका आरम्भकिया।

द्वै २ गोपी जोरें हाथा, तिनके बीच २ हरि साथा। अपनी २ ढिंग सबजाने,नहीं दूसरेकीपहिचाने। अंगुरिनमें अंगुरी कर दिये,प्रफुलित फिरैं संग हरि लिये। बिच गोपी बिच नन्द किशोर, सघन घटा दामिनि चहुँओर। श्याम कृष्ण गोरी ब्रजबाला। मानहुँ कनकनील मणिमाला॥

महाराज उसीरीतिसे खड़ेहो गोपी और कृष्ण लगे अनेक अनेक प्रकारके यंत्रों के सुर मिलाय २ कठिन २ राग अलाप २ बजाय २ गाने औरतीखी चोखीआढ़ी ड्योढ़ी दुगुन तिगुनकी तानें लेले उपजबल बताय २ नाचने और आनन्दमें मग्न ऐसे हुए कि उनको तनमनकी भी सुध न थी

कभी उनका अंचल उघड़जाताथा कभी इनका मुकुट खिसलता इधर मोतियोंके हारटूट गिरते उधर बन माल, पसीनेकी बूंदे माथोंपर मोतियों की लड़सी चमकती थीं और गोपियोंके गोरे २ मुखड़ोंपर अलकें यों बिखररहीं थीं के जैसे अमृत के लोभसे पटलिये उड़कर चाँदको जा लपटे होंय कभी कोई गोपी श्रा,कृष्णकी मुरलीके साथ मिलकर जैलमें गातीथी कभी कोई अपनीतान अलगही लेजातीथी और कोई वंशीको छेक उसकीतान समझि ज्योंकी त्यों गलेसे निकालतीथी तब हरि ऐसे भूलरहते कि ज्यों बालक दर्पणमें अपना प्रतिबिंब देख भूलरहे इसी ढबसे गाय२ नाच नाच अनेक अनेक प्रकारके हाव भाव कटाक्ष कर २ सुख लेते देते थे और परस्पर रीझ २ हँस हँस कंठ लगाय २ वस्त्र आभूषण निछावर कर रहे थे तिस काल ब्रह्मा रुद्र इन्द्र आदि सब देवता सब गंधर्व अपनी २ स्त्रियों समेत बिमानों में बैठ रास मंडलीका सुख देख आनन्दसे फूल बरसाने लगे और उनकी स्त्रियां वह सुख लख हांसकर मनमें कहतीं कि जो जन्म ले ब्रजमें जातीं तो हमभी हरिके साथ रास बिलास करतीं और राग रागनियों का ऐसा समा बँधा हुआथा कि जिसको सुनके पवन पानी भी न बहता था और तारा मंडल समेत चन्द्रमा थकित हो किरणों से अमृत बरसावता था इसमें रात बढ़ी छःमहीने बीतगये और किसीने न जाना तभीसे उस रैनका नाम ब्रह्म रात्रि हुआ।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले पृथ्वीनाथ! रासलीला करते करते जो कुछ श्रीकृष्णचन्द्रके मनमें तरङ्ग आई तो गोपियोंको ले यमुना तीरपर जाय नीरमें बैठ जलक्रीड़ाकर श्रममिटाय बाहर आय सबके मनोरथ पूरेकर बोलेकि अब चारघड़ी रातबाकी रहीहै अब तुम सब अपने २ घर जावो इतना वचन सुन उदासहो गोपियों ने कहा नाथ आपके चरणकमल छोड़कर घर कैसे जावें हमारा लालची मन तो कहा मानताही नहीं श्रीकृष्ण बोले कि सुनो जैसे योगीजन मेरा ध्यान धरते हैं तैसे तुमभी ध्यान कीजियो मैं तुम्हारे पास जहाँ रहोगी तहाँ रहूंगा इतनी बात के

सुनते ही संतोष कर सब बिदाहो अपने घर गईं और यह भेद उनके घर वालोंमें से किसीने न जाना कि ये यहाँ न थी ।

इतनी कथा सुन राजापरीक्षतने श्रीशुकदेवमुनिसे पूछा कि दीन दयालु यह तुम मुझे समझाकर कहो कि,श्रीकृष्णचन्द्र तो असुरों को मार पृथ्वीका भार उतारने और साधुसंतको सुखदे धर्मका पन्थ चलानेके लिये अवतार ले आयेथे उन्होंने पराई स्त्रियोंके साथ रासविलास क्योंकिया यहतो कुछ लंपटका कर्म है, जोविरानी नारसे भोगकरे शुकदेवजी बोले—

सुन राजा यह भेद न जान्यों । मानुषसम परमेश्वर मान्यों ॥
जिनके सुमरे पातक जात । तेजवन्त पावन हो गात ॥
जैसे अग्नि मांझ कछु परै । सोऊ अग्नि होयकै जरै ॥

सामर्थी क्या नहीं करते क्योंकि वे तो करके कर्मकी हानि करते हैं, जैसे शिवजी ने बिषलिया और खाके कंठको भूषण दिया, और काले साँपका किया हार कौन जाने उनका व्यवहार । वे तो अपने लिये कछु भी नहीं करते जो उनका भजन सुमिरन कर कोई वर माँगताहै तैसाही तिसको देतेहैं उनकी तो यह रीतिहै कि, सबसे मिले दृष्टि आते हैं और ध्यानकर देखिये तो सबसे ऐसे अलग जनाते हैं जैसे जलमें कमलका पात और गोपियों की उत्पत्ति तो मैं तुम्हें पहलेही सुना चुकाहूँ कि वेद और वेदकी ऋचायें हरि दरश परश करने को ब्रजमें जन्मले आई हैं और इसी भांति श्रीराधिकानेभी ब्रह्मा से वर पाया श्रीकृष्णचन्द्रजी की सेवा करने को जन्म ले आईं और प्रभुकी सेवामें रहीं इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज कहाहै कि हरिका चरित्र मान लीजे पर उनके करने में मन न दीजे जो कोई गोपीनाथ का यश गाता है जो निश्चय परमपद पाता है और जैसा फल होता है अरसठ तीर्थ के न्हाने में तैसाही फल मिलताहै श्रीकृष्णयश गाने में ।

अध्याय ३५

श्रीशुकदेवमुनि कहने लगे कि-राजा ! जैसे श्रीकृष्णजीने विद्याधरको तारा, और शंखचूड़को मारा सो प्रसङ्ग कहता हूँ तुम जी लगायसुनो एक

दिन नन्दजीने सब गोपग्वालोंको बुलायके कहा, कि भाइयो ! जब श्रीकृष्ण का जन्म हुआथा, तब मैंने कुलदेवी अंबिकाकी मानता करी थी कि जिस दिन श्रीकृष्ण बारह बर्षकाहोगा तिस दिन नगर समेत बाजे गाजेसे जाकर पूजा करूंगा सो दिन उनकी कृपासे आज देखा, अब चलकर पूजा किया चाहिये, इतना वचन नन्दजी के मुखसे सुनतेही सब गोप ग्वाल उठ धाये और झटपट अपने अपने घरोंसे पूजा की सामग्री.ले आये तबतो नन्दराय कुटुम्ब समेत उनके साथ होलिये और चले चले अंबिकाके स्थानपर पहुँचे, वहाँ जाय सरस्वती नदीमें नहाय, नंदजीने पुरोहित बुलाय सबको साथ

लेदेवीके मन्दिरजाय शास्त्रकी रीतिसे पूजाकी, और जो पदार्थ चढ़ानेको लेगये थे सो आगेधर परिक्रमादेहाथ जोड़ विनती कर कहा, कि मा ! आपकी कृपा से कान्ह बारह बर्षकाहुआ ऐसे कह दंडवतकर मंदिरके बाहर आये सहस्र ब्राह्मण जिमाये, इसमें अबेर जो हुई तो सब ब्रजवासियों समेत नंदजी तीर्थ ब्रतकर वहाँही रहे, रातको सोतेथे एक अजगरने आय नंदरायका पांव पकड़ा और लगा निगलने तब तो वे देखतेही भयखाय घबरायके लगे पुकारने, हेकृष्ण ! वेग सुधले नहीं तो यह मुझे निगले जाता है, उनका शब्द सुनतेही सारे ब्रजबासी स्त्रियां पुरुष नींदसे चौंकते नंदजीके निकट जाय उजाला करदेखें तो एक अजगर उनका पाँव पकड़े पड़ा है, इतने में श्रीकृष्णचंद्रजी भी पहुँचे सबके देखतेही ज्योंही उसकी पीठ में चरण लगाया

त्योंही वह अपनी देह छोड़ सुन्दर पुरुष हो प्रणामकर सम्मुख हाथ जोड़ खड़ा हुआ तब श्रीकृष्णने उससे पूंछा कि तू कौन है और किस पाप से अजगरहुआथा, सो कह, वह शिर झुकाय बिनती कर बोला अंतरयामी तुम सब जानतेहो मेरी उत्पत्ति कि मैं सुदर्शन नाम विद्याधरहूँ सुरपुरमें रहता था और अपने रूप गुणके आगे गर्वसे किसीको कुछ न गिनताथा, एक दिन बिमानमें बैठ फिरने को निकला तो जहाँ अँगिराऋषि बैठे तप करतेथे तिनके ऊपर हो सौबेर आयागया एकबेरजो उन्होंने बिमानकी पर-छाहीं देखीतो ऊपर देख क्रोधकर मुझे शाप दिया कि, अभिमानी तू अजगर हो इतना उनके मुख से निकला कि मैं अजगर हो नीचे गिरा तिस समय ऋषिने कहाकि तेरी मुक्ति श्रीकृष्णचन्द्रके हाथ होगी इसीलिये मैंने नन्दरायजी के चरण आन पकड़ेथे, कि आप आयके मुझे मुक्त करें सोकृपानाथ! आपने आय कृपाकर मुझे मुक्तिदी ऐसे कह विद्याधर तो परिक्रमा दे हरिसे आज्ञाले दण्डवत कर बिदा हो बिमान पर चढ़ सुरलोक को गया और यह चरित्र देख सब ब्रजबासियों को अचरज हुआ निदान भोर होते ही देवी का दर्शन कर सब मिल वृन्दाबन आये।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, कि पृथ्वीनाथ! एक दिन हल धर और गोविन्द गोपियों के समेत चाँदनी रात को आनन्दसे बन में गायरहेथे, कि इसबीच कुबेरका सेवक शंखचूड़ नाम यक्ष जिसके शीर्ष में मणि और अति बलबानथा, सो आ निकला-देखे तो एक ओर सब गोपी-यूथ कुतूहल कररहीं हैं व एक ओर कृष्णबलदेव मग्नहो मत्तवत गाय रहे हैं, इसके जी में जो कुछ आई तो सब ब्रजयुवतियों को घेर आगेकर ले चला, तिस समय सब गोपी भय खाय पुकारीं ब्रजनाथ! रक्षा करो, श्रीकृष्ण बलराम इतना वचन गोपियों के मुखसे निकलते ही सुनकर दोनों भाई रूख उखाड़ हाथोमें ले यों दौड़े आये कि मानों सिंह मातंगजपर उठधाये और वहां जाय गोपियोंसे कहाकि तुम किसी भाँति मत डरो हम आन पहुँचे इनको काल समान देखतेही यक्ष भयमान हो गोपियोंको छोड़ अपना

प्राण ले भागा उसकाल नंदलालने बलदेवजीको तो गोपियोंके पास छोड़ा और आप जाय उसकेझोंटे पकड़ पछाड़ा निदान तिरछा हाथकर उसका शिर काट मणिले बलरामजीकोदी ॥ इति ॥

अध्याय ३६

श्रीशुकदेवमुनि बोले राजा ! जब तक हरिबनमें धेनु चरावें तब तक सब ब्रजयुवतियाँ नन्दरानीके पास आय बैठकर प्रभुका यश गावें जो लीला श्रीकृष्ण बनमें करें सो गोपियां घर बैठी उच्चरें-

सुनों सखी बाजत है बैन, पशु पत्नी पावत हैं चैन । पति संग देवीथयीं विमान, मगन भइहैं धुनसुनकान। करते परहिं चुरी सुन्दरी, विहवल मनतनकी सुधिहरी । तबही एक कहै ब्रजनारी, गरजनि मेघतली अतिभारी । गावतहरि आनन्द अडोल, मोहनचातक पानि कपोल ।

पिय संगमृगीथकी सुन वेनु । यमुना फिरी घिरी तहं धेनु ॥
मोहे बादर छैया करे । मनो छत्र कृष्ण पर धरे ॥
अबहरि सघन कुंजको धाये । पुनि सब बंशीवट तर आये ॥
गायन पीछे डोलत भए । घेर लई जल प्यावन गए ॥
सांझ भई अब उलटे हरि । राँभति गाय वेणु धुन करी ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवमुनिने राजा परीक्षितसे कहाकि महाराज इसीरीतिसे नितगोपियाँ दिनभरहरिके गुण गावें और साँझ समय आगे जाय श्रीकृष्णचन्द्र आनंद कंदसे मिल सुख मानले आवें और तिस समय यशोदारानी भी रजमण्डित पुत्रका मुख प्यारसे पोंछ कंठलगायसुखमाने ।

अध्याय ३७

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! एक दिन श्री कृष्ण बलराम साँझ समय गायों को ले बनसे घर को आते थे उस बीच एक दैत्य अतिबड़ा, बलबान धेनुकासुर आय गायों में मिला।

तिहि आकाशलों देहीधरी। पीठ कड़ी पाथरसी करी। बड़े सींग तीक्षण दोउखरे। रक्त नयन अतिही रिस भरे। पूँछ उठाय डकारत फिरै। रहि रहि मूतत गोबर करै। फटकै कन्ध हिलावै कान। गए देव सब छोड़ बिमान। खुरसों खोदै नदी करारे। पर्वत उलट पीठसों डारे। पृथ्वी हलै शेष थरहरे। तिय औ धेनु गर्भ भूपरे॥

उसे देखतेही सब गाय तो जिधर तिधर फैलगईं और ब्रजवासी दौड़ वहाँ आये जहाँ सबके पीछे श्रीकृष्ण बलराम चलते आते थे प्रणाम कर बोले महाराज! आगे एक अति बड़ा बैल खड़ा है उससे हमें बचावो इतनी बात के सुनतेही अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्र बोलेकि तुम कुछमत डरो वह राक्षस वृषभका रूप बनकर आयाहै नीच, हमसे चाहता है अपनी मीच, इतना कह आगेजाय उसेदेख बोले बनवारी, किआ हमारे पास कपट तनुधारी, तू और किसीको क्या डराताहै, मेरे निकट किसलिये नहीं आता जो बैरी सिंहका कहावताहै, सो मृगपर नहीं धावता, देख मैंहीहूँ कालरूप गोविन्द, मैंने तुझसे बहुतों को मारके कियाहै निकंद, यौंकह फिरताल ठोक ललकारा आ मुझसे संग्राम कर, यहबचन सुनते ही असुर ऐसे क्रोधकर धाया कि मानों इंद्र का बज्र आया ज्यों२ हरि उसे हटाते थे त्यों२ वह संभल२ बढ़ा आता था एक बारजो उन्होंने उसे देपटका, त्योंही खिजलाकर उठा और दोनों सींगोंसे उसने हरि को दबाया तबतो श्रीकृष्णजी ने भी फुरतीसे निकल झट पाँव पर पांवदे उसके सींग पकड़ यौंमरोड़ाकि जैसे कोईभीगे चीरको निचोड़े निदान वह पछाड़ खाय गिरा और उसका जी निकल गया तिस समय सबदेवता अपने अपने विमानोंमें बैठे आनंदसे फूल बरसाने लगे और गोपी गोप श्रीकृष्ण यश गाने इस बीच श्रीराधिकाजी ने आ हरिसे कहा, कि महाराज वृषभ रूपजो तुमने मारा इसका पाप हुआ इससे अब तुम तीर्थ न्हाय आवो

तब किसीको हाथ लगाओ, इतनी बात के सुनते ही प्रभुबोले कि सब तीर्थों को मैं ब्रजमें हीं बुलाये लेता हूँ योंकह गोवर्द्धन के निकट जाय दो औंडे कुण्ड खुदवाये तहांही तीर्थ धर धाये और अपना अपना नाम कह कह उनमें जल डालडाल चलेगये तब श्रीकृष्णचन्द्र उसमें स्नानकर बाहर आये अनेक गो दानदे बहुत से ब्राह्मण जिमाये शुद्ध हुए और उसी दिनसे कृष्ण कुण्ड राधाकुण्ड वे प्रसिद्ध भये। यह प्रसङ्ग सुनाय श्रीशुकदेवमुनि बोले कि महाराज! एकदिन नारदजी कंसके पास आये और उसका कोप बढ़ाने को जब उन्होंने बलराम और श्यामके होने मायाके आने और कृष्णके जाने का भेद समझाकर कहा तब कंस क्रोधकर बोला नारदजी तुम सच कहते हो·

दोहा—प्रथम दिया सुत आनिके,मन परतीत बढ़ाय। ज्यों ठगकछू दिखाय के, सर्वसले भजि जाय।

इतना कह बसुदेवजी को बुलाय पकड़ बाँधा, और कांधे पर हाथ धर अकुला कर बोला

मिला रहा कपटी तू मुझे। भला साधु जाना मैं तुझे॥
दिया नन्द के कृष्ण पठाय। देवी हमें दिखाई आय॥
मन में कछू करी कछु और। मारूं अवशि तुझे यहि ठौर॥
मित्र सगा सेवक हितकारी। करै कपटसो पापी भारी॥

दोहा—मुख मीठा मन विषभरा,रहे कपटके हेत। आप काज परद्रोहिया, उससे भला जुप्रेत॥

ऐसे बक झक करि कंस नारदजीसे कहने लगा कि महाराज! हमने कुछ इसके मन का भेद न पाया, हुआ लड़का और कन्या को लादिखाया जिसे कहा अधूरागया सोईजा गोकुलमें बलदेव भया इतनाकहक्रोधकर होंठचबाय खड्गउठाय ज्योंचाहाकि बसुदेव को मारूं त्यों नारदमुनि ने हाथ पकड़ कहा राजा बसुदेवको तू रख आज, और जिसमें कृष्ण बलराम आवें सोकर काज, ऐसे समझाय बुझाय जब नारदमुनि चले गये तब कंसने बसुदेव देवकीको तो एक कोठरीमें मूंद दिया और आपने भयातुर हो केशी नाम राक्षसको बुलायके कहा।

महाबली तू साथीमेरा। बड़ाभरोसा मुझको तेरा। एकबार तू ब्रजमें जा। रामकृष्ण हति मुझे दिखा।

इतना वचन सुनतेही केशी तो आज्ञापाय बिदाहो दंडवत्‌कर बृन्दाबनको गया और कंसनेशलतोशलचाणूरअरिष्टव्योमासुरआदिजितनेमंत्रीथेसबको बुला भेजा वे आये तिन्हें समझाकर कहने लगा कि मेरा बैरी पास बसा है तुम अपने जीमें सोच बिचार करके मेरे मनका जो शूल खटकताहै सो निकालो मंत्री बोले पृथ्वीनाथ! आप महाबली हो किससे डरतेहो रामकृष्ण को मारना क्या बड़ी बात है कुछ चिन्ता मत करो जिस छल बलसे वे यहां आवें सोई हम पता बतावें पहले तो यहाँ भली भांति से एक ऐसी सुन्दर रंग भूमि बनवाइये कि जिसकी शोभा सुनतेही देखने को नगर नगर गाँव२ के लोग उठ धावें पीछे महादेवका यज्ञ करवावो और होमके लिये बकरे भैंसे मंगवावो यह समाचार सुन सब ब्रजवासी भेंटलावें तिनके साथ रामकृष्ण भी आवेंगे उन्हें तभी कोईमल्ल पछाड़ेगा या कोई औरही बली पौरमें मार डालेगा इतनी बात के सुनते ही,

सो०—कहे कंस मन लाय,भलो मतो मन्त्रि दियौ। लीने मल्ल बुलाय,आदर कर बीरा दियौ॥

फिर सभामें आय अपने बड़े२ राक्षसों से कहने लगा कि जब हमारे भानजे रामकृष्ण यहाँ आवें तब तुममेंसे कोई उन्हें मार डालियो जो मेरे जीका खटका जाय, यों कह समझाय पुनि महावत को बुलाकर बोला कि तेरा सबसे मतवाला हाथी है तू द्वार पर लिये खड़ा रहियो जद वे दोनों आवें और द्वारमें पांवदें तब तू हाथी से चिथा डालियो किसी भांति भागने न पावें जो उन दोनों को मारेगा सो मुंह मागा धन पावैगा ऐसा सबको सुनाय समझाय बुझाय कार्तिक बदी चौदस को शिव का यज्ञ ठहरा कंसने साँझ समय अक्रूरको बुलाया अति भावभक्ति कर घरभीतर ले जाय एक सिंहासनपर अपने पास बैठाय हाथ पकड़ अतिप्यारसे कहा कि तुम यदुकुलमें सबसे बड़े ज्ञानी धर्मात्मा, धीरहो इसलिये तुम्हें सब जानते मानते हैं ऐसा कोई नहीं जो तुम्हें देख सुखी नहोय, इससे जैसे इन्द्रका काज वामनने जा किया जो छलकर बलिका सारा राज्य लेलिया और राजा बलिको पताल पठाया, तैसे तुम हमारा कामकरो कि एकबेर वृन्दाबन जावो और

देवकीके दोनों लड़कोंको जैसे बनै तैसे छलबलकर यहां ले आवो, कहाहै जो बड़े हैं सो आप पराये काज दुख सहा करते हैं जिसमें तुम्हें तो हमारी सब बात की लाजहै अधिक क्या कहैं? जैसे बने तैसे लेआवो तो सहज हीमें मारे जांयगे कैतो देखतेही चाणूर पछाड़ेगा कै गज कुवलिया पकड़ चीर डालेगा नहीं तो मैंही उठ मारूंगा अपना काज अपने हाथ संवारूंगा और उन दोनोंको मार पीछे उग्रसेनको हनूंगा क्योंकि वह बड़ा कपटी है मेरा मरना चाहताहै फिर देवकी के पिता देवकको आगसे जलाय पानीमें डुबाऊंगा साथही उसके बसुदेव को मार हरि भक्तों को जड़से खोऊंगा तब निष्कंटक राज्यकर जरासन्ध जो मेरा मित्रहै प्रचंड उसके त्राससे काँपते हैं नौखण्ड और नरकासुर बाणासुर आदि बड़े बड़े महाबली राक्षस जिसके सेवकहैं तिससे जा मिलूंगा जोतुमरामकृष्णको ले आवो, इतनीबात कहकर कंस फिर अक्रूर को समझाने लगाकि तुम बृन्दाबनमें जाय नन्दके यहां कहियो कि शिव का यज्ञहै धनुषधराहै और अनेक अनेक प्रकार के कौतूहल वहां होंयगे, यह सुन नन्द उपनन्द गोपी समेत बकरे भैंसे ले भेट देने आवेंगे तिनके साथ देखने को कृष्ण बलदेव भी आवेंगे, यह तो मैंने तुम्हें उनके लावनेका उपाय बताय दिया आगे तुम सुज्ञानहो जो और उक्ति बनि आवे सो करि कहियो अधिक तुम से क्या कहैं कहा है कि—

सो०—होय विचित्रवसीठ,जाहि बुद्धिबल आपनी। पर कारज पर दीठ,करहि भरोसो ताहि को॥

इतनी बात के सुनतेही पहले तो अक्रूर ने अपने जी में विचारा कि जो मैं अब भली बात कहूंगा तो यह न मानेगा इससे उत्तम-यही है कि इस समय इसके मनभावनी सुहावनी बात कहूँ, ऐसे और भी ठौर कहा है कि वही कीजिये जो जिसे सुहाय, यों सोच विचार अक्रूर हाथ जोड़ शिर झुकाय बोला महाराज! तुमने भला मता किया यह बचन हमने भी शिर चढ़ाय मानलिया, होनहार पर कुछ वश नहीं चलता मनुष्य अनेक मनोरथ कर धावता है पर कर्म का लिखा ही फल पावता है, सोचता और होता और किसी की मन चाहा होता नहीं, आगे का सोच तुमने यह बात विचारी

है, न जानिये कैसे होय मैंने तुम्हारी बात मान ली, कल भोर को जाऊंगा और रामकृष्णको ले आऊंगा ऐसेकह कंससे बिदा हो अक्रूर अपने घर आया

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे कंसासुर सम्वादो नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अध्याय ३८

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! ज्यों श्रीकृष्णचन्द्रने केशी को मारा औरनारदस्तुति करी पुनि हरिने व्योमासुरको हनात्यों सब चरित्र कहता हूँ तुम चित दे सुनो कि भोर होतेही केशी अति ऊंचा भयावना घोड़ा बन बृन्दावन में आया और लगा लाल२ आँखेंकर नयन चढ़ाय कान पूछ उठाय

टापों से भूमि खोदने और हींस२ कांधा कंपाय २ लातें चलाने इसे देखते ही ग्वालबालोंने भय खाय भाग श्रीकृष्णसे जा कहा ये सुनके वहां आये जहाँ वह था और उसे देख लड़ने की फेंठ बांध ताल ठोक सिंह की भांति गर्जकर बोले, अरे जो तूं कंसका प्रीतम है और घोड़ा बन आया है तो और के पीछे क्यों फिरता है आ मुझसे लड़ जो बल देखूं दीप पंतग की भांति कब तक फिरेगा तेरी मृत्युतो निकट आन पहुँची है यह बचन सुन केशी कोपकर अपने मनमें कहने लगा कि आज इसका बल देखूंगा और पकड़ ईखकी भांति चबाय कंसका कार्यकर जाऊंगा इतना कह

मुँह बायके ऐसा दौड़ा कि मानो सारे संसारको खाजायगा, आतेही पहले जा उसने श्रीकृष्णपर मुँह चलाया तो उन्होंने एकबेर तो ढकेलकर पीछे को हटाया, जब दूसरी बेर वह फिर सम्भलके मुख फैलाय धाया तब श्रीकृष्णने अपना हाथ उसके मुँहमें डाल लोहलाटसा कर ऐसा बढ़ायाकि जिसने उसके दशों द्वार जा रोके, तबतो केशी घबड़ाकर जीमें कहने लगा कि अब देह फटती है यह कैसी भई अपनी मृत्यु आप मुँहमेंली जैसेमछली बंशी को निगल प्राण देती है तैसे मैं अपना जीव खोया।

इतनी कहउसने बहुतेरे उपाय हाथनिकालनेको किये,पर एकभी कामन आया निदान श्वास रुककर पेट फट गया तो पछाड़ खायकर गिरा तबउसके शरीरसे लोहू नदी की भाँति बह निकला,तिससमय ग्वालबाल आय२देखने लगे, और श्रीकृष्णचन्द्र आगे जाय बनमें एक कदम्बकी छाँह तले खड़ेहुए इसबीच बीणा हाथमें लिये नारद मुनिजी आन पहुँचे प्रणामकर खड़े हो बीणा बजाय कृष्णचन्द्र की भूत भविष्य की सब लीला और चरित्र गायके बोले कि दीनानाथ। तुम्हारी लीला अपरम्पार है इतनी किसमें सामर्थ्यहै, जो आपके चरित्रों को बखाने पर तुम्हारी दया से मैं इतना जानता हूँ कि आप भक्तोंको सुख देने के अर्थ और साधुओं की रक्षाके निमित्त और दुष्ट असुरों के नाश करने के हेतु बारम्बार अवतारले संसारमें प्रगटहो भूमि का भार उतारते हो इतना वचन सुनतेही प्रभुने नारद मुनिको तो विदा दी वे तो दण्डवत कर सिधारे। और आप सब ग्वालबाल सखाओं को साथ ले एक बड़के तले बैठ पहले तो किसीको मन्त्री किसीकोप्रधान किसीको सेनापति बनाया आप राजा हो राजनीति का खेल खेलने लगे और पीछे पीछे आँख मिचौनी, इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले कि–पृथ्वीनाथ।

दो०–मारयो केशी ज्यों हरी,सुनी कंस यह बात। व्योमासुर सों कहत है,व्याकुल कम्पित गात॥

चौ०–अरि कन्दन व्योमासुर बली। तेरी जग में कीरति भली॥

ज्यों रामके पवनको पूत, त्योंहीतू मेरेयहदूत। वसुदेवकेपुत्रहति ल्याव, आजकाजमेरोकरिआव॥

यहसुन करजोड़ व्योमासुर बोला महाराज! बसायगी सो जो करूँगा आज मेरी देह है आप ही के काज जो जी के लोभी हैं तिन्हें स्वामीके अर्थ जी देते आती है लाज सेवक और स्त्रीका तो इसीमें यश धर्महै जो स्वामी के निमित्त प्राण दे, ऐसे कह कृष्णबलदेव पर बीड़ा उठाय कंस को प्रणाम कर व्योमासुर वृन्दाबन को चला बाट में जाय ग्वालका वेष बनाय चला२ वहाँ पहुँचा जहां हरि ग्वालबाल सखाओं के साथ आँख मिचौनी खेल रहेथे जाते ही दूरसे जब उसने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचन्द्र से कहा महाराज! मुझे भी अपने हाथ खिलाओ तब हरिने उसे पास बुलाकर कहा तू अपने जीमें किसी बात की हौंस मतरख, जो तेरा मन मानै उससे हमारे सङ्ग खेल यों सुन वह प्रसन्न हो बोला कि बृक मेढ़ेका खेल भला है, श्रीकृष्ण चन्द्रने कहा बहुत अच्छा तू बन भेड़िया और सब ग्वालबाल होंय मेंढ़ा सो सुनते ही व्योमासुर तो फूल कर त्यारी हुआ और ग्वाल बाल बने मेंढ़ सब मिलकर खेलने लगे तिस समय वह असुर एक२को उठा लेजाय और पर्वतकी गुफामें रख उसके मुंह पर आड़ी शिला धर बन्द कर चला आवै ऐसे जब सबको वहां रख आया और अकेले श्रीकृष्ण रहे तब ललकार कर बोला कि आज कंसका काज सारूंगा और सब यदुवंशियों को मारूंगा यों कह ग्वालबाल का वेष छोड़ सचमुच भेड़िया बन ज्यों हरि पर झपटा त्यों उन्होंने पकड़ गला घोंट मारे घूंसों के यों मार पटका कि जैसे यज्ञ के बकरेको मार डालते हैं।

अध्याय ३९

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज! कार्तिकबदी द्वादशी को तो केशी और व्योमासुर मारा गया और त्रयोदशी को भोर के तड़केही अक्रूर कंस के पास आय बिदा हो रथ पर चढ़ अपने ,मनमें यों विचारता वृन्दाबन को चलाकि ऐसा मैंने क्या जप, तप, यज्ञ दान तीर्थ ब्रत किया है जिसके पुण्यसे यह फल पाऊंगा? अपनी जान तो इस जन्म भर कभी हरिकानाम नहीं लिया सदा असुरकी सङ्गतिमें रहा भजन भेद कहां पाऊंगा? हाँ अगले

जन्म कोई बड़ा पुण्यकिया उस धर्मके प्रतापसे यह होताहो तौ हो,जो कंसने मुझे आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र के लेने को भेजा है अब जाय उनका दर्शन पाय जन्म सफल करूंगा।

हाथ जोरि के पायन परिहों। पुनि पग रेणु शीश पर धरिहों॥
पाप हरन जेही पग आहिं। सेवक श्रीब्रह्मादिक ताहिं॥
जे पग कालीके शिर परे। जे पग कुच कुसुम सों भरे॥
नाचे रासमण्डली आछे,जेपग डोलें गायन पाछे। जोपग रेणु अहल्या तरी,जो पगते गंगा निसरी
बलिछलिकिया इन्द्रको काज। ते पग हौं देखों गो आज॥
मोको शगुन होत हैं भलो। मृग को झुण्ड दाहिने चलो॥

ऐसे विचार अक्रूर अपने मनमें कहनेलगाकि कहीं मुझे वे कंसकादूत तो न समझें? फिर आपही सोचा कि जिनका नाम अंतर्यामीहै वेतो मनकी प्रीति मानतेहैं और सबमित्रशत्रुको पहिचानते हैं ऐसा कभी न समझेंगे मुझे देखतेही गले लगाय दयाकर अपना कोमल कमल सा कर मेरे शिर पर धरेंगे तब मैं उस चन्द्र बदनकी शोभा इकटक निरख अपने नयन चकोरों को सुख दूंगा कि जिसका ध्यान ब्रह्मा रुद्र आदि सब देवता सदा करते हैं।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहाकि महाराज इस भांति सोच विचार करते रथ हांक इधर से तो अक्रूरजी गये और उधर बनसे गो चराय ग्वालबाल समेत कृष्ण बलराम भी आये तो इन से बृंदाबन के बाहर ही भेंट भई, हरि छवि दूर से देखते ही अक्रूर रथसे उतर

अति अकुलाय दौड़ उनके पांवों पर जा गिरा और ऐसा मग्न हुआ कि मुंह से बोल न आया, महा आनन्द कर नयनोंसे जल बरसने लगा तब कृष्णजी उसे उठाय अति प्यारसे मिल हाथ पकड़ कर लिवाय लेगए वहां नन्दराय अक्रूरजी को देखतेही प्रसन्नहो उठकर मिले और बहुतसा आदर किया, पाँव धुलवाय आसन दिया।

लिये तेल सरदनियाँ आये। उबटि सुगंध चुपरि अन्हवाये॥
चौका पटा यशोदा दियो। षटरस रुचिसों भोजन कियो॥

जब अंचयके पान खाने लगे तब नन्दजी उनसे कुशल पूछ बोले कि तुम यदुवंशियोंमें बड़े साधुहो सदाअपनी बड़ाइसे रहेहो कहो कंस दुष्टके पास कैसे रहते हो और वहाँके लोगोंकी क्या गति है सो भेद कहो। अक्रूरजी बोले—

जबते कंस मधुपुरी भयो। तबतें सबही को दुख दयो॥
पूंछो कहा नगर कुशलात। परजा दुखी होत हैं गात॥
जोलौं है मथुरा में कंस। तौलों कहां बचे यदुवंश॥

दो०—पशु मेंढ़े छेरीनकौं,ज्यों खटीक रिपु होय। त्यों परजा को कंस है,दुख पावै सब कोय॥

इतना कह फिर बोले कि तुम कंसका, ब्यवहार जानते हो हम अधिक क्या कहेंगे।

अध्याय ४०

शुकदेवजी बोलेकि पृथ्वीनाथ! जब नन्दजी बातें कर चुके तब अक्रूरको कृष्ण बलराम सैनसे बुलाय अलग ले गये,

आदर कर पूछी कुशलात। कहो कका मथुरा की बात॥
हैं बसुदेव देवकी नीके। राजा बैर परो तिनहीके॥
अति पापी मायी है कंस। जिन खोयो सिगरो यदु वंश॥

कोई यदुकुल का महा रोग जन्म ले आया है तिसीने सब यदुवंशियों को सताया है और सच पूछो तो बसुदेव देवकी हमारेलिए इतना दुःख पाते हैं जो हमें न छिपाते तो वे इतना दुःख न पाते यों कह श्रीकृष्ण फिरबोले-

तुम सों कहा चलत उन कह्यौ। तिनकौ सदा ऋणी हौंर ह्यौ॥
करत होयंगे सुरत हमारी। सङ्कट में पावत दुख भारी॥

यह सुन अक्रूर जी बोले, कि कृपानाथ! तुम सब जानते हो मैं क्या कहूँगा कंसकी अनीति, उसकी किसी में नहीं प्रीति, बसुदेव और उग्रसेन के मारनेको नित विचार किया करता है पर वे आजतक अपनी प्रारब्धसे बच रहे हैं और जबसे नारदमुनि आय आपके होनेका सब समाचार बुझायके कह गये हैं तबसे बसुदेवजी को बेड़ी हथकड़ी दे महा दुःख में रक्खा है और कल उसके यहां महारुद्र का यज्ञ है व धनुष धरा है सब कोई देखने को आवेंगे तुम्हारे बुलाने को मुझे भेजा है यह कह कर कि तुम जाय राम कृष्ण समेत नन्दराय को भेंट सहित लिवाय लाओ सो मैं लेनेको आया हूँ इतनी बात अक्रूरजी से सुन राम कृष्ण ने आय नन्दराय से कहा—

कंस बुलाये हैं सुन तात। कही अक्रूर कका यह बात॥
गोरस मेंढ़े छेरी लेहु। धनुष यज्ञ है ताको देहु॥
सब मिल चलो साथ अपने। राजा बोले रहत न बने॥

जब ऐसे समझाय बुझायकर श्रीकृष्णचन्द्रजीने नन्दजीसेकहा तब नन्द रायजीने उसीसमय ढँडोरियेको बुलाय सारे नगर में यों कह ढौंडी फिरवाय दी, कि कल सबेरेही सब मिल मथुराको जांयगे राजाने बुलाया है इस बातके सुनने से भोर होतेही भेंट लै लै सकल ब्रजवासी आन पहुँचे और नन्दजी भी दूध दही, माखन, मेंढ़े, बकरे, भैंस ले शकट जुतवाय उनके साथ हो लिये और कृष्ण, बलदेवभी ग्वालबाल सखाओं को साथले रथ पर चढ़े।

आगे भये नन्द उपनन्द। सब पाछे हलधर गोविन्द॥

श्रीशुकदेवजी बोले हेपृथ्वीनाथ! एकाएकी श्रीकृष्णका चलना सुन सब

ब्रजकी गोपियां अति घबराय व्याकुल हो घर छोड़ हड़बड़ाय उठधाईं और कुढ़ती भगती गिरती पड़ती वहाँ आईं जहां श्रीकृष्णचन्द्रका रथ आतेही रथके चारोंओर खड़ीहो हाथ जोड़ विनती कर कहने लगीं, हमें किसलिए छोड़ते हो ब्रजनाथ ! सर्वस्व दियाहै तुम्हारे साथ साधुकी प्रीतिकभी घटती नहीं हाथकीसी रेखा सदा हाथहीमें रहती है और मूढ़की प्रीति नहीं ठहरती जैसे बालूकी भीति ऐसा क्या तुम्हारा अपराध किया है जो हमें पीठ दिए जातेहो यों श्रीकृष्णचन्द्रको सुनाय फिर गोपियां अक्रूरकी ओर देख बोलीं

यह अक्रूर क्रूर है भारी । जानी कछू न पीर हमारी ॥
जाबिन छिनसब होत अनाथ । ताहि छक्यौ लै अपने साथ ॥
कपटी क्रूर कठिन मन भयो । नाम अक्रूर वृथा किन दयौ ॥
हे अक्रूर कुटिल मति हीन । क्यों दाहत अबला आधीन ॥

ऐसे कड़ी बातें सुनाय शोच सङ्कोच तज हरिका रथ पकड़ आपस में कहने लगीं मथुराकी नारियां अतिचंचल चतुर रूपगुण भरी हैं उनसेप्रीति कर गुण और रसके बशहो वहांही रहेंगेबिहारी, तब काहेको करेंगे सुरति हमारी उन्हीं के बड़े भाग्यहैं जो प्रीतमकेसङ्गरहेंगी हमारे जपतप करनेमें ऐसी क्या चूक पड़ीकि श्रीकृष्ण बिछुड़तेहैं योंआपसमें कह फिर हरिसे कहनलगीं कि तुम्हारातो नामहै गोपीनाथ किसलिए नहीं ले चलते हमें अपने साथ।

तुमबिन छिन छिन कैसे कटै । पलक ओट सों छाती फटै ॥
हित लगाय क्यों करत बिछोह । निठुर निर्दई धरत न मोह ॥
ऐसे तहाँ आय सुन्दरी । सोचें दुख समुद्रमें परी ॥
चाहि रहीं इकटक हरि ओर । ठगी मृगीसी चन्द्र चकोर ॥
परहिं बदन ते आँसू टूट । रहीं बिथुर लट मुख पै छूट ॥

श्रीशुकदेवजी मुनि बोलेकि राजा ! उस समय गोपियोंकी तो यह दशा थी, जो मैंने कही और यशोदारानी ममताकर पुत्रकोकण्ठलगाय रोरो अति प्यारसे कहतीथीं बेटा जैदिन में तुम वहां से फिर आवो तै दिनके लिए कलेऊ लै जाओ वहां जाय किसीसे प्रीति मत कीजो बेग आ अपनी जननी को दर्शन दीजो इतनी बात सुन श्रीकृष्ण रथसे उतर सबको समझाय बुझाय मांसे बिदाहो दण्डवतकर आशीष ले फिर रथपर चढ़ चले तिसकाल

इधरसे तौ गोपियों समेत यशोदाजी अति अकुलाय रो२कृष्ण२कर पुकारती थीं,और उधर श्रीकृष्ण रथपर खड़े२पुकार२कहते जातेथेकि तुम घरजावौ, किसी बातकीचिन्ता मत करो,हम पांच चार दिनमेंही फिर कर आतेहैं ऐसे कहते२और देखते२जब रथ दूर निकल गया और धूलि आकाश तक छाई तिसमें रथकी ध्वजा भी नहीं दिखाई, तब निराशहो एक बेर तो सबकीसब नीर बिन मीनकी भाँति तड़फड़ाय मूर्छा खाय गिरीं। इधर यशोदाजी तो सब गोपियोंको ले वृन्दाबनको गईं और उधर श्रीकृष्णचन्द्र समेत सब चले२यमुनातीर आपहुँचे तहां ग्वालवालोंने जल पिया और हरिनेभी एक बड़ की छाँहमें रथखड़ाकिया इधर अक्रूरजी नहाने का विचार कर रथसे उतरे तब श्रीकृष्णचन्द्रजीने नन्दरायसे कहा कि आप सब ग्वालबालोंको ले आगे चलिये चचा अक्रूर स्नान करलें तो हमभी आमिलते हैं, यह सुन सबको ले नन्दजी आगे बढ़े और अक्रूरजी कपड़े खोल हाथ पाँव धोय आचमन कर तीर पर जाय नीरमें बैठ डुबकी ले पूजा तर्पण जप ध्यान कर फिर डुबकी मार आँखें खोल देखे तो वहां रथ समेत श्रीकृष्ण दृष्टि आये।

पुनि उन देख्यो शीश उठाय। तिहिठां बैठे हैं यदुराज॥
करे अचम्भो हिये विचारि। वे रथ ऊपर दूर मुरारि॥
बैठे दोऊ बड़ की छांह। तिन्हों को देखों जलमांह॥
बाहर भीतर भेद न लहीं। सांचो रूप कौन सो कहीं॥

महाराज! अक्रूरजी तो एकही सूरत भीतर देख सोचतेहीथे इस बीच पहिले तो श्रीकृष्णचन्द्रजीने चतुर्भुज हो शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म,धारण कर सुर, मुनि, किन्नर, गन्धर्व आदि सब भक्तों समेत जलमें दर्शन दिया और पीछे शेषशायी, तो अक्रूर देख और भी भूल रहा।

अध्याय ४१

श्रीशुकदेवजी बोले, कि महाराज! पानीमें खड़े अक्रूर को कितनी एकबेर में प्रभू का ध्यान करने से ज्ञान हुआ तो हाथ जोड़ प्रणाम कर कहने लगा, कि कर्ता तुम्हीं हो भगवन्त भक्तों के हेतु संसार में आप धरतेहो

वेष अनन्त और सुरनर मुनि तुम्हारेही अंश हैं तुम्हींसे प्रगट हो तुममें ऐसे समाते हैं जैसे जल सागरसे निकल सागरमें समाता है तुम्हारी महिमा अनूप कौन कह सके सदा रहतेहो बिराट स्वरूप,शिरस्वर्ग पृथ्वी पाँव,समुद्र पेट, नाभि आकाश बादल केश, वृक्ष रोम अग्नि मुख दशो वचन प्राण, पवन,जलवीर्य,पलक लगाना रातदिन इस रूपसे सदा बिराजते हो तुम्हें कौन पहिचान सके इस भांति स्तुति कर अक्रूरजीने प्रभूके चरणोंका ध्यान कर कहा कृपानाथ! मुझे अपने चरणों में रक्खो।

अध्याय४२

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जब श्रीकृष्णचन्द्रने नटमाया की भांति जलमें अनेक रूप दिखाय हरलिये तब अक्रूरजी ने नीर से निकल तीरपर आ हरिकोप्रणामकिया तिसकाल नन्दलालने अक्रूरजीसेपूछा काका शीतसमय जलकेबीच इतनीबेर क्योंलगी? हमेंयह अतिचिन्ताथी तुम्हारी,कि चाचाने किसलिये बाट चलनेकी सुधि बिसारी,क्या कुछ अचरज तो जाकर नहीं देखा यह समझायके कहो जो हमारे मनकी दुबिधा जाय।

सुनि अक्रूर कहै जोर हाथ। तुम सब जानत हो ब्रजनाथ॥
भलो दरश दीनों जलमांहीं। कृष्ण चरित्र अचरज नाहीं॥
मोहि भरोसो भयो तिहारो। वेग नाथ मथुरा पगु धारो॥
अबतो यहां बिलम्ब न करिये। शीघ्र चलो कारज चित धरिये॥

इतनी बातके सुनतेही हरि उठ रथपर बैठ अक्रूरके साथ चलखड़े हुए और नन्दआदि जो सब गोप ग्वाल आगये थे उन्होंने जा मथुरा के बाहर डेरे किए और कृष्ण बलदेवकी बाट देख२ अति चिंताकर अपने मन में कहने लगे कि इतनी अबेर न्हाते क्यों लगी और किस लिए अबतक हरि नहीं आए? कि इस बीच चले२ आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र भी जाय मिले उस समय हाथ जोड़ कर शिर झुकाय विनती कर अक्रूरजी बोले कि ब्रजनाथ! अब चल कर मेरा घर पवित्र कीजै और अपने भक्तोंको दर्शन सुख दीजै, इतनी बातके सुनतेही हरिने अक्रूर से कहा;

पहिले शोच कंस को देहू। तब अपनो दिखरावो गेहू।
सबकी विनती कही सुनाय। सुन अक्रूर चल्यो शिरनाय॥

चलेचले कितनी एक बेरमें रथ से उतरकर वहाँ पहुँचे जहा कंससभा किये बैठा था इनको देखते ही सिंहासन से उठनीचे आय अति हितकर मिला और बड़े आदर मान से हाथपकड़ लेजाय सिंहासन पर अपने पास बैठाय इनकी कुशल क्षेम पूछ बोला, जहाँ गये थे वहाँ की बात कहो,

सुन अक्रूर कहै समुझाय। ब्रज की महिमा कही न जाय।
कहा नन्द की करौं बड़ाई। बात तुम्हारी शीस चढ़ाई॥
राम कृष्ण दोऊ हैं आये। भेंट सबै ब्रजवासी लाये।
डेरा किये नदी के तीर। उतरे गाढ़ा भारी भीर॥

यह सुन प्रसन्नहो बोला अक्रूरजी आज तुमने हमारा बड़ा कामकिया जो रामकृष्ण को ले आये. अबघर जाय विश्राम करो, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परिक्षित से कहाकि महाराज! कंस की आज्ञा पाय अक्रूरजी तो अपने घर गये और वह यह सोचविचार करनेलगा, और जहाँ नन्द उपनन्द बैठेथे तहाँ उनसे हलधर और गोविन्दने पूँछा जो हम आपकी आज्ञा पावें तोनगर देख आवें यहसुन पहले तो नन्दरायजीने कुछ खाने की मिठाई निकालदी, उनदोनों भाईयोंने मिलकर खायली पीछे बोले अच्छा जावो पर बिलम्ब मत कीजो,इतना वचन नन्दमहरके मुखसे निकलतेही आनंदकंद दोनों भाई अपने ग्वालबाल सखाओं को साथले नगर

देखने चले आगे बढ़ देखें तो नगरके बाहर चारोंओर बनउपबन फूलरहे हैं तिसपर पक्षी बैठे अनेक२ भाँतिकी मनभावन बोलियाँ बोलतेहैं और बड़े बड़े सरोवर निर्मल जलसे भरेहैं, उनमें कमल खिलेहुए जिनपर भौरोंके झुंडकेझुंड गूँजरहे और तीरमें हंस सारसआदि पक्षी कलोलें कररहे शीतल सुगंध समीर मंदमंद बहरही, औरबड़ी बड़ी बाड़ियों वंबाड़ी पनवाड़ियाँ लगी हुईं बीच बीच वर्ण वर्णके फूलोंकीक्यारियाँ कोसोंतक फूली हुई ठौरठौर ईन्दारों बावड़ियों पर रहट परोहे चलरहे मालीसुरोंसे गाय२जल सींच रहेहैं,

यह शोभा बन उपबन की निरख हर्ष समेत मथुरापुरीमें पैठे वह पुरी कैसी है कि जिसके चहुँओर ताँबे का कोट और पक्की चुआन चौड़ी खाई, स्फटिकके चारफाटक तिनमें अष्टधाती किवाड़ कंचन खचित लगेहुए और नगर में वर्णवर्ण के रातेपीले हरे धौले पचखने सतखने मन्दिर ऊँचेऐसेकि घटासे बातें कररहे, जिसके सोने के कलश कलशियों की ज्योति बिजलीसी चमकरही ध्वजा पताका फहराय रहीं जाली झरोखों मोखोंसे धूपकी सुगंध आय रहीं द्वार पर केले के खंभ और सुवर्ण कलश सपल्लव भरे धरेहुए तोरण बंदनवार बँधी हुई घर२बाजने बाजरहे और एक ओर भाँति२ के मणिमय कंचनके मंदिर राजाके न्यारेही जग मगाय रहे तिनकी शोभा कछु वर्णी नहीं जाती ऐसीजो सुन्दरी सुहावनी मथुरापुरी तिसे श्रीकृष्ण वलदेव ग्वालबालों को साथ लिये देखते चले।

दो०—पड़ी धूम मथुरा नगर, आवत नन्द-कुमार।
सुनि धाये पुर लोग सब, गृह का काज विसार॥

और जो मथुरा की सुन्दरी। सुनत कान अति आतुर खरी॥
कहैं परस्पर बचन उचारी। आवत है बल भद्र मुरारी॥
तिन्हें अक्रूर गये हैं लैन। चलहु सखी अब देखहिं नैन॥
कोऊ खात न्हात से भजै। गुहत शीश कोऊ उठि तजै॥
कामकेलि पियते विसरावें। उलटे भूषण वसन बनावें॥
जैसे ही तैसे उठि धाई। कृष्ण दरश देखन को आई॥
लाज कान डर डरे न कोऊ। खिड़किन कोऊ अटनपर कोऊ॥
कोऊ खड़ी द्वार कोऊ ताकैं। दौरी गलियन फिरें उझाकैं॥
ऐसे जहाँ तहाँ खड़ि नारी। प्रभुहिं बतावें बाँह पसारी॥

नील बसन गोरे बलराम। पीताम्बर ओढ़े घनश्याम।
यह भानजे कंस के दोऊ। इनते असुर बचौ ना कोऊ॥
सुनतहुतीं पुरुषारथ जिनको। देखहु रूप नैन भर तिनको॥
पूरवजन्म सुकृत कछु कीना। सोविधियह दरशनफल दीना॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवमुनि बोले कि महाराज! इसी रीति से सब पुरवासी क्या स्त्री क्या पुरुष अनेक प्रकार की बात कहकह दर्शन कर मग्न होतेथे और जिस हाटबाट चौहटेमें हो सब समेत कृष्णबलराम निकलते थे, तहीं अपने अपने कोठों पर खड़े इनपर चोआ चंदन छिड़क२ आनन्दसे फूल बरसाते थे—और ये नगरकी शोभा देखदेख ग्वालबालों से कहते जाते थे भैया कोई भूलियोमत और जोकोई भूलेतो पिछले डेरोंपर जाइयो इसमें कितनी एक दूर जाय देखेंतो क्याहै कि कंस के धोबी धोये कपड़ेकी लादियां लादे मोटे पोटलिये मदपिये रँगराते कंस यशगाते नगर के बाहर से चले आतेहैं उन्हें देख श्रीकृष्णचन्द्र ने बलदेवजी से कहा कि भैया इनके सबचीर छीनलीजिये,और आपपहर ग्वालबालोंको पहराय बचेसो लुटाय दीजिये ऐसे भाईको सुनाय सबसमेत धोबियों के पास जाय हरि बोले,

हमको उजला कपड़ा देहु। राजहिं मिलि आवें फिर लेहु।
जो पहिरावन नृपसों पैहैं। तामें ते कछु तुमको देहैं॥

इतनी बातके सुनतेही उसमें जो बड़ा धोबी था सो हंसकर कहने लगा

सो०—राखौ गिरी बनाय, है आवो नृप द्वार लौं।
तब लीजो पट आय, जो चाहो सो दीजिये॥

बन बन फिरत चरावत गैया। अहिर जात कामरी चढ़ैया।
नटको भेष बनाए आये। नृप अंबर पहरन मन भाये॥
जुरि मिल चले नृपति के पास। पहिरावन लेवेकी आस॥
प्रथम आस जीवन की जोऊ। धावन चहत अबहिं पुनि सोऊ॥

यह बात धोबी की सुनकर हरिने फिर मुसकराय कहा कि हमतो सूधी चालसे माँगते हैं तुम उलटी क्यों समझते हो कपड़े देनेसे कुछ तुम्हारा न बिगड़ेगा, वरन यश लाभ होगा,यह वचन सुन रजक झुंझलाय कर बोला कि राजा के बागे पहरने को मुंह तो देख, मेरे आगे से जा नहीं तो अभी मार डालता हूं इतनी बातके सुनतेही क्रोधकर श्रीकृष्णचन्द्रने तिरछाकर

एक हाथ ऐसा मारा कि कि उसका शिर भुट्टासा उड़ गया तब जितने उसके साथी टहलुये थे सबके सब छोटे मोटे लादियाँ छोड़ अपना जीव ले भागे और कंस के पास जा पुकारे यहाँ श्रीकृष्णचन्द्रने सब कपड़े ले लिये और आप पहन भाई को पहराय ग्वालबालों को बाँट बचे सो लुटाय दिये, तिस समय ग्वालबाल अमित प्रसन्न हो लगे उलटे पुलटे वस्त्र पहरने,

दो०—कटिकस पग पहरें झगा, सुथन मेलै बाँह ।
घसत भेद जाने नहीं, हँसत 'कृष्ण मन मांह ॥

जो वहाँ से आगे बढ़े तो एक सूजीने आय दंडवतकर खड़ेहो, कर जोड़ के कहा महाराज ! मैं कहने को तो कंसका सेवक कहलाता हूँ पर मनसे सदा आपही का गुण गाता हूँ दयाकर कहिये तो बागे पहराऊँ जिससे तुम्हारा दास कहाऊं, इतनी बात उसके मुखसे निकलते ही अन्त-र्यामी श्रीकृष्णचन्द्रने उसे अपना भक्त जान निकट बुलाय के कहा तू भले समय आया पहरायदे, तब तो उसने झटपटही खोलउधेड़कतर छांट सीकर ठीक ठीक बनाय चुनचुन रामकृष्ण समेत सबको बागे पहराय दिये उसकाल उसको भक्ति दे साथ ले आगे चले,

तहाँ सुदामा माली आयो । आदर कर अपने घर लायो ।
सबही को माला पहिराई । माली के घर भई बधाई ॥

अध्याय ४६

श्रीशुकदेवजी बोले कि— पृथ्वी नाथ ! माली की लग्न देख मग्न हो श्रीकृष्णचन्द्र उसे भक्ति पदार्थ दे वहाँ से आगे जाय देखें तो सोहीं गली में एक कुबड़ी केशर चन्दन से कटोरियां भर थाली के बीचधर हाथ में लिये खड़ी है, उससे हरिने पूछा तू कौन है ? और यह कहाँ लेचली . वह बोली दीनदयाल मैं कंस की दासी हूँ मेरा नाम कुबजा है नित चंदन घिस कंस को लगाती हूँ और मनसे तुम्हारे ही गुण गाती हूँ तिसीके प्रताप से आज आपका दर्शन पाय जन्म स्वार्थकिया, और नयनों का फललिया अब दासी का मनोरथ यह है कि जो प्रभु की आज्ञा पाऊँ तो चंदन अपने हाथों चढ़ाऊं उसकी अति भक्ति देख कहा जो तेरी इसमें प्रसन्नता है तो लगाव. इतना

वचन सुनते ही कुब्जा बड़े रावचाव से चित्त लगाय जब रामकृष्ण को चन्दनचरचा तब श्रीकृष्णचन्द्रने उनके मनकी लागदेख दयाकर पाँवधर दो अंगली ठोड़ी के तले लगाय उचकाय उसे सीधी किया हरीका हाथ लगातेही वह महासुन्दरी हुई और निपट विनतीकर प्रभुसे कहने लगी कि कृपानाथ जो आपने कृपाकर इस दासीकी देहसूधीकी तो दयाकर चलके घर पवित्रकीजे और विश्रामसे दासीकोसुख दीजे यह सुन हरिउसका हाथ पकड़ मुसकरायके कहने लगे,

तैं श्रम दूर हमारो कियौ, तिलक शीतल चन्दन दियौ। रूपशील गुण सुन्दर नीकी, तो ंं प्रीति निरन्तर जी की। आय मिलोंगो कंसहिं मारी, यों कह आगे चले मुरारी॥

और कुबजा अपने घर जाय केशर चन्दन चौक पुराय हरिके मिलने की आश मनमें रख मङ्गलाचार करने लगी,

आवें तहाँ मथुरा की नारी, करें अचम्भौ कहैं निहारी। धन २ कुबजा तेरा भाग, जाको विधना दियौ सुहाग। ऐसो कहा कठिन तप कियौ, गोपीनाथ भेंट भुज लियौ। हम नीके नहिं देखे हरि, तोकों मिले प्रीति अति करी। ऐसे तहाँ कहत सब नारी, मथुरा देखत फिरत मुरारी॥

इस बीच नगर देखते २ सब. समेत प्रभु धनुष पौरपर जा पहुँचे इन्हें अपने रंगराते माते आते देखतेही पौरिये रिसायके बोले इधर किधरचले

आतेहो गँवार दूर खड़े रहो यह है राजद्वार,द्वारपालों की बात सुनी अन सुनीकर हरि सब समेत दरीते वहाँ चलेगये जहाँ तीर ताड़ लम्बा अतिमोटा भारी महादेव का धनुष धराथा जातेही झट उठायचढ़ाय सहज स्वभावही खेंच यों तोड़डाला कि ज्यों हाथी गाँड़ा तोड़ता है, इसमें सब रखवारे जो कंसके बिठाये धनुषकी चौकीदेतेथे सो चढ़आये प्रभुने उन्हेंभी मार गिराया तिस समय पुरवासीतो यह चरित्र देख विचारकर निःशंकहो आपस में यों कहने लगे कि देखो राजाने घर बैठे अपनी मृत्यु आप बुलाई इन दोनों भाइयोंके हाथोंसे अबजीता न बचेगा और धनुष टूटनेका अति शब्द सुन कंस भय खाय अपने लोगोंसे पूछने लगाकि यहमहाशब्द काहेका हुआ? इस बीच कितने एक लोग राजाके जोखड़े दूरसे देखतेथे वे मूड़ उघार यों जा पुकारे कि महाराजकी दुहाई रामकृष्णने आय नगरमें बड़ी धूममचाई शिवका धनुष तोड़ सब रखवालोंको मार डाला इतनी बातके सुनतेही कंस ने बहुत से योधाओं को बुलायके कहा तुम इनके साथ जाओ और कृष्ण बलदेवको छलबल कर अभी मार कर आवो इतना बचन कंस के मुख से निकलतेही ये अपने अस्त्र शस्त्र ले वहाँगये जहाँ दोनों भाई खड़ेथे इन्होंने उन्हें ज्यों ललकारा त्यों उन्होंने इनको भी आय मारडाला जब हरिने देखा कि अब यहाँ कंसका सेवक कोई नहीं रहा तब बलरामजीसे कहाकि भाई हमें आये बड़ी देर भई अब डेरे पर चलना चाहिये क्योंकि बाबा नन्द हमारी बाट देख २ भावना करते होंयगे यों सब ग्वालबालोंको साथले प्रभु बलराम समेत चलकर वहाँ आये जहाँ परडेरे पड़े थे, आतेही नन्द महर से यों कहा कि पिता हम नगर में जाय भला कुतूहल देख आये और गोप ग्वालों ने अपने बागे दिखलाये।

तब लखि नन्द कहै समुझाय, कान्ह तुम्हारी टेव न जाय। ब्रज बन नहीं हमारा गाँव, यह है कंसराय को ठाँव। यहँ जनि कछू उपद्रव करौ, मेरी सीख पूत मन धरौ।

जब नन्दरायजी ऐसे समझाय चुकेतब नन्दलाल बड़े लाड़से बोलेकि पिता भूख लगीहै जो हमारी माताने खानेको साथ करदियाहै सो दीजिये

इतनी बातके सुनतेही उन्होंने जो पदार्थ खानेको साथ लायेथे सो निकाल दिया कृष्ण बलदेवने ले ग्वालबालों के साथ मिलकर खाय लिया। इतनी कथा कह श्रीशुकदेवमुनि बोलें महाराज इधर तो ये आय परमानन्द से ब्यालू कर सोयें और उधर श्रीकृष्णकी बात सुन कंसके चित्तमें अति चिन्ता हुई कि उठते बैठते चैन न था खड़े २ मनही मन कुढ़ताथा अपनी पीर किसी न कहता था, कहा है कि—

दो०—ज्यों कांठहि घुन खातहै,कोऊ न जानैं पीर। त्यों चिंता चित्तमें भई, बुधि बल घटतशरीर।

निदान अति घबराय मन्दिर में जाय सेज पर सोया उसे मारे डर के नींद न आई।

तीन पहर निशि जागत गई, लागी पलक नींद चण भई। तब सपनों देख्यो मनमाँह, फिरे शीश बिन धर की छाँह। कबहूँ नगन रेतमें नहाय, धावै गदहा चढ़ विष खाय। बसै मसान भूत संग लिये, रक्त फूलकी माला हिये। बरत रूख देखे चहुँओर, तिनपर बैठे बालकिशोर॥

महाराज जब कंसने ऐसा स्वप्न देखा तबतौ वह अति ब्याकुल हो चौंकपड़ा और सोच विचार करता बाहर आय व अपने मंत्रियोंको बुलाय बोला तुम अभी रङ्गभूमिको झड़वाय छिड़कवाय सँवारो और नन्द उपनंद समेत सब ब्रजवासियों को और बसुदेव आदि यदुवंशियों को रङ्गभूमि में बुलाय बिठाओ और जो सब देश २ के राजा आये तिन्हें भी, इतने में मैं भी आता हूँ उसी आज्ञा पाय मंत्री रङ्गभूमि में आये उसे झड़वाय छिड़कवाय तहाँ पाटम्बर बिछवाय ध्वजापताका तोरण बन्दनवार बँधवाय अनेक२ भाँति के बाजे बजाय सबको बुलाय भेजा, वे आये, और अपने २ मंच पर जाय बैठे इस बीच राजा कंस भी अति अभिमान भरा, अपने मचान पर आय बैठा उस काल देवता विमानों में बैठ आकाश में देखने लगे,

इति श्रीलल्लूलाल कृते प्रेमसागरे मधुपुरीप्रवेशो नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्याय ॥४३॥

अध्याय ४४

अथ कुबलिया बध

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज! भोरही जबनन्द उपनन्द आदि सब बड़े२ गोप रंगभूमिकी सभामें गये,तब श्रीकृष्णचन्द्रजीने बलदेवजीसे कहा कि भाई सब गोप आगे गये, अब बिलम्ब न करिये शीघ्र ग्वाल बाल सखाओं को साथले रङ्गभूमि देखने चलिये, इतनी बातके सुनतेही बलराम

जी उठ खड़े हुए और सब ग्वालबाल सखाओं से कहा कि भाइयो ? चलो रङ्गभूमिकी रचना देख आवें,यहवचन सुनतेही तुर्त सब सङ्ग होलिये निदान श्रीकृष्णचन्द्र बलराम नटवर वेषकिये ग्वालबाल सखाओंको साथ लिये चले रङ्गभूमि की पौरपर आ खड़े हुए जहाँ दश सहस्रहाथियों का बलवाला बड़ा मतवाला गज कुबलिया झूमता था।

देख मतंग द्वार मतवारो, गज पालहिं बलराम पुकारो। सुनो महावत बात हमारी, लेहु द्वारते गज तुम टारी। जानदेहु हमको नृप पास, नातर ह्वै है गज को नास। कहे देत नहिं दोष हमारो,मतजानो हरिको तुम बारो।

ये त्रिभुवनपतिहैं दुष्टों को मार भूमिका भार उतारनेको आये हैं यह सुन महावत क्रोधकर बोला मैं जानता हूँ गौ चरायके त्रिभुवनपति भये इसीसे यहां आय बड़े शूरवीरोंकी भांति खड़ेहैं धनुषका तोड़ना न समझियो मेरा हाथी दश सहस्र हाथियोंका बल रखताहै जबतक इससे न लड़ोगे तबतक भीतर न जाने पावेंगे, तुमनेतो बहुत बली मारे हैं पर आज इसके हाथ से बचोगे तो मैं जानूंगा कि तुम बड़े बली हो।

दोहा—तबही कोप हलधर कह्यो,सुनरे मूढ़ कुजात। गजसमेत पटकों अबही मुखसंभारि कहु बात।
सो०—नेक न लगि है बार,हाथी मरिजैहै अबहि। तासों कहत पुकार,अजहु मान मेरो कह्यो॥

इतनी बातके सुनतेही झुँझलाकर गजपालने गज पेला ज्यों वह बलदेव जी पर टूटा त्यों उन्होंने हाथ घुमाय एक थपेड़ा ऐसा मारा, कि वह सूँड़ सिकोड़ चिंघाड़मार पीछे हटा यह चरित्र देख कंस के बड़े२ योद्धा जो खड़े देखतेथे, सो अपने जियों से हारमान मनहीं मन कहने लगे कि इन बलवानों से कौन जीत सकेगा ? और महावत भी हाथी को पीछे भगा जान अतिभय मान जीमें विचार करने लगा कि जो ये बालक न मारे जाँय तो कंस भी मुझे जीता न छोड़ेगा यों सोच समझ उसने फिर अंकुश मार हाथी को तत्ता किया, और इन दोनों भाइयों पर हुला दिया उसने आते ही सूंड़ से हरिको पकड़ खुनसायकर ज्यों दांतों से दबाया त्यों प्रभु सूक्ष्म शरीर बनाय दाँतों के बीच में रहे।

दोहा—डरपि उठे तिहिकाल सब, सुर मुनि पुर नर नारि।
दुहूँदशन विच हो कढ़े, बल निधि प्रभु दे तारि॥
सोरठा—उठे गजहि के हाथ, बहुरि ख्याल हो हांक दे।
तुरत भये सनाथ, देखि चरित बल श्याम के॥
हाँक सुनत अति कोप बढ़ायो। झटकि शुंड बहुरो गज धायो।
रहे उदर तर दबकि मुरारी। भजे जानि गज रह्यो निहारी।
पाछे प्रगट फेर हरि टेर। बलदाऊ आगे ते घेरो॥
लगे गजहिं खिजावन दोऊ। भौंचकि रहे देख सब कोऊ॥

महाराज! उसे कभी बलराम सूंड़पकड़ खेंचतेथे, कभी श्याम पूंछ पकड़ और वह उन्हें पकड़ने को आता था तब ये अलग होजाते थे कितनी

एक बेरतक उससे ऐसे खेलतेरहे जैसे बछड़ोंके साथ बालकपन में खेलते थे, निदान हरिने पूंछ पकड़ फिराय उसे दे पटका और मारेघूँसोंके मारडाला दांत उखाड़लिये, तब उसकेमुँहसे लोहू नदी की भांति बह निकला हाथीके मरतेही महावत ललकार कर आया प्रभुने उसे हाथीके पांवतले झट मार गिराया, और हंसते२दोनों भाई नटवर वेष किये एक२दांत हाथोंमें लिये रंग भूमिके बीच जाखड़ेहुए उसकालनंदलालको जिनजिनने जिसजिस भाव से देखा बस उसको उसी भावसे दृष्टि आये मल्लोंने मल्लमाना, राजाओं ने राजा जाना देवताओंने अपना प्रभु बुझाया, ग्वालोंने सखामाना नन्द उपनन्दनेबालक समझा और पुरकी युवतियोंने रूपनिधान और कंसादिक राक्षसोंने कालसमान देखा, महाराज। इनको निहारतेही कंस अति भयमान हो पुकारा अरे मल्लो इन्हें पछाड़मारो, कै मेरे आगेसे टालो, इतनी बातजो कंस के मुंहसे निकलीतो सब मल्ल अति शीघ्रतासे, शस्त्र संगलिये वर्ण वर्ण के वेषकिये ताल ठोक२ भिड़नेको कृष्णबलरामके चारोंओर घिरआये जैसे वे आये तैसे ये सँभल खड़ेभये तब उनमेंसे इनकी ओर देख चतुराईकर चाणूर बोला, सुनो हमारे राजा कुछ उदासहैं इससे जीव हसानेको तुम्हारा युद्धदेखा चाहतेहैं क्योंकि तुमने बनमें रह सब बिद्या सीखीहै और किसी बातका मनमें सोच न कीजै, हमारे साथ मल्लयुद्ध कर अपने राजाको सुख दीजै श्रीकृष्ण बोले राजाजीने बड़ी दयाकर हमें बुलायाहैआज, हमसे क्या सरेगा इनका काज, तुम अति बली गुणवान, हम बालक अनजान, तुमसे हाथ कैसे मिलावें कहाहैब्याहबैरप्रीति समानसेकीजै, पर राजाजीसे कुछ हमारावश नहीं चलता इसमें तुम्हारा कहा मानतेहैं, हमें बचालीजो बलकर पटक नदीजो अबहमें तुम्हें उचितहै जिससे धर्मरहे सो कीजै, मिलकर अपने राजाको सुखदीजै

सुनि चाणूर कहै भयखाय। तुम्हरीं गति जानी नहिं जाय।
तुम बालक मानुष नहीं दोऊ। कीन्हें कपट बलीहोकोऊ॥
खेलत धनुष खण्ड द्वै करो। मारो तुरत कुबलिया तरो॥
तुमसे लरे हानि नहिं होय। ये बातें जाने सब कोय॥

अध्याय ४५

श्रीशुकदेवजी बोले कि-पृथ्वीनाथ! ऐसे कितनी एकबात कर ताल ठोंक चाणूर तो श्रीकृष्ण के सोहीं हुआ और मुष्टिक बलरामजी से आय भिड़ा इनसे उनसे महायुद्ध होने लगा,.

दोहा—शिरसों शिर भुजसों भुजा, दृष्टि दृष्टिसों जोर। चरण चरण गहिझपटकै लपट२ झकिझोर।

उसकाल सब लोग इन्हें देख२ आपसमें कहनेलगे कि भाइयोइस सभामें अति अनीति होतीहै देखो कहाँ ये बालक रूपनिधान कहाँये सबमल्ल वज्र समान, जो बरजें तो कंस रिसाय न बरजें तो धर्म नसाय, इससे यहाँ

रहना उचित नहीं क्योंकि हमारा कुछ वश नहींचलता महाराज इधर तो ये सब लोग यों कहते थे और उधर श्रीकृष्ण बलराम मल्लों से मल्लयुद्ध करते थे निदान इनदोनों भाईयोंने मल्लों को पछाड़ मारा उनके मरतेही सबमल्ल आय टूटे प्रभुने पलभरमें तिन्हें भी मार गिराया तिससमय हरि भक्त तो प्रसन्नहो बाजा बजा२ जयजयकार करने लगे और देवता आकाश से अपने विमानों में बैठ श्रीकृष्ण यशगाय फूल बरसाने लगे और कंस अतिदुःख पाय व्याकुल हो रिसाय अपने लोगों से कहने लगा अरे! बाजा क्यों बजाते हो? तुम्हें कृष्णकी जीत भातीहै यों कहबोला ये दोनोंबालक बड़े चंचल हैं इन्हें पकड़ बाँध बाहर लेजाओ और देवकी समेत

वसुदेव कपटी को पकड़ लावो पहले उन्हें मार पीछे इनदोनों कोभी मार डालो इतना वचन कंसके मुखसे निकलतेही भक्तों के हितकारी मुरारी सब असुरों को क्षणभर में मार उछल के वहां जाय चढ़े जहाँ अति ऊंचे मंचपर झीलम पहने टोप दिये फरी खाँड़ा लिये बड़े अभिमानसे कंस बैठा था वह इनको काल समान निकट देखते ही भयखाय उठखड़ा हुआ, और थरथर काँपने लगा, मनसे चाहाकि भागूं पर मारे लाजके भाग न सका फरी खाँड़े संभाल लगा चोटकरने, उसकाल नन्दलाल अपनी घात लगाये उसकी चोट बचातेथे, और सुरनर मुनि गंधर्व यह महायुद्ध देख भयमान हो यों पुकारते थे हे नाथ! इस दुष्ट को बेग मारो कितनी एक देरतक मंच पर युद्ध होता रहा, निदान प्रभु ने सबको दुःखित जान उसके केश पकड़ मञ्चसे नीचे पटका, तब सब सभा के लोग पुकारे श्रीकृष्णचन्द्र ने कंस को मारा यह शब्द सुन सुर, नर, मुनि सबको अति आनन्द हुआ।

दोहा—करि अस्तुति पुनि पुनि हरष, बरष सुमन सुरवृन्द। मुदित बजावत दुन्दुभी, कहिजय२ नँदनंद

सोरठा—मथुरापुर नर नारि, अति प्रफुलित सबकोहियो।
मनहुं कुमुद वनचारि, विकसित हरि शशि मुख निरखि॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहाकि धर्मावतार कंसके मरते ही जो बलवान आठ भाई उसके थे सो लड़ने को चढ़ आये प्रभुने उन्हें भी मारगिराया जब हरि ने देखा कि अब यहाँ राक्षस कोई नही रहा तब कंस की लोथ को घसीट यमुनातीर पर ले आये और दोनों भाइयोंने बैठ विश्राम लिया तिसो दिनसे उस ठौरका नाम विश्रामघाट हुआ आगे कंसकी रानियाँ देवरानियों समेत अति व्याकुल हो रोती पीटती वहाँ आईं जहां यमुनाकेतीर दोनों वीर मृतक लिये बैठेथे और लगीं अपने पतिका मुख निरख सुख सुमिर गुण गाय गाय व्याकुलहो पछाड़ खाय खाय गिरने कि इस बीच करुणा निधान कान्ह करुणाकर उनके निकट जाय बोले।

मामी सुनहु शोक नहिं कीजै। मामाजी को पानी दीजै।
सदा न कोऊ जीवत रहै। झूंठोसो जो अपनी कहै॥

मातु पिता सुत बंधु न कोई। जन्म मरण फिरही फिरहोई।
जियहिं सम्बन्ध जबलौं रहै। तौलौंही तासौं सुख लहै॥

महाराज! जब श्रीकृष्णचन्द्रने रानियों को ऐसा समझायातब उन्होंने वहांसे उठ धीरज धर यमुनातीर पै आ पतिको पानी दिया और आप प्रभुने अपने हाथ कंसको आगदे उसकी गतिकी।

अध्याय ४६

श्रीशुकदेवमुनि बोलेकि राजाकी रानियां तो धौरानियां समेत वहाँसे नहाय धोय रोय राजमंदिर को गईं और कृष्ण बलराम बसुदेव देवकीके पास आय उनके हाथ पाँवकी हथकड़ियाँ बेड़ियां काट दण्डवतकर

हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हुए तिस समय प्रभुका रूप देख बसुदेवदेवकी को ज्ञान हुआ तो उन्होंने अपने जीमें निश्चय करजाना कि येदोनों विधाता हैं असुरों को मार भूमिका भार उतारने को संसार में अवतार ले आये हैं, जब बसुदेव देवकीने यों जीमें जाना तब अंतर्यामी हरि ने अपनी माया फैलादी, इसने उनकी वह मति हरली, फिरतो उन्होंने पुत्रकर समझा कि इतनेमें श्रीकृष्णचन्द्र अति दीनताकर बोले—इसमें हमारा कुछ अपराध नहीं क्योंकि जबसे आप हमें गोकुलमें नन्दके यहां रखआये तबसे परवश थे हमारा वश न था पर मनमें सदा यहआताथा कि जिसके गर्भमें दशमहीने

रह जन्म लिया उसे नेकभी कुछ सुख न दिया न हमहीने माता पिता का सुखदेखा वृथा जन्म परायेयहां खोया तिन्होंने हमारे लिये अति विपत्तिसही हमसे कुछ उनकी सेवा भई नहीं, संसारमें सामर्थी बेटेहैं जो बापकी सेवा करते हैं हम उनके ऋणी रहे टहल न करसके पृथ्वीनाथ जब श्रीकृष्णजीने अपने मनका भेद यों सुनाया तब उन्होंने अतिआनन्दकर उन दोनोंको हितकर कंठ लगाया और सुखमान पिछला दुःख सब गंवाया, ऐसे माता पिता को सुखदे दोनोंभाई वहांसे चले चले उग्रसेनके पासआये, और, हाथ जोड़ बोले

नाना जू अब कीजै राज। शुभ नक्षत्र नीके दिन आज॥

इतनी बात हरिके मुख से निकलते ही राजा उग्रसेन उठकर आये श्रीकृष्णचन्द्र के पांवों पर गिर कहने लगे कि कृपानाथ! मेरी विनती सुन लीजिये जैसे आपने सब असुरोंसमेत कंस महादुष्टको मारभक्तोंको सुख दिया, तैसेही सिंहासन पर बैठ अब मधुपुरी का राज्यकर प्रजा पालन कीजिए प्रभु बोले, महाराज! यदुवंशियों को राज्यका अधिकार नहीं इस बातकोसब कोई जानते हैं जब राजा ययाति बूढ़े हुए तब अपने पुत्र यदुको उन्होंने बुला कर कहा कि अपनी तरुण अवस्था मुझेदे और मेरा बुढ़ापा तूले यह सुन उसने अपने जी में विचाराकि जोमैं पिताको युवा अवस्था दूंगा तो तरुण हो भोग करेगा इसमें मुझे पाप होगा इसमे नहीं करना ही भलाहै यों सोच समझके उसने कहाकि पिता! यहतो मुझसे नहीं हो सकेगा इतनी बात के सुनतेहीराजा ययातिने क्रोधकर यदुको शापदिया कि तेरे वंशमें राजा कोई न होगा, इसबीच पुरुनाम उनका छोटा बेटा सन्मुख आ हाथ जोड़ बोला कि पिता! अपनी वृद्ध अवस्था मुझेदो और मेरी तरुणाई तुमलो यह देह किसी कामकी नहीं. जो आपके काम आवे तो इससे उत्तम क्या है? जब पुरु ने यों कहा तब ययाति प्रसन्न हो अपनी वृद्ध अवस्थादे उसकी युवावस्थाले बोला तेरे कुलमें राज्यगद्दी रहेगी इससे नानाजी हम यदुवंशी हैं हमें राज्य करना उचित नहीं,

सो०—करो बैठकर राज, दूर करहु संदेह सब। हम करि हैं सब काज, जो आयुस देहौ हमें॥

चौ०—जो न मानिहै आन तुम्हारी। ताहि दण्ड करिहैं हम भारी॥
और कछू चित शोक न कीजे। नीति सहित परजा सुख दीजे॥
यादव जिते कंस के त्रास। नगर छांड़िके गए प्रवास॥
तिनको अब कर जोर मंगावो। सुखदे मथुरा मांझ बसावो॥
विप्र धेनु सुर पूजन कीजै। इनकी रक्षामें चित दीजै॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवमुनि बोले, कि धर्मावतार! महाराजाधिराज भक्तहितकारी श्रीकृष्णचन्द्र ने उग्रसेन को अपना भक्त जान ऐसे समझाय सिंहासन पर बिठाय राजतिलक किया और छत्र फिरवाय दोनों भाइयों ने अपने हाथोंमें चमर लिया उसकाल सब नगर के वासी अति आनन्द में मगन हो धन्य धन्य कहने कहने लगे और देवता फूल बरसाने लगे महाराज! उग्रसेन को राजपाट पर बिठाय दोनों भाई बहुत से वस्त्र आभूषण अपने साथ लिवाय वहाँसे चलेचले नन्दरायजीके पास आये और सन्मुख हाथ जोड़ खड़ेहो अति दीनता कर बोले हम तुम्हारी क्या बड़ाई करें जो सहस्र जीभें होंय तोभी तुम्हारे गुणका बखान हमसे नहो सकेगा तुमने हमें अति प्रीतिकर अपने पुत्रकी भाँति पाला सब लाड़ प्यार किया यशोदा मैया भी बड़ा स्नेहकरती अपनाहित हमही पै रखती, सदा निज पुत्र समान जाना कभी मन से भी हमें पराया कर न माना ऐसे कह फिर श्रीकृष्णचन्द्र बोले हेपिता! तुम यह बात सुनकर कुछ बुरामत मानो हम अपने मनकी बात कहते हैं कि माता पिता तो तुम्हें कहेंगे पर अब कुछ दिन मथुरामें रहेंगे अपने जाति भाइयों को देख यदुकुल की उत्पत्ति सुनेंगे, और अपनी मातासे मिल उन्हें सुख देंगे, क्योंकि उन्होंने हमारे लिये बड़ादुःख सहा है जो हमें तुम्हारे यहां न पहुँचा आते वे दुःख न पाते, इतना कह वस्त्र आभूषण नन्द महर के आगे धर प्रभुने निरमोही हो कहा,

मैया सों पालागन कहियो। हममें प्रेम करे तुम रहियो॥

इतनी बात श्रीकृष्ण के मुंहसे निकलते ही नन्दराय तो अति उदास होने लगे लम्बी२ श्वास लेने और ग्वालबाल विचार कर मनहीं मन यों कहने लगे कि यह क्या अचम्भे की बात कहते हैं इससे ऐसा समझमें आताहैकि

अब ये झटपट जाया चाहते हैं नहीं तो ऐसे निठुर वचन न कहते महाराज निदान उनमेंसे सुदामानामसखा बोला भैया ! कन्हैया ! अब मथुरामें तेरा क्या काम है ? जो निठराईकर पिताको छोड़ यहां रहता है, भला किया कंस को मारा, सब कामसंवारा, अब नन्दकेसाथ होलीजिये और वृन्दाबनमें चल राज्यकीजिये, यहाँ का राज्य देख मनको मत ललचावो, वहाँ का सा सुख न पावोगे सुनो राज्य देख मूरखभूलते हैं और हाथी घोडे देख फूलते हैं तुम वृन्दाबन छोड़ कहीं मत रहो वहाँ सदा बसंतऋतु रहती है सघन बन और यमुना की शोभा मनसे कभी नहीं बिसरती भाई ! जो यह सुख छोड़ हमाराकहा न मान, माता पिताकी माया तज, यहाँ रहोगे तो तुम्हारी इसमें क्या बड़ाई होगी उग्रसेन की सेवा करोगे और रात दिन चिन्ता में रहोगे जिसे तुमने राज्य दिया उसीके आधीन होना होगा यह अपमान कैसे सहा जायगा इससे उत्तम यही हैकि नन्दरायको दुःख न दीजे उसके साथ होलीजे।

व्रज बन नदी बिहार विचारो। गोपन को मनते न बिसारो ॥
नहीं छांड़िहैं हम व्रजनाथ। चलिहैं सबै तिहारे साथ ॥

इतनी कथाकह श्रीशुकदेवमुनि ने राजापरीक्षितसे कहाकि महाराज ऐसे कितनी एक बातें कह दशबीश सखा श्रीकृष्ण बलरामजीके साथ रहे और उन्होंने नन्दरायसे बुझाकरकहा आप सबको ले निःसन्देह आगे बढ़िये, पीछे से हमभी इन्हें साथ लिये चले आते हैं, इतनी बात के सुनते ही

सो०—व्याकुल सबै अहीर, मानहु पन्नग के डसे।
हरि मुख लखत अधीर, ठाढ़े काढ़े चित्र से॥

उस समय बलदेवजी नन्दरायको अति दुखित देख समझाने लगे कि पिता ! तुम इतना दुख क्यों पाते हो, थोड़े एक दिनमें यहां का काजकर हम भी आते हैं आपको आगे इसलिये विदा करते हैं कि माता हमारी अकेली व्याकुल होती होगी तुम्हारे गयेसे उन्हें कुछ धीरज होगा नन्दजी बोलेकि बेटा एकबार मेरे साथ चलो फिर मिलकर चले आइयो।

दोहा—ऐसे कह अति विकल हो, रहे नन्द गहि पाय।
भई क्षीणद्युतिमन्दगति, नैनन जल रही छाय॥

महाराज ! जब माया रहित श्रीकृष्णचन्द्रजीने ग्वालबालों समेत नन्द महर को महा ब्याकुल देखा तब मनमें विचारा कि ये बिछुड़ेंगे तो जीते न बचेंगे; त्योंही उन्होंने अपनी उस माया को छोड़ी जिसने सारे संसारको भुला रक्खा है उसने आतेही नंदजी को सब समेत अज्ञान किया,फिर प्रभु बोले पिता तुम इतना क्यों पछताते हो ? पहले यही विचारो कि मथुरा और वृन्दावनका अंतर ही क्या है ? तुमसे हम कहीं दूर तो नहीं जाते जो इतना दुख पाते हो वृन्दावनके लोग दुखी होंगे, इसलिये तुम्हें आगे भेजते हैं, जब ऐसे प्रभुने नंदमहर को समझाया तब ये धीरज धर हाथ जोड़ बोले, प्रभु जो तुम्हारेही जीमें यों आया तो मेरा क्या वश है ! जाताहूँ, तुम्हारा कहा टाल नहीं सकता इतना वचन नंदजी के मुख से निकलते ही हरिने सब ग्वालबालों समेत नन्दरायको तो वृन्दावनको बिदा किया, और आप कई एक सखाओं समेत दोनों भाई रहे उसकाल नन्द सहित गोप ग्वाल—

चले सकल मग सोचत भारी। हारे सर्वस मनहुं जुआरी ॥
काहू सुधि काहू सुधि नाहीं। लटपट चरणपरत मगमाहीं ॥
जात वृन्दावन देखत मधुवन। विरहविथा बाढ़ी व्याकुल तन ॥

इस रीतिसे ज्यों त्योंकर वृन्दाबन पहुँचे इनका आना सुनतेही यशोदा रानी अकुलाकर दौड़ीआई और रामकृष्णको न देख महाब्याकुलहो नन्दजी से कहने लगी—

कहो कंत सुत कहाँ गंवाये। वसन आभूषण लीन्हे आये ॥
कंचन फेंक कांच घर राख्यो। अमृत छोड़ि मूढ़ विष चाख्यो ॥
पारस पाय अन्धजी डारे। फिर गुण सुनहि कपारहि मारे ॥

ऐसे तुमनेभी पुत्र गँवाये, और वसन आभूषण उनके पलटे ले आये अब उन बिन धन क्या करोगे, हे मूरखकंत जिनके पलक ओट भयेछाती फटे उन बिन निशि दिन कैसे कटैं जब उन्होंने तुमसे बिछुड़नेको कहा तब तुम्हारा हिया कैसे रहा इतनी बात सुन नन्दजी ने बड़ा दुख पाया और नीचा शिरकर यहवचन सुनाया सचकहूँ ये वस्त्र अलंकार कृष्णनेदिये

पर मुझे यह सुध नहीं किसने लिये और मैं कृष्णकी बातक्या कहूँ सुनकर तू भी दुख पावेगी ।

कंसमार मोपै फिर आये,प्रीति हरनकहि वचन सुनाये। वसुदेवके पुत्र वे भये,कर मनुहार हमारीगये।
हौंतबमहिर अचम्भेरह्यो,पोषनभरनहमारोकह्यो ।अबजनि महरिहरिसुत कहिए,ईश्वरजानि भजन कररहिए

उसे तो हमने पहलेही नारायण जानाथा पर मायावश पुत्रकर माना महाराज जब नन्दरायजीने सब २ बात श्रीकृष्णकी कह२ सुनाई तिससमय मायावशहो यशोदारानी कभी तो प्रभुकोअपना पुत्रजान मनहींमन पछताय व्याकुल हो २ रोतींथीं औरकभी ज्ञानकर ईश्वर जान उनका ध्यानधर गुण गाय २ मनका खेद खोतीं थीं और इसी रीति से सब वृन्दावन वासी क्या स्त्री पुरुष हरिके प्रेम रंगराते अनेक २ प्रकारकी बातें करते थे सो मेरी सामर्थ्य नहीं जो मैं वर्णन करूँ इससे अब मथुराकी लीला कहताहूँ तुम चित्तदे सुनो कि जब हलधर और गोविन्द नंदरायको बिदाकर बसुदेव देवकी के पासआये तब उन्होंने इन्हें देख दुखभुलाय ऐसे सुखमाना कि जैसेतपी तपकर अपनेतपका फलपाय सुखमाने आगे बसुदेवजीने देवकीजीसे कहाकि कृष्ण बलदेव पराये यहाँ रहे इन्होंने उनके साथ खायापीया है और अपनी ज्ञातिका व्यौहार भी नहीं जानते इससे, अब उचित है कि पुरोहित को बुलाय पूछें जो वह कहे सो करें, देवकी बोली बहुत अच्छा तब बसुदेवजी ने अपने कुल पूज्य गर्गमुनिजी को बुलाय भेजा, वे आये उनसे उन्होंने अपने मनका संदेह सब कहके पूछा कि महाराज ! अब हमें क्या करना उचित है ? सोकृपाकर कहिये,गर्गमुनि बोले पहले सबजाति भाइयोंको नौत बुलाइये पीछे जात कर्मकर रामकृष्णको जनेऊ दीजै इतना वचन पुरोहित के मुख से निकलते ही बसुदेवजीने नगरमें नौता भेजा सब ब्राह्मण और यदुवंशियों को नौत बुलाया, वे आये तिन्हें अति आदर मानकर बिठाया उसकाल पहले तो बसुदेवजीने विधिसे जात कर्मकर जन्म पवित्रिका लिखवाय दशसहस्त्र गौ सोनेके सींग ताँबेकी पीठ रूपेके खुर समेत पाटम्बर

उढ़ाय ब्राह्मणों को दीं, जो श्रीकृष्ण के जन्म समय सँकल्पी थीं पीछे मङ्गलचार करवाय वेदकी से सब रीति भांति कर रामकृष्णका यज्ञोपवीत किया और उन दोनों भाइयों को कुछ दे विद्या पढ़ने को भेज दिया, वे चले चले अवंतिकापुरी के सांदीपन नाम ऋषि जो महापंडित और बड़ा ज्ञानवान काशीपुरी का था उसके यहां आय दण्डवत कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़े हो अति दीनता कर बोले—

हम पर कृपा करो ऋषिराय। विद्या दान देहु मन लाय॥

महाराज! जब श्रीकृष्ण बलरामजीने सांदीपनऋषिसे दीनताकर कहा तब तो उन्होंने इन्हें अति प्यारसे अपने घरमेंरक्खा और लगे बड़ीकृपाकर पढ़ावने, कितने एक दिनोंमें ये चार वेद, छः शास्त्र, नौ व्याकरण अठारह पुराण, मंत्र यंत्र तंत्र, आगम और ज्योतिष वैद्यक, कोक संगीत पिंगलपढ़ चौदह विद्या निधानहुए तब एकदिन दोनोंभाइयोंने हाथजोड़ अतिविनती कर गुरुसे कहाकि महाराज! कहाहै जो अनेकजन्म अवतारले बहुतेरा कुछ दीजिये तोभी विद्याका पलटा नहीं दिया जाता पर आप हमारी शक्तिदेख गुरुदक्षिणाकी आज्ञाकीजे तो हम यथा शक्तिदे आशीष लें अपने घर जाँय इतनी बात श्रीकृष्ण बलरामजीके मुखसे निकलतेही सांदीपन ऋषि वहाँसे उठ सोच विचार करता घर भीतरगया, और उसने अपनी स्त्रीसे उनका भेद यों समझाकर कहाकि ये रामकृष्णजो दोनों बालकहैं सो आदिपुरुष अविनाशी हैं भक्तों के हेतु अवतार ले भूमिका भार उतारने को संसारमें आए हैं मैंने इनकीलीला देख यहभेदजाना क्योंकि पढ़ २ फिर २ जन्मलेते हैं सो भी विद्यारूपी सागरकी थाह नहींपाते और देखो इसबाल अवस्था में थोड़े ही दिनों में ये ऐसे अगम अपार समुद्र के पार होगये, जो किया चाहे सो पलभरमें कर सकते हैं इतना कह फिर बोले—

इन पै कहा मांगिये नारी। सुनके सुन्दरि कहै विचारी॥
मृतक पुत्र मांगो तुम जाय। जो हरि हैं तो देहैं ल्याय॥

ऐसे घरमें से विचारकर सांदीपन ऋषि स्त्रीसहित बाहरआये श्रीकृष्ण बलदेवजीके सन्मुख करजोड़ दीनताकर बोले महाराज मेरे एक पुत्रथा

तिसे साथले मैं कुटुम्बसमेत एक पर्वमें समुद्र नहाने गयाथा जोवहाँ पहुँचा कपड़े उतार सब समेत तीरमें नहाने लगा, तो एक सागरकी लहर आई उसमें मेरा पुत्र बहगया सो फिर न निकला, किसी मगरमच्छ ने निगल लिया उसका मुझे बड़ा दुख है, जो आप गुरुदक्षिणा देना चाहते हों तो वहीसुत लादीजे औरह मारे मनका दुख दूरकीजे, यहसुन श्रीकृष्ण बलराम गुरुपत्नी और गुरुको प्रणामकर रथपर चढ़ उनका पुत्र लानेके निमित्त समुद्रकी ओर चले,और चलते २ कितनी एकबेर में तीर पर जा पहुँचेकि इन्हें क्रोधकर आते देख सागर भयमानहो मनुष्य शरीरधारण कर बहुतसीं भेंटले नीरसे निकल तीरपर डरता कांपता इनके सोंही आखड़ा हुआ और भेंट रख दंडवत कर हाथ जोड़ शिर नवाय अति विनती कर बोला।

बड़ो भाग्य प्रभू दरशन दयो। कौन काज इत आवन भयो॥

श्रीकृष्णचन्द्र बोले हमारे गुरुदेव यहाँ कुनबे समेत नहानेआयेथे तिनके पुत्रको जोतू तरङ्गसे बहाय लेगयाहै तिसे लादे इसलियेहम यहाँआएहैं।

नत सिंधुबोल्यो शिरनाय,मैंनहिं लीन्होंवाहि बहाय। तुमसबहींके गुरुजगदीश,रामरूप बांच्यौहोईश।

तभीसे मैं बहुत डरताहूँ और अपनी मर्यादासे रहताहूँ हरि बोले जो तूने नहीं लियातो यहाँसे और कौन उसे लेगया, समुद्र ने कहा कृपानाथ इसका भेद बताताहूँ कि एक शंखासुर नाम असुर शंख रूप मुझमें रहता है सो सब जलचर जीवों को दुख देता है और जो कोई तीर पर नहाने को आता तो उसे पकड़ लेजाता है कदाचित वह आपके गुरुसुतको ले गया होय तो मैं नहीं जानता आप भीतर पैठ देखिये।

यों सुन कृष्ण धँसे मनलाय। मांझ समुन्दर पहुँचे जाय॥
देखत ही शंखासुर मारचौ। पेट फाड़के बाहर डारचौ॥
तामें गुरुकौ पुत्र न पायौ। पछिताने बलभद्र सुनायौ॥

कि भैया! हमने इसे बिनकाज मारा बलरामजी बोलेकुछ चिन्तानहीं अब आप इसे धारण कीजो तब हरिने उस शंखको अपना आयुधकिया दोनों भाई वहाँ से चले २ यमपुरीमें जापहुँचे जिसका संयमनी नामहै और धर्मराज वहांका राजाहै उनको देखतेही धर्मराज अपनी गद्दीसे उठ आगे

आय भक्ति भाव कर ले गया, सिंहासनपर बैठाय पाँव धो चरणामृतले बोला धन्य यह ठौर धन्य यह पुरी जहाँ आकर प्रभुने दर्शन दिया, और अपने भक्तों को कृतार्थ किया, अब कुछ आज्ञा कीजै जो सेवक पूर्ण करे, प्रभुने कहा कि हमारे गुरुपुत्र को लादे इतना वचन हरिके मुखसे निकलते ही धर्मराज झट बालक को ले आया और हाथ जोड़ कर बोला कि, कृपानाथ आपकी कृपासे यह बात मैंने पहले ही जानी थी कि आप गुरुसुत को लेने आवोगे इसलिए मैंने यत्न कर रक्खा है, इस बालक को आज तक जन्म नहीं दिया, महाराज ऐसे कह धर्मराज ने बालक हरिको दिया, प्रभुने ले लिया और तुरन्त उसे रथ पर बैठाय वहां से चल कितनी एकबेरमें ला गुरु के सोंही खड़ा किया और दोनों भाइयों ने हाथ जोड़ के कहा गुरुदेव अब आज्ञा होती है; इतनी बात सुन और पुत्रको देख सांदीपन मुनि अति प्रसन्न हो श्रीकृष्ण बलरामजी को बहुतसी आशीष देकर बोले—

अबही माँगो कहा मुरारी। दीन्हौं मोहि पुत्र सुखकारी॥
अतिशय तुमसों शिष्य हमारौ। कुशलक्षेम अब घरहिं पधारौ॥

जब ऐसे गुरुने आज्ञा की, तब दोनों भाई बिदा हो दण्डवत कर रथ पर बैठे वहांसे चले२ मथुरा पुरीके निकट आए, इनका आना सुन राजा उग्रसेन बसुदेव समेत नगरवासी क्या स्त्री क्या पुरुष सब उठ धाए और नगर के बाहर आय भेंट कर अति सुख पाय बाजे गाजे से पाटम्बर के पाँवड़े डालते प्रभुको नगर में ले गए उस काल घर२ मङ्गलाचार होने लगे और बधाई बाजने लगी।

अध्याय ४७

श्रीशुकदेवजी बोले कि, पृथ्वीनाथ! जो श्रीकृष्णचन्द्र ने वृन्दावन की सुरत करी सो मैं सब लीला कहता हूँ तुमचित्त दे सुनो कि एकदिन हरिने बलरामजी से कहा कि भाई! सब वृन्दावनवासी हमारी सुरतिकर अतिदुःख पाते होंगे क्योंकि जो मैंने उनसे अवधि की थी सो बीत गई, इससे अब उचित है कि किसीको वहां भेज दीजै जो जाकर उनका समाधान करे

आवे यों भाईसे नताकर हरिने उद्धव को बुलायके कहाकि अहो उद्धव! एक तो तुम हमारे सखा हो दूजे अति चतुर ज्ञानवान और धीर हो इसलिए हम तुम्हें बृन्दावन भेजा चाहते हैं कि तुम जाकर नन्द यशोदा और गोपियों को ज्ञान दे उनका समाधान करआवो, और माता रोहिणी को ले आवो, उद्धवजीने कहा जो आज्ञा, फिर श्रीकृष्णचन्द्र बोले तुम प्रथम नन्दमहर और यशोदाजी को ज्ञान उपजाय उनके मन का मोह मिटाय ऐसे समझाय कहियो जो वे मुझे निकट जान दुःख तजें और पुत्र भाव छोड़ ईश्वर मान भजें, पीछे उन गोपियोंसे कहियो जिन्होंने मेरे काज छोड़ी है लोक वेदकी

लाज, रातदिन लीला यश गाती हैं और अवधि की आश किये प्राण मूठी में लिए हैं कि तुम कंतभाव छोड़ भगवान जान भजो और विरह दुःख तजो महाराज। ऐसे ऊद्धवको कह दोनोंभाइयोंने मिलकर एक पाती लिखी जिसमें नन्द यशोदा समेत गोप ग्वालों को तो यथायोग दण्डवत प्रणाम आशीर्वाद लिखा और सब ब्रजवासियों को जोग का उपदेश लिख ऊद्धव के हाथ दी और कहा यह पाती तुमहीं पढ़ सुनाइयो जैसे बने तैसे उन सबको समझाय शीघ्र आइयो इतना संदेशा कह प्रभुने निज वस्त्र आभूषण मुकुट पहिराय अपने ही रथ पर बैठाय ऊद्धवजी को बृन्दाबन बिदा किया ये रथ हाँक कितनी एक बेरमें मथुरासे चले चले बृन्दाबनके निकट जा पहुँचे

तो वहाँ देखते क्या हैं कि संघन कुंजों के पेड़ों पर भाँति२के पक्षी मन भावन बोलियां बोल रहे हैं और जिधर तिधर धौली धूमरी भूरी पीली गायें घटासी फिरती हैं और ठौर ठौर गोपी ग्वाल बाल श्रीकृष्ण यश गाय रहे हैं यह शोभा निरख हर्ष से और प्रभुका बिहार स्थल जान प्रणाम करते उद्धवजीजो गांवके खिरक निकटगए तो किसीने हरिकारथ पहिचान पास आय इनका नाम पूछ नन्द महर से जा कहा कि महाराज! श्रीकृष्ण का वेष किये उन्हींका रथ लिए कोई उद्धव नाम मथुरा से आया है इतनी बातके सुनतेही नन्दराय जैसे गोप मण्डलके बीच अथाईपर बैठे तैसेही उठ धाये और तुरत उद्धवजी के निकट आये राम कृष्णका सङ्गी जान अति हितकर मिले और कुशल पूछ बड़े आदर मान से घर लिवाय ले गये पहले पांव धुलवाय आसन बैठने को दिया. पीछे षटरस भोजन बनवाय उद्धवजी की पहुँनाई की जब वे रुचि से भोजन कर चुके तब सुठौर उज्वल फैनसी सेज बिछादी, तिस पर पान खाय जाय उन्होंने पौढ़कर अति सुख पाया और मार्ग का श्रम सब गंवाया, कितनी एकबेर में जो उद्धवजी सोकर उठे तो नन्दमहर उनके पास जा बैठे और पूछने लगेकि कहो उद्धवजी शूरसेन के पुत्र हमारे परम मित्र बसुदेवजी कुटुम्ब समेत सब आनन्द से हैं और हम से कैसी प्रीति रखते हैं यों कह फिर बोले—

कुशल हमारे सुतकी कहौ। जिनके सङ्ग सदा तुम रहौ॥
कबहू वे सुधि करत हमारी। उनबिन दुख पावत अतिभारी॥
सबही सों आवन कह गये। बीती अवधि बहुत दिन भये॥

नित उठ यशोदा दही बिलोय माखन निकाल हरिके लिए रखती हैं उसकी और ब्रजयुवतियों की जो उनके प्रेम रंगमें रंगी है सुरत कभू कान्ह करतेहैं कि नहीं?

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहा कि पृथ्वी-नाथ! इसरीतिसे समाचार पूछते और श्रीकृष्णचन्द्रजीकी पूर्व लीला गाते२ नन्दरायजी तो प्रेम से भींज इतना कह प्रभुका ध्यानकर अवाक हुएकि—

महाबली कंसादिक मारे। अब हम काहे कृष्ण बिसारे॥

इस बीच अति व्याकुल हो सुधबुध देहकी बिसारे मन मारे रोती यशोदारानी उद्धवजीके निकट आय राम कृष्ण की कुशल पूछ बोली कहो उद्धवजी! हरि हम बिन वहां कैसे इतने दिन रहे और क्या सन्देशा भेजाहै कब आय दर्शन देंगे इतनी बात सुनतेही पहले उद्धवजी ने नन्द यशोदा को कृष्ण बलरामकी पाती पढ़ सुनाई पीछे समझा कर कहने लगेकि जिनके घरमें भगवानने जन्म लिया और बाललीला कर सुखदिया तिनकी महिमा कौन कह सके तुम बड़े भाग्यवान हो क्योंकि जो आदि पुरुष अविनाशी शिव विरंचि का कर्ता न जिसके माता न पिता न भाई न बन्धु तिन्हें अपना पुत्र मानते हो और सदा उसीकि ध्यान में मन लगाये रहते हो वह तुमसे कब दूर रह सकता है कहा है—

सदा समीप प्रेम बश हरी। जिनके हेतु देह निज धरी॥
जाके बैरी मित्र न कोई। ऊँच नीच कोऊ किन होई॥
जोई भक्ति भजन मन धरे। सोई हरि सों मिल अनुसरे॥

जैसे भृङ्गी कीटको ले जाता है और अपना रूप बनादेता है और जैसे कमलके फूल में भौंरा मुंद जाता है, और रात भर उसके ऊपर गूंजता रहताहै उसे छोड़ कहीं नहीं जाता तैसेही जो हरिसे हित करता है और उनका ध्यान धरता है तिसे वे भी अपना बना लेते हैं और सदा उसके पासही रहते हैं। यों कह फिर उद्धवजी बोले कि अब तुम हरि को पुत्र कर मत जानो ईश्वर कर मानो वे अन्तर्यामी भक्त हितकारी प्रभु आय दर्शन दे तुम्हारा मनोरथ पूरा करेंगे तुम किसी बात की चिन्ता मत करो।

महाराज! इसी रीतिसे अनेक अनेक तरह की बातें कहते और सुनते सुनाते जब सब रात व्यतीत भई और चार घड़ी पिछली शेष रही तब नन्दरायजीसे उद्धवजी ने कहा कि महाराज! अब दधि मथने की बिरियाँ हुइ जो आपकी आज्ञा पाऊं तो यमुना स्नान कर आऊं नन्द महर बोले बहुत अच्छा इतना कह वे तो वहां बैठ सोच विचार करते रहे

और उद्धव उठ झट रथमें बैठ यमुना तीरपर आये पहले वस्त्र उतार देहशुद्ध करी पीछे हाथ जोड़ कालिन्दी की स्तुति कर जल में पैठ और, नहाय धोय सन्ध्या तर्पण से निश्चिन्त हो लगे जप करने, उस समय सबव्रज युवतियाँभी उठीं अपना घर झार बुहार लीप पोत धूप दीप कर लगी दही मथने।

दधिको मथन मेहसो गाजै। गावें नपुर की धुनि बाजै॥
दो०—दधि मथि के माखन लिये, कियो गेह को काम।
तब सबमिलि पानी चली, सुन्दर ब्रजकी वाम॥
एक कहै म्वहिं मिले कन्हाई। एक कहै वे भजे लुकाई॥
पीछे ते पकरी मो बांह। वे ठाढ़े हरि बटकी छांह॥
कहत एक तो दोहत देखे। बोली एक मोरही पेखे॥
एक कहै वे धेनु चरावैं। सुनहुँ कानदे वेणु बजावैं॥
या मारग हम जाय न माई। दान मांगि हैं कुँवर कन्हाई॥
गागरि फोरैं गांठि छोरि है। नेक चितै कैचित्त चोरि हैं॥
है कहुँ दुरे दौरि आय हैं। तब हम कहा जानि पाय हैं॥
ऐसे कहत चलीं ब्रज नारी। कृष्ण वियोग विकल तनुभारी॥

अध्याय ४८

(उद्धव गोपी सम्वाद भ्रमर गीत)

श्रीशुकदेवजी बोले कि पृथ्वीनाथ! जब उद्धवजी जप कर चुके तब नदी से निकल वस्त्र आभूषण पहन रथ में बैठे जो कालिन्दी तीर से

नन्दगेह की ओर चले तो गोपियाँ जो जल भरने को निकली थीं तिन्होंने रथ दूर से पन्थ में आते देखा देखतेही आपस में कहने लगीं कि,यह रथ किसका चलाआताहै इसेदेखलो, आगे पाँव न बढ़ाओ.यों सुन उनमेंसे एक गोपी बोलीकि,सखी! कहीं वही,कपटी अक्रूर तो न आया होय जिसने श्रीकृष्णचन्द्रको लेजाय मथुरामें बसाया,और कंसको मरवाया,इतनी सुन एक और उनमें से बोली यह विश्वासघाती फिर काहेको आया,एकवारतो हमारे जीवन मूलको ले गया,अब क्या जीव लेगा.महाराज! इसी भाँतिकी आपसमें अनेक बातकह इतनेमें जो रथनिकटआया तो कुछएक दूरसे उद्धवजीको देख

ठाढ़ी भईं तहाँ ब्रजनारी। शिर ते गागरि धरी उतारी॥

तब आपस में कहने लगींकि सखी.यहतो कोई श्यामवर्ण,कमलनयन,मुकुट शिर दिये बनमाला गलेमें डाले पीताम्बर पहिरे,पीतपट ओढ़े श्रीकृष्णचन्द्रसा बैठा हमारी ओर देखता चला आता है तब तिनही में से एक गोपी ने कहा कि सखी! यहतो कल से नन्दजीके यहां आया है उद्धव इसका नाम है, और श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कुछ सन्देशा इसके हाथ कह पठाया है इतनी बातके सुनतेही गोपियाँ एकान्त ठौर देख शोच सङ्कोच छोड़ दौड़ दौड़ कर उद्धवजी के निकट गईं और हरिका हितू जान दण्डवतकर कुशलक्षेम पूंछ हाथ जोड़ रथ के चारों ओर घेर के खड़ी हुईं उनका अनुराग देख उद्धवजी भी रथसे उतर पड़े तब सब गोपियाँ उन्हें एक पेड़ की छाया में बैठाय आप भी चारों ओर घेर बैठीं और अति प्यार से कहने लगीं।

भली करी उद्धव तुम आये। समाचार माधव के लाये॥
सदा समीप कृष्ण के रहो। उनको कहा संदेशो कहौ॥
पठये मात पिता के हेत। और न काहू की सुधि लेत॥
सर्वस दीन्हों उनके हाथ। उरझे प्राण चरण के साथ॥
अपने हीं स्वारथ के भये। सबहीं को अब दुख दे गये॥

और जैसे फलहीन तरुवर को पक्षी छोड़ जाता है तैसेही हरि हमें छोड़ गये हमने उन्हें अपना सर्वस दिया तौ भी हमारे न हुए महाराज! जब प्रेम में मग्न हो इसी ढब की बातें बहुतसीं गोपीयोंने कहीं तब उद्धवजी

उनके प्रेम की दृढ़ता देख ज्यों प्रणाम करने को उठा चाहते थे त्योंही किसी गोपी ने एक भौंरे को फूल पर बैठते देख उसके मिस उद्धव से कहा अरे मधुकर! तूने माधव के चरणकमल का रस पिया है तिसी से तेरा नाम मधुकर हुआ और कपटी का मित्र है इसलिये तुझे अपना दूतकर भेजा है.तू हमारे चरण मत परस क्योंकि हम जाने हैं जितने श्यामवर्ण हैं, उतने कपटी हैं जैसा तू है तैसा ही श्याम, इससे तुम हमें मत करो प्रणाम, जो तू फूल २ का रस लेता फिरता है और किसी का नहीं होता तो वे भी प्रीतिकर किसीके नहीं होते ऐसे गोपी कह रही थी कि एक भौंरा और आया उसे देख ललिता नाम गोपी बोलीः-

अहो भ्रमर तुम अलगी रहौ। यह तुम जाय मधुपुरी कहौ॥

जहां कुब्जासी पटरानी और श्रीकृष्णचन्द्र विराजते हैं कि एक जन्म की हम क्या कहें तुम्हारी तो जन्म२की यही चाल है, बलिराजा ने सर्बस दिया तिसे पाताल पठाया और सीता सी सती को बिन अपराध घर से निकाला जब उनकी यहदशा की तो हमारी क्या चलीहै यों कह फिर सब गोपी मिल हाथ जोड़ उद्धवसे कहने लगीं कि;उद्धवजी हम अनाथ हैं श्री कृष्ण बिन, तुम अपने साथ ले चलो, श्रीशुकदेवजी बोले, कि,महाराज! इतना वचन गोपियोंके मुख से निकलतेही उद्धव जीने कहा-संदेसा श्री कृष्णचन्द्रजीने लिख भेजाहै सो मैं समझाकर कहता हूँ तुम चितदे सुनो. लिखा है तुम भोग की आश तज योग करो तुमसे वियोग कभी न होगा और कहा कि

निशि दिन करती मेरा ध्यान। प्रिय नहिं कोई तुमहि समान।

इतना कह फिर उद्धवजी बोले जो हैं आदि पुरुष अविनाशी हरी, तिनसे तुमने प्रीति निरन्तर करी, जिन्हें सब कोई अलख अगोचर अभेद बखाने, जिन्हें तुमने अपने कंत कर माने,पृथ्वी पवन पानी तेज आकाश का है जैसे देहमें निवास. ऐसे प्रभु तुममें विराजते हैं पर माया के गुणोंसे न्यारे दिखाई देते हैं उनका सुमिरण ध्यान करो वे सदा अपने भक्तों के बश रहते हैं और पास रहनेसे होताहै ज्ञान ध्यानका नाश इसलिये हरि

ने किया है दूर जाय के बास और मुझे यह भी श्रीकृष्णचन्द्र ने समझाय के कहा है तुम्हें वेणु बजाय बनमें बुलाया और जब देखा तुम्हरे में मदन बीरका प्रकाश, तब हमने तुम्हारे साथ मिलकर किया था रासविलास।

जब तुम सुरत दीन बिसराई। अन्तर्ध्यान भये यदुराई॥

फिर जो तुमने ज्ञानकर ध्यान हरिका मन में किया त्योंही तुम्हारे चित की भक्ति ज्ञान देख प्रभुने आय दर्शनदिया, महाराज इतना वचन

गोपी तबे कहैं सतराय। सुनो बात अबरहु अरगाय॥
ज्ञान योग विधि हमहिं सुनावें। ध्यान छोड़ आकाश बतावें॥
जिनकी लीला में मन रहै। तिन को को नारायण कहै॥
बालापनते जिन सुख दियौ। सोक्यों अलख अगोचरभयौ॥
जो सब गुण युत रूप सरूपा। सो क्योंनिरगुण होय निरूपा॥
जो तुमसे प्रिय प्राण हमारे। तोको सुनिहै वचन तिहारे॥
एक सखी उठि कहै विचारि। उद्धव की कीजै मनुहारि॥
इनसो सखी कछू नहिं कहिये। सुनके वचन देख मुख रहिये॥
एक कहित अपराध न याको। यह आयो पठयो कुबजा को॥
अब कुबजा जो जाहि सिखावै। सोई वाकौ गायो गावै॥
कबहुँ श्याम कहैं नाहिं ऐसी। कही आय ब्रज में इन जैसी॥
ऐसी बात सुनै को भाई। उठत शूलसुनि सहा न जाई॥
कहत भोग तजि योग अराधो। ऐसी कैसे कहिहैं माधो॥
जप तप संयम नेम अपार। यह सब विधवा को ब्यौपार॥
युग युग जीवहु कुमर कन्हाई। शीश हमारे पर सुखदाई॥
आछत पती बिभूति लगाई। कही कहाँ की रीति चलाई॥
हम को नेम योग व्रत येहा। नन्द नन्दन पद सदा सनेहा॥
ऊधौ तुम्हें दोष को लावै। यह सब कुब्जा नाच नचावै॥

उद्धवजीके मुखसे निकलतेही, इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवमुनि बोले कि, महाराज! जब गोपियों के मुखसे ऐसे प्रेमरस साने वचन सुने तब योग कथा कहके उद्धव मनहीं मन पछताय सकुचाय मौन साध शिरनवाय रह गए, फिर एक गोपीने पूंछा कहो बलभद्रजी कुशल,क्षेम से हैं और बालापन की प्रीति विचार कभी हमारी सुधि करते हैं कि नहीं यह सुन उनहीं में से किसी और गोपी ने उत्तर दिया कि तुमतो हो अहीरी गँवारी

और मथुरा की हैं सुन्दरी नारी, तिनके वश हो हरि बिहार करते हैं अब हमारी सुरत क्यों करेंगे जबसे वहाँजाके छाये, सखी तबसे सर्वसुखभये पराये जो पहल हम ऐसा जानतीं तो काहे को जाने देती, अब पछताये कुछ हाथ नहीं आता, इससे उचित है कि सब दुःख छोड़ अवधि की आश करि रहिये क्योंकि जब से वहां जाके छाये, सखी तब से पिव भये पराये जैसे आठ महिने पृथ्वी बन पर्वत मेघ की आश किये तपन सहते हैं और तिन्हें आय वह ठंडा करता है तैसे हरि भी आय मिलेंगे।

एक कहत हरि कीन्हों काज। वैरी मारौ लीन्हों राज॥
काहे को वृन्दावन आवें। राज छांड़ि क्यो गाय चरावें॥
छोड़हु सखी अवधि की आश। चिन्ता जैहै भए निराश॥
एक त्रिया बोली अकुलाय। कृष्ण आश क्यों छोड़ी जाय॥

बन पर्वत और यमुनातीर में जहां२ श्रीकृष्ण बलवीरने लीला करी तहां तहां वही ठौर देख सुध आती है खरी प्राणपति! हरीको यों कह फिर बोलीं।

दो०—दुख सागर यह ब्रज भयो, नाम नाव बिच धार।
बूड़हि बिरह वियोग जल, कृष्णाकरें कब पार॥
गोपीनाथ ते क्यों सुध भई। लाज न कछु नाम की भई।

इतनोबातसुन उद्धव जी मनही मनविचार करनेलगे कि धन्यहे गोपियों को और इतनी दृढ़ताको जो सर्वस्वछोड़ श्रीकृष्णचन्द्रके ध्यान में लीन होरही हैं महाराज! उद्धवजी तो उनका प्रेम देख मनहीमन सराहते थे कि उस काल सब गोपी उठ खड़ीभईं और उद्धव जी कोबडे आदरमान से अपनेघर लिवाय ले गईं उनकी प्रीतिदेख इन्होंनेभी वहां जाय भोजनकिया औरविश्राम कर श्रीकृष्ण की कथासुनाय उन्हें बहुत सुखदिया तबसब गोपी उद्धवजी की पूजाकर बहुत भेंट आगे धर हाथ जोड़अतिविनतीकरबोलीं उद्धवजी! तुम हरि से जाय कहियो कि आगे तो तुम बड़ीकृपा करते थे हाथ पकड़ अपने साथ लिये फिरते थे अब ठकुराई पाय नगर नारी कुबजा के कहे योग लिख भेजा हम अबला अपवित्र अबतक गुरुमुख भी नहींहुईं हमज्ञान क्या जानें।

उनसों बालापन की प्रीति। जाने कहा योग की रीति॥

वे हरि क्यों न योग दे जात। यह न सन्देश की है बात॥
उद्धव यों कहियो समुझाय। प्राण जात हैं राखें आय॥

महाराज! इतनी बात कह सब गोपियाँ तो हरिका ध्यानकर मग्न हो रहीं और उद्धवजी उन्हें दण्डवतकर वहाँसे उठ रथपर बैठ गोवर्द्धन में आए, वहाँ कई एकदिन रहे फिरवहाँसे जो चले तो जहाँ२ श्रीकृष्णचन्द्रजी ने लीला करीथीं तहां२ गए और दो२ चार२ दिन सब ठौर रहे निदान कितनेएक दिनपीछे फिर वृन्दाबनमें आये और नन्दयशोदाजीके पासजा हाथ जोड़कर बोले आपकी प्रीति देख२ मैं ब्रजमें इतने दिन रहा, अब आज्ञा पाऊं तो मथुरा को जाऊं, इतनी बातके सुनतेही यशोदारानी दूध-दही माखन और बहुतसी मिठाई घरमें जाय ले आईं और उद्धवजी को देके कहाकि, यह तो तुम श्रीकृष्ण बलराम प्यारों को देना, और बहन देवकी से यों कहना कि, मेरे श्रीकृष्ण बलरामको भेजदे बिलमाय न रखें इतना सन्देशाकह नन्दरानी अतिब्याकुलहो रोनेलगी तब नन्दजी बोलेकि उद्धवजी हम तुमसे अधिक क्या कहें तुम आप, चतुर गुणवान महासुजान हो हमारी ओर प्रभुसे ऐसे जाय कहियो कि वे ब्रजवासियोंका दुःख विचार बेग आय दर्शन दें और हमारी सुध न बिसारें इतना कह जब नन्दरायने आँसू भरलिए और जितने ब्रजवासी क्या स्त्री क्या पुरुष वहां खड़ेथे सोभी सब रोने लगे, तब उद्धवजी उन्हें समझाय बुझाय आशा भरोसा दे ढाढ़स बंधाय बिदा हो रोहिणी को साथ ले मथुराको चले और कितनी एकबेर चले २ श्रीकृष्ण के पास आपहुँचे।

उन्हें देखतेही श्रीकृष्ण बलदेव उठकर मिले और बड़े प्यार से इनकी कुशलक्षेम पूछ वृन्दाबनके समाचार पूछने लगे कहो उद्धवजी! नन्दयशोदा समेत सब ब्रजबासी आनन्दसे हैं और कभी हमारी सुरत करते हैंकिनहीं उद्धवजी बोले कि महाराज! ब्रजकी महिमा और ब्रजवासियों का प्रेम मुझसे कुछ कहा नहीं जाता उनके तो तुमहीहो प्रान, निशिदिन करतेहैं वे तुम्हाराही ध्यान, और ऐसी देखी गोपियों की प्रीति जैसे होतीहै पूरण भजनकी रीति, आपका कहा योगका उपदेश जा सुनाया, पर मैंने भजनका

भेद उन्हींसे पाया इतनासमाचारकह उद्धवजीबोलेकि, दीनदयालु मैं अधिक क्या कहूँ आप अन्तर्यामी घटघटकी जानतेहो थोड़ेहीमें समझिए कि ब्रजमें क्या जड़, क्या चैतन्य सब आपके दर्शन पर्शन बिन महा दुखीहैं केवल अवधिकी आश कररहेहैं इतनी बातके सुनतेही जब दोनों भाई उदास हो रहे तब उद्धवजीतो श्रीकृष्णचन्द्रजी से बिदा हो नन्द यशोदा का सन्देशा बसुदेव देवकी को पहुंचाय अपने घर गए और रोहिणीजी श्रीकृष्ण बल-रामसे मिल अति आनन्द कर निज मन्दिर में रहीं।

अध्याय ४६

श्रीशुकदेवमुनि बोलेकि महाराज। एकदिन श्रीकृष्णबिहारी भक्तहित कारी कुब्जाकी प्रीति बिचार अपना वचन प्रतिपालने को उद्धवको साथ ले उसके घर गए,

जब कुब्जा जान्यो हरि आये। पाटम्बर पाँवड़े बिछाये ॥
अति आनन्द लये उठ आगे। पूरब पुण्य पुञ्ज सब जागे॥
उद्धव को आसन बैठारी। मन्दिर भीतर धँसे मुरारी ॥

वहां जाय देखें तो चित्रशाला में उज्वल बिछौना बिछाहै उस पर एक फूलों से संवारी अच्छी सेज बिछीहै तिसपर हरि जा बिराजे और कुब्जा एक ओर मन्दिर में जाय सुगन्ध उबटन लगाय हाथ धोय कंघी चोटी कर सुथरे कपड़े पहन नखशिख से शृङ्गार कर पान खाय सुगन्ध लगाय

कर ऐसे राव चावसे श्रीकृष्णचन्द्रके निकट आई कि जैसे रति अपने पति के पास आई होय और लाज से घूंघट किये प्रथम मिलन का भय उरलिये चुप चाप एक ओर खड़ी होरही, देखते ही श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्दने उसे हाथ पकड़ अपने पास बिठाय लिया और उसका मनोरथ पूर्ण किया।

तब उठि ऊधौ के ढिंग आये। भई लाज हंसि नैंन नवाये॥

महाराज! यों कुब्जा को सुखदे उद्धव जी को साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र फिर अपने घर आये और बलराम जीसे कहने लगे कि, भाईहमने अक्रूरजी से कहा था कि तुम्हारा घर देखने आवेंगे सो पहले तो वहां चलिये पीछे उन्हें हस्तिनापुर को भेज वहाँ के समाचार मँगवाइये, इतना कह दोनों भाई अक्रूर के घर गये, वह प्रभु को देखते ही अति सुख पाय प्रणामकर चरण रज शिर चढ़ाय हाथ जोड़ बिनती कर बोला कृपानाथ आपने बड़ी कृपा की जो दर्शन दिया, और मेराघर पवित्रकिया यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र बोले काका इतनी बडाई क्यों करतेहो, हमतौ आपके लड़के हैं यौंकह फिर सुनाया कि काका आपके पुण्य ने असुर तौ सब मारे गये, पर एक ही चिन्ता हमारे जी में है कि पांडु वैकुण्ठ सिधारे और दुर्योधन के साथ पांच भाई हैं दुखी हमारे।

अध्याय ५०

कुन्ती फूफी अधिक दुख पावे। तुमबिन जाय कौन समझावे॥

इतनी बात के सुनते ही अक्रूरजीने हरि से कहा आप इसबात की चिन्ता न कीजै मैं हस्तिनापुर जाऊंगा और उन्हें समझाय वहाँकीसुध लेआऊंगा श्रीशुकदेव मुनि बोले कि पृथ्वीनाथ! जब ऐसा श्रीकृष्णचन्द्रजी ने अक्रूर के मुख से सुना तब उन्हें पांडवों की सुध लेनेको बिदा किया वे रथ पर बैठ चले कइ एक दिनमें मथुरा से हस्तिनापुर पहुँचे और रथ से उतर जहाँ राजादुर्योधन अपनी सभा में बैठा था तहां जुहार कर खड़े हुए इन्हें देखते ही दुर्योधन सभा समेत उठकर मिला, और अति आदरमान से अपने पास बिठा इनकी कुशल क्षेम पूंछ बोला,

नीके शूरसेन वसुदेव, नीकेहैं मोहन बलदेव । उग्रसेनराजा केहिहेत, नाहिन काहूकी सुधिलेत ॥
पुत्रहि मार करत है राज । तिन्हैं कछू सों है न काज ॥

ऐसे जब दुर्योधन ने कहा तब अक्रूर सुन चुप होरहा और मनही मन कहने लगा कि यह पापियों की सभाहै यहाँ मुझे रहना उचित नहीं क्योंकि जोमैं रहूँगा तो ऐसी२ अनेकबातें कहेंगे सो मुझसे कबसुनी जांयगी इससे रहना भला नहीं, यों विचार अक्रूरजी वहाँ से उठ विदुरको साथले पांडुके घर गये, तहाँ जाय देखे तो कुन्ती पतिके शोकसे महाव्याकुल हो रो रही है, उसके पास जा बैठे और लगे समझाने कि, माई विधना से कुछ किसी का बश नहीं चलता, और सदा कोई अमर हो जीता भी नहीं

(अक्रूरहस्तिनापुर गमन)

रहता, देह धर जीव दुःख सुख सहता है, इससे मनुष्य को चिंता करना उचित नहीं, क्योंकि चिंता कियेसे कुछ हाथ नहीं आता केवल चित्तको दुख देनाहै, महाराज जब ऐसे समझाय बुझाय अक्रूरजीने कुन्तीसे कहा तब वह सोचसमझ चुप होरही, और इनकी कुशल पूंछ बोली हे अक्रूरजी हमारे मातापिता और भाई बसुदेवजी कुटुम्ब समेत भले हैं और श्रीकृष्ण बलराम कभी युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव इन अपने पांचो भाइयों की सुध करते हैं ? यह तो यहां दुःख समुद्र में पड़े हैं वे इनकी रक्षा कब आय करेंगे ? हमसे अबतो इस अन्ध धृतराष्ट्रका दुःख सहा नहीं जाता क्योंकि वह दुर्योधन की मति से चलता है इन पांचों को मारने के

उपायमें दिन रात रहताहै,कई बेरतो विष घोल दिया सो मेरे भीमसेनने पी लिया इतना कह पुनि कुन्तीबोली कहोअक्रूरजी जब सबकौरव योंबैरकररहे तब यह मेरे बालक किसका मुँह चहें और नीचों से बच कैसे होंय सयाने, यह दुःख बड़ा है हम क्या बखानें, ज्यों हरिणी झुण्डसे बिछुड़ करती है त्रास, त्यों मैं भी सदा रहती हूँ उदास—

जिन कंसादिक असुरन मारे। सोई हैं मेरे रखवारे॥
भीम युधिष्ठिर अर्जुन भाई। इनको दुख तुम कहियो जाई॥

जब ऐसे दीन हो कुन्तीने कहे वचन तब सुनकर अक्रूरने भर लिये नयन और समझा के कहने लगा कि तुम कुछ चिंता मतकरो ये जो पाँचो पुत्र तुम्हारे हैं सो महाबली यशी होंगे, शत्रु और दुष्टोंको मार करेंगे निकन्द इनके पक्षी हैं श्रीगोविन्द, यों कह फिर अक्रूरजी बोलेकि—श्रीकृष्णबलराम ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है कि फूफीसे कहियो किसी बातसे दुख न पावें हम वेगही तुम्हारे निकट आते हैं महाराज! ऐसे श्रीकृष्णकी कही बात कह अक्रूरजी कुन्ती को समझाय बुझाय आशा भरोशा दे बिदाहो विदुर को साथ ले धृतराष्ट्र के पास गए और उससे कहाकि तुम पुरखा हुए ऐसी अनीति क्यों करते हो, जो पुत्रके वश हुए अपने भाईका राजपाट ले भतीजे को दुख देते हो कहाँ धर्म है जो ऐसा अधर्म करते हो।

लोचन गये न सूझे हिये। कुल बहजाय पाप के किये॥

तुमने भले चंगे बैठे बिठाये क्यों भाईकाराज्य लिया और भीम युधिष्ठिर को क्यों दुखदिया? इतनी बात के सुनतेही धृतराष्ट्र अक्रूरका हाथ पकड़ बोला कि क्या करूं मेरा कहा कोई नहीं सुनता ये सब अपनी२ मतिसे चलते हैं मैं इनके सोंही मूरख हो रहा हूँ, इससे इनकी बातों में कुछ नहीं बोलता, एकांत बैठा, चुपचाप अपने प्रभु का भजन करता हूँ इतनी बात जो धृतराष्ट्र ने कही तो अक्रूरजी दण्डवत कर वहाँ से उठ रथ पर चढ़ हस्तिनापुर से चलेर मथुरा नगर में आए।

दो०—उग्रसेन वसुदेव सों, कही पांडु की बात। कुन्ती के सुत अति दुखित, भये छीण सब गात॥

यों उग्रसेन वसुदेवसे हस्तिनापुरके सब समाचार कह अक्रूरजीफिर श्री

कृष्ण बलरामजी के पास जा प्रणाम कर हाथजोड़ बोले कि महाराज! मैं ने हस्तिनापुर जाय देखा, आपकी फूफी और पांचों भाई कौरवोंके हाथसे महादुखी हैं अधिक क्या कहूँ आप अन्तर्यामी हैं, वहाँ की व्यवस्था और विपत्ति तुमसे कुछ छिपी नहीं योंकह अक्रूरजी तो कुन्ती का कहा सन्देशा सुनाय बिदाहो अपने घर गए और सब समाचार सुन श्रीकृष्ण बलदेव जो हैं सब देवन के देव सो लोक रीति से चिंताकर भूमिका भार उतारने का विचार करने लगे।

इतनी कथा कह शुकदेवमुनि ने राजा परीक्षित को सुनाय कर कहा कि, हेपृथ्वीनाथ! यह जो मैंने ब्रजबन मथुरा को यश गायो सो पूर्वार्द्ध कहो अब आगे उत्तरार्द्ध गाऊँगा जो द्वारकानाथका बल पाऊंगा॥ इति॥

॥ श्री ॥

अथ उत्तरार्द्ध कथा प्रारम्भ :

अध्याय ५१

(जरासिंधु पराजय)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि, महाराज! ज्यों श्रीकृष्णचन्द्र समेत जरासन्ध को जीत कालयवन को मार मुचुकुन्दको तार ब्रजको तज द्वारकामें जाय बसे त्यों मैं सब कथा कहता हूँ, तुम सचेतहो चित लगाय सुनो कि राजा

उग्रसेन राजनीति से मथुरापुरीका राज्य करतेथे और श्रीकृष्ण बलराम सेवक की भाँति उनके आज्ञाकारी। इससे राजा राजप्रजा सब सुखी थे पर एककंस की रानियाँ ही अपने पतिके शोकसे महादुःखिनीथीं न इन्हें नींद आतीथी न भूख न प्यास लगतीथी आठ पहर उदास रहतीं थीं एक दिन वे दोनों बहनें अति चिंता कर आपसमें कहने लगीं कि जैसे नृप बिन प्रजा चन्द्रबिन यामिनी शोभा नहीं पाती तैसे कन्तबिन कामिनीभी शोभा नहीं पाती, अब अनाथ हो यहाँ रहना भला नहीं इससे अपने पिताके घर चल रहिये सोअच्छा,महाराज वे दोनों रानियाँ ऐसे आपसमें सोचविचार कर रथ मँगवाय उसपर चढ़ मथुरासे चलीं२ मगध देशमें अपने पिता के यहाँ आई और जैसे श्रीकृष्ण बलरामने सब असुरों समेत कंस को मारा तैसे उन दोनोंने रो रो समाचार अपने पितासे सब कह सुनाया, सुनतेही जरासन्ध अति क्रोध कर सभा में आया और कहने लगा कि ऐसे बली कौन यदुकुल में उपजे, जिन्होंने सब असुरों समेत महाबली कंस को मार मेरी बेटियों को राँड़ किया मैं अपना सब कटक ले चढ जाऊँ और सब यदुवंशियों समेत मथुरापुरीको जलाय श्रीकृष्ण बलरामको जीत बाँधलाऊं तो मेरा नाम जरासन्ध नहीं तो नहीं, इतनी कह उसने तुरन्त ही चारों ओर के राजाओं को पत्र लिखे तुम अपना२ दल ले२ हमारे पास आओ हम कंसका पलटाले यदुवंशियोंको निर्वंशकरेंगे जरासन्धका पत्रपातेहीसब देश२ के नरेश अपना२ दल साथ ले उठ चले आये और यहाँ जरासन्धने भी अपनी सेना ठीक२ बनारक्खी निदान सब असुर दलसाथले जरासन्ध ने जिस समय मगध देशसे मथुरापुरी को प्रस्थान किया तिस समय उसके सङ्ग तेईस अक्षौहिणी सेनाथी(इक्कीस सहस्र आठसौ सत्रहरथी और इतने ही गजपति एकलाख नवसहस्र साढ़ेतीन सौ पैदल और छासठसहस्र अश्वपति यह अक्षौहिणी प्रमाण है ऐसी तेइस अक्षौहिणी उनके साथ थीं)और उनमें से एक एक राक्षस ऐसा बली था सो मैं कहाँतक वर्णनकरूं, महाराज! जिसकाल जरासन्ध सेना ले धौंसा दे चला उस काल दशों

दिशाके दिक्पाल लग थर२ काँपने. और सब देवता मारे डर के भागने पृथ्वी न्यारी ही बोझसे लगी छतसी हिलने, निदान कितने ही एक दिनों में चला२ जा पहुँचा और उसने चारों ओर से मथुरापुरी को घेर लिया तब नगर निवासी अति भय खाय श्रीकृष्णचन्द्रके पास जाय पुकारे कि महाराज! जरासन्ध ने आय चारों ओर से सेना ले नगर घेरा अब क्या करें और किधरजांय? इतनी बातके सुननेही हरि कुछ सोच विचार करने लगे. इतने में बलरामजी ने आय प्रभुसे कहाकि महाराज! आपने भक्तों का दुःख दूर करने के हेतु अवतार लियाहै अब अग्नि तनु-धारणकर असुर रूपी बनको जलाय भूमि का भार उतारिये यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र उनको साथले उग्रसेनके पास गए और कहाकि महाराज! हमें तो लड़ने की आज्ञा दीजेऔर आप सबयदुवंशियोंकोसाथले,गढ़कीरक्षा कीजे इतना कह जो माता पिताके निकट आए तो सब नगर निवासी घिर आये वे अति व्याकुल हो कहने लगे कि हे कृष्ण! अब इन असुरों के हाथसे कैसे बचें तब हरिने माता पिता समेत सबको भयातुर देख समझाके कहा कि तुम किसी भाँति की चिंता मत करो यह असुर दल जोतुम देखते होसो पलभर में यहां की यहां ऐसे बिलाय जायगा कि जैसे पानी के बुलबुले पानीमें बिलाय जातेहैं, यों कह सबको समझाय-बुझाय ढाढ़स बँधाय उनसे बिदा हो प्रभु जो आगे बढ़ेतो देवताओंने दोरथ शस्त्र भर इनके लिये भेजदिए वे आय इनके सोंही खड़े हुए तबयह दोनों रथों में बैठ लिए।

निकसे दोऊ भ्रात यदुराय। पहुँचे शीघ्र सुदल में जाय॥

जहाँ जरासन्ध खड़ाथा तहाँ जानिकले देखतेही जरासन्ध श्रीकृष्णचन्द्र से अति अभिमान कर कहने लगा अरे! तू मेरे सोंही से भाग जा, मैं तुझे क्या मारूं तू मेरे समान का नहीं जो मैं तुझपर शस्त्र चलाऊं, भला बलरामको मैं देख लेताहूं श्रीकृष्णचन्द्र बोले अरे मूर्ख अभिमानी यह क्या बकता है जो शूरमा होते हैं बड़ा बोल नहीं बोलते सबसे दीनता करते हैं काम पड़ेपर अपना बल दिखाते हैं और जो अपने मुंह अपनी बड़ाई

मारते हैं सो क्या कुछ भले कहाते हैं कहा है कि गर्जता है सो बरसता नहीं इस पै वृथा बकवाद क्यों करता है?

इतनी बातके सुनतेही जरासन्ध ने क्रोध किया तो श्रीकृष्ण बलदेव चल खड़े हुए इनके पीछे वह भी अपनी सबसेना ले धाया औरउनसे यों पुकार के कह सुनाया अरे दुष्टो मेरे आगे से कहाँ भाग जाओगे बहुत दिन जीते बचे तुमने अपने मनमें क्या समझाहै अब जीते न रहने पाओगे जहां सब असुरों समेत कंस गया है तहांही सब यदुवंशियों समेत तुम्हें भी भेजूंगा महाराज ऐसे दुष्ट वचन उस असुर के मुख से निकलतेही कितनी एक दूर जाय दोनों भाई फिर खड़े हुए श्रीकृष्णजीने सब शस्त्र लिये और बलरामजीने हलमूसल ज्यों असुर दल उनके निकट गया त्यों दोनों वीर ललकार के ऐसे टूटे कि जैसे हाथियों के यूथ पै सिंह टूटे और लगा लोहा बाजने उसकाल बाजा मारू जो बजता था सो तो मेघ बाजता था और चारों ओर से राक्षसों का दल जो घिर आया था सो दल बादल सा छाया था और शस्त्रोंकी झड़ीसी लगीथी उनके बीच श्रीकृष्ण बलराम ऐसे शोभायमान लगते थे जैसे सघन बनमें दामिनी सुहावनी लगती है सब देवता अपने२ विमानों पर बैठ आकाश से देख२ प्रभुका यश गाते, और इन्हीं की जीत मनाते थे और उग्रसेन समेत यदुवंशी अति चिंता कर मनही मन पछताते थे कि हमने यह क्या किया जो श्रीकृष्ण बलराम को असुरदल में जाने दिया इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोलेकि पृथ्वीनाथ! जब लड़ते२ असुरोंकी बहुत सी सेना कटगई तब बलदेवजी ने रथसे उतर जरासन्ध को बांध लिया इतने में श्रीकृष्णजी ने बलरामजीसे कहाकि भाई इसे जीता छोड़दो मारोमत, क्योंकि यह जीताजायगातो फिर असुरों को साथ ले आवेगा तिन्हें मार हम भूमि का भार उतारेंगे और जो जीता न छोड़ोगे तो जो राक्षस भाग गए हैं सो हाथ न आवेंगे ऐसे बलदेवजी को समझाय प्रभुने जरासन्ध को छुड़वाय दिया वह अपने उन लोगों में गया जो रण से भाग के बचे थे।

चहुँदिशि चितै कहै पछिताय। सिगरी सेना गई बिलाय ॥
भयौ दुःख अति कैसे जीजै। अब घर छोड़ि तपस्या कीजै॥
मन्त्री तबहिं कहैं समझाय। तुम से ज्ञानी क्यों पछिताय॥
कबहूं हार जीत पुनि होई। राज्य देश छाँड़े नहिं कोई॥

क्या हुआ जो अबकी लड़ाई में हारे फिर अपना दल जोड़ लायेंगे और सब यदुवंशियों समेत श्रीकृष्ण बलदेव को स्वर्ग पठावेंगे तुम किसी बातकी चिंता मत करो महाराज ऐसे समझाय बुझाय जो असुर रणसे भागके बचे थे तिन्हें और जरासन्धको मन्त्री ने घर ले पहुँचाया और वह फिर वहां कटक जोड़ने लगा यहाँ श्रीकृष्ण बलराम रणभूमिमें देखते क्या हैं, कि लोहू की नदी बह निकली है तिस में रथ बिना रथी नाव से बहे जाते हैं ठौर ठौर हाथी मरे पहाड़से पड़े दृष्टि आते हैं उनके घावों से रक्त झरने की भाँति झरता है, तहां महादेव भी भूत प्रेत सङ्ग लिए अतिआनन्द कर नाच२ गाय २ मुण्डों की माला बनाय२ पहनते हैं भूतनी प्रेतनी योगिनियाँ खप्पर भर रक्त पीती हैं शृगाल, गृध्र, काग, लोथों पर बैठ२ मांसखाते हैं; और आपसमें लड़ते जाते हैं।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! जितने रथ हाथी घोड़े और राक्षस उस खेत में मरे थे, तिन्हें पवन ने तो समेट इकट्ठा किया और अग्नि ने पल भरमें सबको जलाय भस्म करदिया पंचतत्वमें पंचतत्व मिलगये उन्हें आतेतो सबने देखा पर जाते किसीने न देखा कि किधर गए ऐसे असुरोंकोमार भूमि का भारउतार श्रीकृष्णबलराम भक्तहितकारी उग्रसेन के पास आय दण्डवत कर हाथ जोड़ बोले कि महाराज! आपके पुण्य प्रतापसे असुर दल मार भगाया—अब निर्भय राज्य कीजे और प्रजाको सुख दीजे, इतना वचन इनके मुखसे निकलते ही राजा उग्रसेन ने अति आनन्दमान बड़ी बधाई की और धर्मराज करने लगे, इसमें कितने एकदिन पीछे जरासन्ध उतनीही सेना ले फिर चढ़ आया और श्रीकृष्ण बलदेवजी ने पुनि त्योंही मार भगाया ऐसे तेईस२ अक्षौहिणी ले जरासन्ध सत्रह बेर चढ़ आया, और प्रभु ने मार हटाया।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवमुनिने राजापरीक्षितसे कहाकि महाराज! इस बीच नारदमुनिजीके जोकुछ जीमेंआई तो ये एकाकी उठकर कालयवन के यहाँ गए इन्हें देखतेही वह सभासमेत उठ खड़ा हुआ, और उसने दण्डवत कर हाथजोड़ पूछा कि महाराज! आपका आना यहाँ कैसे हुआ।

सुनिकै नारद कहैं विचार। मथुरा में बलभद्र मुरारि॥
तो बिन तिन्हैं हनै नहिं कोय। जरासन्ध सों कछु नहिं होय॥
तू है अजर अमर अति बली। बालक बासुदेव औ हली॥

यों कह फिर नारदजी बोले कि जिसे तू मेघवर्ण कमलनयन अति सुन्दर बदन पीताम्बरपहरे पीतपटओढ़े देखे तिसका तू पीछाकर, बिन मारे मत छोड़ियो, इतनाकह नारदमुनि चले गए और काल यवन अपना दल जोड़ने लगा, इसमें कितने एक दिन बीच उसने तीस करोड़ म्लेच्छ अति भयावने इकट्ठे किए ऐसे कि जिनके मोटे भुज लम्बे गले बड़े दाँत मैले वेष भूरे केश नयनलाल घुंघची से तिन्हें साथले डंका दे मथुरापुरीपर चढ़ आया और उसे चारोंओरसे घेरलिया उसकाल श्रीकृष्णचन्द्रजीने उसका व्यौहार देख अपने मनमें विचारा कि अब यहां रहना भला नहीं क्योंकि आज यह चढ़ आयाहै. और कल को जरासन्ध भी चढ़आवे तो प्रजा दुःख पावेगी, इससे उत्तम यही है कि यहाँ न रहिये सब समेत अन्त जाय बसिए महाराज! हरिने यों विचार कर विश्वकर्मा को बुलाय समझाय बुझाय के कहा कि, तुम अभी जाके समुद्रके बीच एक नगर बनाओ ऐसाकि जिसमें सब यदुवंशी सुखसे रहैं पर वे यह भेद न जानें कि ये हमारे घर नहीं और पलभर में सबको वहां पहुँचावो इतनी बातके सुनतेही विश्वकर्मा ने जा समुद्रके बीच शुद्धधरती के ऊपर बारह योजन का नगर जैसा श्रीकृष्णने कहा था तैसाही रातमें बनाय उसकानाम द्वारका रख, आ हरिसे कहा फिर प्रभुने उसे आज्ञा दी कि इसी समय तू यदुवंशियों को वहां ऐसे पहुँचाय दे कि कोई यह भेद न जाने कि हम कहां आए और कौन ले आया।

इतना वचन प्रभु के मुख से ज्यों निकला त्यों रातों रातही उग्रसेन

बसुदेव समेत विश्वकर्मा ने सबयदुवंशियोंको ले पहुँचाया और श्रीकृष्ण बलरामजी वहां पधारे इसबीच समुद्र की लहरका शब्द सुन सब यदुवंशी चौंक पड़े और अति अचरज कर आपसमें कहने लगे कि मथुरामें समुद्र कहां से आया ? यह भेदकुछ न जाना इतनीकथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजापरीक्षितसे कहाकि पृथ्वीनाथ ! ऐसे सब यदुवंशियोंको "द्वारका में बसाय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने बलदेवजी से कहाकि भाई अब चलके प्रजा की रक्षा कीजै और कालयवन का बध कीजै इतना कह दोनों भाई वहां से चले ब्रजमण्डल में आये।

अध्याय ५२

(कालयवन बध, मुचुकुन्द तरण कृष्ण द्वारका गमन,)

श्रीशुकदेव मुनि बोलेकि महाराज ! ब्रजमण्डलमें आतेही श्रीकृष्णजी ने बलरामजी को तो मथुरामें छोड़ा और आप रूप सागर जगत उजागर पीताम्बर पहने पीतपट ओढ़े सब शृङ्गार किए कालयवन के दल में जाय उसके सन्मुख जाय निकले वह इन्हें देखतेही अपने मनमें कहने लगाकि होनहो यह कृष्णहै नारदमुनिने जोचिह्न बताएथे सोसब इसमेंपायेजातेहैं इसी ने कंसादिक असुर मारे जरासन्धकी सेना हनी,ऐसे मनहीमनविचार कहा—

कालयवन यों कहै पुकारी । काहे भागे जात मुरारी ।
आय परयो अब मोसों काम । ठाढ़े रहो करो संग्राम ॥
जरासन्ध हौं नाहीं कंस । यादवकुल को करौं बिध्वंस ॥

हे राजन् ! यों कह कालयवन अति अभिमान कर अपनी सब सैना को छोड़ अकेला श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे धाया पर उस मूरखने प्रभुका भेद न पाया आगे२ तो हरि भागे जाते थे और एक हाथके अन्तरसे पीछे२वह दौड़ा जाता था, निदान भागते२जब अनेक दूर निकल गए तब प्रभु एक पहाड़ की गुफा में घुस गए वहां जा देखा तो एक पुरुष सोया पड़ा है,यह झट अपना पीताम्बर उसे ओढ़ाय आप अलग एक ओर छिप रहे पीछे से

काल यवन भी दौड़ता हाँफता उस अति अंधेरी कंदरा में जा पहुँचा और पीताम्बर ओढ़े उस पुरुष को सोता देख इसने अपने जी में जाना कि यह कृष्ण ही छल कर सो रहा है, महाराज ऐसे मनही मन विचार क्रोध कर उस सोते हुवे को एक लात मार कालयवन बोला अरे कपटी! क्या मिस करि साधु की भांति निश्चिन्ताईसे सो रहाहै उठ मैं तुझे अभी मारता हूँ, यों कह इसने उसके ऊपर से पीताम्बर झटक हटा लिया, तब वह नींद से चौंक पड़ा और जो उसने इसको ज्यों क्रोधकर देखा तो यह जलकर भस्म हो गया इतनी बात के सुनते ही राजा परीक्षित ने कहा—

यह शुकदेव कहो समुझाय। क्यों वह रह्यो कन्दरा जाय॥
ताकी दृष्टि भस्म क्यों भयो। कौने वाहि महावर दयो॥

श्रीशुकदेव मुनि बोले पृथ्वीनाथ इक्ष्वाकुवंशी क्षत्रिय मान्धाता का बेटा मुचुकुन्द अतिबली महा प्रतापी जिसका अरि दल दलन यश छाय रहा नौखण्ड, एक समय सब देवता असुरों के सताये निपट घबराये मुचुकुन्द के पास आए, और दीनता कर उन्होंने कहा महाराज! असुर बहुत बढ़े अब तिनके हाथसे बच नहीं सकते अब हमारी रक्षा करो, यही रीति परम्परा से चली आई है जब२ सुर, मुनि, ऋषि अबल हुए हैं तब२ उनकी सहायता क्षत्रियोंने करी है इतनी बातके सुनते ही मुचुकुन्द इनके साथ हो लिया और जाके असुरों से युद्ध करने लगा उनसे लड़ते२ कितने हीं

युगबीत गए तब देवताओंने मुचुकुन्दसे कहाकि महाराज आपने हमारेलिए बहुत श्रमकिया अब कहींबैठ बिश्राम लीजिए और देहको सुख दीजिए।

बहुत दिनन कीनों संग्राम। गयो कुटुम्ब सहित धन धाम॥
रह्यो न कोऊ तहाँ तिहारो। ताते अब जनि घर पगुधारो॥

और जहां तुम्हारा मनमाने तहां जावो यहसुन मुचुकुन्दने देवताओं से कहा कृपानाथ! मुझे कृपाकर ऐसी एकान्त ठौर बतावो कि. जहां जाय मैं निश्चिन्ताईसे सोऊँ और कोई न जगावे, इतनी बातके सुनते ही प्रसन्न देवताओंने मुचुकुन्द से कहा कि महाराज! आप धौलागिरि पर्वत की कंदरा में जाय शयन कीजिए, वहाँ तुम्हें कोई न जगावेगा और जो कोई जाने अनजाने वहाँ जा तुम्हें जगावेगा तो वह देखते ही तुम्हारी दृष्टि से जल कर राख हो जावेगा, इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा से कहा कि, महाराज ऐसे देवताओं से वर पाय मुचुकुन्द उस गुफा में सो रहा था इससे उसकी दृष्टि पड़ते ही कालयवन जलकर छार हो गया आगे करुणानिधान कान्ह भक्त हितकारी ने मेघवर्ण, चन्द्रमुख, कमलनयन चतुर्भुज शङ्ख चक्र गदा पद्म लिये मोरमुकुट मकराकृतकुण्डल बनमाल और पीताम्बर पहने मुचुकुन्द को दर्शन दिया स्वरूप देखते ही वह साष्टाङ्ग प्रणाम कर खड़ा हो हाथ जोड़ बोला कि कृपानाथ! जैसे आपने इस महा अंधेरी कन्दरा में आय उजाला कर तम दूर किया तैसे दया कर भेद बताय मेरे मनका भी भ्रम दूरकीजै, श्रीकृष्णचन्द्र- बोलेकि मेरे तो जन्म कर्म और गुण हैं घने, वे किसी भांति गिने न जाँये, कोई कितना ही गिने पर मैं इस जन्म का भेद कहताहूँ सो सुनो कि अबके बसुदेव के यहां जन्म लिया इससे बासुदेव मेरा नाम हुआ और मथुरापुरी से सब असुरों समेत कंसको मैंने ही मार भूमि का भार उतारा और सत्रह बेर तेईस तेईस अक्षौहिणी सेना ले जरासंध युद्ध करनेको चढ़ आया सो भी मुझसे हारा और यह काल यवन तीनकरोड़ म्लेच्छ की भीड़भाड़ ले लड़नेको आयाथा सो दृष्टि से जल मरा इतनी बात प्रभु के मुखसे निकलतेही सुनकर मुचुकुन्द को

ज्ञान हुआ तो बोलाकि महाराज! आपकी माया अति प्रबलहै उसने सारे संसारको मोहा है इसीसे किसीकी सुधि बुधि ठिकाने नहीं रहती!

करत कर्म बश सुखके हेतु। ताते भारी दुख सहलेत ॥

दोहा—चुभै हाड़ ज्यों श्वान मुख,रुधिर चिचोरें आप ।

जानत ताही से चुवत, सुख मानै सन्ताप ॥

औरजो इस संसारमें आयाहै सो गृहरूपी अन्धकूपसे बिनाआपकी कृपा निकल नहीं सकता,इससे मुझेभी चिन्ताहैकि मैं कैसे गृहरूप कूपसे निकलूंगा श्रीकृष्ण बोले सुन मुचुकुन्द बाततो ऐसीहै जसे तूने कही पर मैं तेरे तरनेका उपाय बताए देताहूँ सो तूकर,तैंने राज्य पाय भूमि धन स्त्री के लिए अधिक अधर्म कियेहैं सो बिन तप किए न छूटेंगे,इससे उत्तर दिशामेंजाय तू तपस्या कर यहीं अपनी देह छोड़ फिर ऋषिकेघर जन्म लेगा,तब तू मुक्तिपदार्थ पावेगा महाराज इतनी बात जो मुचुकुन्दने सुनी तो जानाकि अब कलियुग आया, यह समझ प्रभुसे बिदाहो दण्डवतकर परिक्रमा दे मुचुकुन्द तो बदरीनाथको गया, और श्रीकृष्णजीने मथुरामें आय बलराम से कहाकि—

कालयवनको कियो निकन्द। बदरीबन पठयौ मुचुकुन्द ॥

कालयवन की सेना घनी। तिन घेरी मथुरा आपनी ॥

आवहु तहाँ म्लेच्छन मारो। सकल भूमि को भार उतारो ॥

ऐसे कह हलधर को साथले श्रीकृष्णचन्द्र मथुरापुरी से निकल वहां आए जहाँ कालयवन का दल खड़ा था और आतेही दोनों उनसे युद्ध करने लगे, निदान लड़ते लड़ते जब म्लेच्छ की सेना प्रभु ने सब मारी तब बलदेवजी से कहा कि भाई! अब मथुरापुरी की सब सम्पत्ति ले द्वारका को भेज दीजिए बलराम जी बोले बहुत अच्छा तब श्रीकृष्णचन्द्र ने मथुरा का सब धन निकलवा भैंसों छकड़ों ऊँटों हाथियों पर लदवाय द्वारका को भेजदिया उसबीच फिर जरासन्ध तेईस अक्षौहिणी सेना ले मथुरापुरी पर चढ़ आया तब श्रीकृष्ण बलराम अति घबराय के निकले और उसके सन्मुख आ दिखाई दे उसके मनका संताप मिटाने को भाग चले तब मन्त्री ने जरासंध से कहा कि महाराज! आपके प्रताप के आगे

ऐसा कौन बली है जो ठहरे देखो वे दोनों भाई कृष्ण बलराम छोड़के सब धन धाम अपना प्राण लेकर तुम्हारे त्रास के मारे नंगे पांव भागे चले जाते हैं इतनी बात मन्त्रीसे सुन जरासन्ध भी यों कह पुकार कर कहता हुआ सेना ले उनके पीछे दौड़ा ।

काहे डरके भागे जात । ठाढ़े रहौ करौ कुछ बात ॥
परत उठत कम्पत क्यों मारी । आई है ढिग मृत्यु तुम्हारी ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी मुनि बोले कि पृथ्वीनाथ ! जब श्रीकृष्ण और बलदेवजी ने भागके लोक रीति दिखाई तब जरासन्धके मन से पिछला सब शोक गया,और अति प्रसन्नहुआ ऐसाकि जिसका कुछ वर्णन नहीं किया जाता,आगे श्रीकृष्ण बलराम भगते२एक गौतम नामक पर्वत ग्यारहयोजन ऊंचा था तिसपर चढ़गये, और उसकी चोटी पर जाय खड़े भये ।

देख जरासन्ध कहे पुकारी । शिखर चढ़े बलभद्र मुरारी ॥
अब किमि हमसों जाय पलाय । या पर्वत को देहु जलाय ॥

इतना वचन जरासन्ध के मुखसे निकलते ही असुरों ने उस पहाड़ को जा घेरा नगर२गाँव गाँवका काठ किबाड़ लाय उसके चारोंओर चुन दिया तिस पर कड़ गूदड़ घी-तेल से भिगो भिगो डालकर आग लगादी जब वह आग पर्वत की चोटी तक लगी, तब उन दोनों भाइयोंने वहां से इस भांति द्वारका की बाटली कि किसी ने उन्हें जाते न देखा और पहाड़ जलकर भस्महोगया उसकाल जरासन्ध श्रीकृष्ण बलरामको उस परवतके सङ्ग जला मरा जान अति सुखमान सब दल साथ ले मथुरापुरी में आया, और वहाँका राज्य ले२नगरमें ढँढोला दे उसने अपनाथापा बैठाया जितने उग्रसेन बसुदेव के पुराने मन्दिरथे सोसब ढहवाये और उसने आप-अपनेनयेमन्दिर बनवाये इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा से कहा कि महाराज ! इस रीति से जरासन्धको धोखादे श्रीकृष्ण बलरामजी तो द्वारका में जाय बसे और जरासंध भी मथुरा नगरी से चल सब सेना ले अति आनन्द करता निःशङ्क हो अपने घर आया ।

अध्याय ५३

(भगवान का ब्राह्मण द्वारा रुक्मिणी का सन्देशा स्वीकार करना)

श्रीशुकदेवमुनि बोले कि महाराज! अब आगे कथा सुनिए कि, जब कालयवन को मार मुचुकुन्द को तार जरासन्धको धोका दे बलदेवजी को साथ ले आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र ज्यों द्वारका में गये त्यों सब यदुवंशियों के जीमें जी आया और सारे नगरमें सुखछाया सब चैन आनन्द से पुरवासी रहने लगे इसमें कितने एक दिन पीछे एक दिन कई एक यदुवंशियों ने राजा उग्रसेन से कहा कि, महाराज! अब कहीं बलराम जी का ब्याह किया चाहिए क्योंकि ये समर्थ हुए इतनी बातके सुनते ही उग्रसेन ने एक ब्राह्मण को बुलाय अति समझाय बुझायके कहाकि देवता! तुम कहीं जा कर अच्छा कुल घर देख बलरामजी की सगाई कर आवो इतना कह रोरी अक्षत रुपया नारियल मंगवाय उग्रसेनजी ने उस ब्राह्मण को तिलक कर रुपया नारियल दे बिदा किया वह चला चला आनर्त देशमें राजा रैवत के यहाँ गया और उसकी कन्या रेवती से बलरामजी की सगाई कर लग्न ठह-राय उसके ब्राह्मण के साथ टीका लिवाय द्वारका में राजा उग्रसेन के पास ले आया और उसने वहाँ का सब व्यौरा कह सुनाया सुनते ही राजा उग्रसेन ने अति प्रसन्न हो उस ब्राह्मण को बुलाया जो टीका ले आया था

मङ्गलाचार करवाय टीका लिया, और बहुतसा धन दे उसे विदा किया पीछे आप यदुवंशियों को साथ ले बड़ी धूम धामसे आनर्त देश में जाय बलराम जी का ब्याह कर लाए।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनिने राजा से कहा कि पृथ्वीनाथ! इस रीतिसे तो सब यदुवंशी ब्याह कर लाये और श्रीकृष्णचन्द्रजी आपही भाई को साथ ले कुण्डिनपुर में जाय भीष्मक नरेशकी बेटी रुक्मिणी शिशुपाल की माँग को राक्षसों से युद्ध कर छीन लाय घर में आय ब्याह किया, यह सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि कृपासिंधो भीष्मकसुता रुक्मिणी को श्रीकृष्णचन्द्र कुण्डिनपुर में जाय असुरों को मार किस रीति से लाये सो तुम मुझे समझाकर कहो, श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! आप मन लगाय सुनिये मैं सब भेद वहाँका समझाकर कहता हूँ कि, विदर्भ देशमें कुण्डिनपुर नाम नगर तहाँ भीष्मक नाम नरेश, जिसका यश छा रहा चहुँ देश में उनके यहां जाय श्रीसीताजी ने अवतार लिया कन्या के होतेही राजा भीष्मक ने ज्योतिषियों को बुलाय भेजा उन्होंने आय लग्न साध उस लड़की का नाम रुक्मिणी धर कर कहा कि महाराज हमारे विचार में ऐसा आता है कि, यह कन्या अति सुशील स्वभाव रूप निधान गुणों में लक्ष्मी समान होगी और आदि पुरुष से ब्याही जायगी इतना वचन ज्योतिषी के मुख से निकलते ही राजाभीष्मकने अति सुखमान बड़ा आनन्द किया और बहुतसा कुछ ब्राह्मणोंको दिया आगे वह लड़की चन्द्र-कला की भाँति दिन२ बढ़ने लगी, और लगी बाल लीला कर माता पिता को सुख देने इसमें कुछ बड़ी हुई तो सखी सहेलियों के साथ अनेक२ प्रकार के अनूठे खेल खेलने लगी, एकदिन यह मृगनयनी चम्पक वरणी चन्द्रमुखी सखियों के संग आंख मिचौनी खेलने गई तो खेलते समय सब सखियाँ उससे कहने लगीं कि रुक्मिणी तू हमारा खेल बिगाड़ने को आई है क्यों कि जहाँ तू हमारे साथ अन्धेरे में छिपती है तहाँ तेरे मुखचन्द्र की ज्योति से चँदनी हो जाती है इससे छिप नहीं सकतीं, यह सुन वह हँसकर

चुप हो रही, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने कहाकि महाराज इस भाँति वह सखियों से खेलती थी और दिन२ छबि उसकी दूनी होती थी इसी बीच एक दिन नारदजी कुण्डिनपुर में आये और रुक्मिणी को देख श्रीकृष्णचन्द्रजी के पास द्वारका में जाय उन्होंने कहा कि महाराज कुण्डिनपुर में राजा भीष्मक के घर एक कन्या रूप गुणशील की खान लक्ष्मीजीके समान जन्मी है सो तुम्हारे योग्य है यह भेद सब नारद मुनिसे सुन पाया तभी से रात दिन अपना मन उस पर लगाया, महाराज इसी रीति करके तो श्री कृष्णचन्द्रजी ने रुक्मिणी का नाम गुण सुना और जैसे रुक्मिणी ने प्रभु का नाम और यश सुना सो कहता हूँ कि एक समय देश२के कितने एक याचकों ने जाय कुण्डिनपुर में श्रीकृष्णचन्द्र का यश गाया जैसे प्रभु ने मथुरा में जन्म लिया और गोकुल वृन्दाबन में जाय ग्वाल बालों के सङ्ग मिल बाल चरित्रकिया और असुरोंको मार भूमि का भार उतार यदुवंशियों को सुख दिया तैसे ही गाय सुनाया।

हरिके चरित्र सुनते ही सब नगर निवासी अति आश्चर्य कर आपस में कहने लगे कि, जिनकी लीला हमने कान से सुनी तिन्हें कब नयनों से देखेंगे इस बीच याचक किसी ढब से राजा भीष्मक की सभा में जाय प्रभु का चरित्र और गुण गाने लगे उस काल—

चढ़ी अटा रुक्मिणी सुन्दरी। हरि चरित्र ध्वनि श्रवणन परी॥
अरज करे भूली मन रहै। फेर उझक कर देखन चहै॥
सुनके कुंवरि रही मन लाय। प्रेमलता उर उपजी आय॥
भई मग्न बिह्वल सुन्दरी। वाकी सुधि बुधि हरिगुण हरी॥

यों कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि, इस भाँति रुक्मिणीजीने प्रभुका यश और नाम सुनातो उसी दिनसे रातदिन आठपहर चौसठघड़ी सोते जागते बैठते खड़े चलते फिरते खाते पीते खेलते उन्हीं का ध्यान किये रहै और गुण गाया करै नित भोर ही उठ स्नान करै मिट्टी की गौरी बनाय रोरी अक्षत पुष्प चढ़ाय धूप दीपकर मनाय हाथ जोड़ शिर नवाय कर कहा करै—

मो पर गौरि कृपा तुम करौ। यदुपति पतिदे मम दुख हरौ॥

इसी रीति से सदा रुक्मिणी रहने लगी, एक दिन सखियों के संग खेलती थी कि राजा भीष्मक उसे देख अपने मनमें चिन्ता कर कहने लगा कि अब यह हुई ब्याहन योग, इसे शीघ्र ही न दीजै तो हंसेंगे लोग, कहा है कि जिसके घरमें कन्या बड़ी होय तिसका दान पुण्य जप तप करना वृथा है क्योंकि किये से तब तक कुछ धर्म नहीं होता, जब तक कन्या के ऋण से नहीं उबार होय यों विचार राजा भीष्मक अपनी सभा में आये सब मन्त्री और कुटुम्ब के लोगों को बुलाय बोले भाइयो ! कन्या ब्याहने योग्य हुई इसके लिये कुलवान् गुणवान् रूप निधान शीलवान् कहीं वर ढूंढना चाहिये, इतनी बात के सुनते ही उन लोगों ने अनेक२ नरेशों के कुल गुण रूप और पराक्रम कह सुनाये पर राजा भीष्मक के चितमें किसी की बात कुछ न आई, तब उनका बड़ा बेटा जिसका नाम रुक्म सो कहने लगा कि पिता ! नगर चन्देरी का राजा शिशुपाल अति बलवान है और सब भांति से हमारे समान है इससे रुक्मिणीकी सगाई वहां कीजै और जगत में यशलीजै, महाराज उसकी भी बात राजाने सुनी अनसुनी की तब रुक्मकेश नाम उनका छोटा लड़का बोला—

रुक्मिणी पिता कृष्ण को दीजे । वासुदेव से नाता कीजे ॥
यह सुन भीष्मक हरषे गात । कही पूत तैं नीकी बात ॥

दोहा—छोटे बाड़न पूछ के, कीजे मन परतीत । सार बचन गहि लीजिये, यही जगत की रीति ॥

ऐसे कह फिर राजा भीष्मक बोले, कि यह तो रुक्मकेशने भली बात कही यदुवंशियों में राजा शूरसेन बड़े प्रतापी यशी हुए और तिन्हीं के पुत्र बसुदेव हैं सो कैसे हैं की जिनके घर में आदि पुरुष अविनाशी सकल देवनके देव श्रीकृष्ण ने जन्म ले महाबली कंसादिक राक्षसों को मार और भूमि का भार उतार यदुकुल को उजागर किया और सब यदुवंशियों समेत प्रजा को सुख दिया ऐसे जो द्वारिकानाथ श्रीकृष्णचन्द्र उन्हें रुक्मिणी दें तो जगत में यश और बड़ाईलें इतनी बात के सुनते ही सब सभा के लोग अति प्रसन्नहो बोले कि महाराज ! यह तो तुमने भली विचारी ऐसा वर

घर कहीं और नहीं मिलेगा इससे उत्तम यही है कि श्रीकृष्णचन्द्रजी को रुक्मिणी ब्याहदीजै महाराज! जब सभाके लोगोंने यों कहा तब राजा भीष्मक का बड़ा बेटा जिसकानाम रुक्मसो सुन निपट झुंझलाय बोला।

समझ न बोलत महा गंवार। जानत नहीं कृष्ण व्यौहार॥
सोलह वर्ष नन्द के रह्यो। तब अहीर सब काहू कह्यो॥
कामरि ओढ़ी गाय चराई। बन में बैठि छांछ जिन खाई॥

वह तो गंवार ग्वाल है उसकी जाति पांति का क्या ठिकाना और जिसके मा बाप ही का भेद नहीं जाना जाता उसे हम पुत्र किसका कहैं कोई नन्द गोप का जानता है कोई बसुदेव का कर मानता है पर आज तक यह भेद किसी ने न पाया कि कृष्ण किसका बेटा है इसी से जो जिसके मन में आता है सो गाता है हम राजा हमें सब कोई जानता मानता है और यदुवंशीराजा कब भये क्या हुआ जो थोड़े दिनों से बल-कर इन्होंने बड़ाई पाई पहला कलंक तो अब आन छूटेगा कि वह उग्रसेन का चाकर कहाता है उससे सगाई कर क्या हम कुछ संसारमें यश पावेंगे कहा है ब्याह बैर और प्रीति समान से ही करिये तो शोभा पाइये और जो कृष्ण को देंगे तो लोग कहेंगे ग्वाल का सारा तिससे सब जायगा नाम और यश हमारा, महाराज यों कह फिर रुक्म बोला कि नगर चन्देरी का राजा शिशुपाल बड़ा बली, और प्रतापी उसके डर से सब राजा थर२ कांपते हैं और परम्परा से उसके घर में राज गद्दी चली आती है इससे अब उत्तम यही है, कि रुक्मिणी उसी को दीजै और मेरे आगे फेर कृष्ण का नाम भी न लीजै, इतनी बात के सुनते ही सब सभा के लोग मारे डर के मनहीं मन पछता पछता के चुपहो रहे और राजा भीष्मक भी कुछ न बोला इसमें रुक्म ने ज्योतिषी को बुलाय शुभ दिन लग्न ठहराय एक ब्राह्मण के हाथ राजा शिशुपाल के यहां टीका भेज दिया वह ब्राह्मण टीका लिये चला२ नगर चन्देरी में जाय राजा शिशुपाल की सभा में पहुँचा देखते ही राजा ने प्रणाम कर जब ब्राह्मण से पूछा कि कहो देवता! आपका आना कहां से हुआ और यहाँ किस मनोरथ के लिये आये तब तो

उस विप्र ने आशीष दे अपने आने का सब ब्यौरा कहा, सुनते ही राजा शिशुपाल ने अपने पुरोहित को बुलाय टीका लिया और उस ब्राह्मण को बहुतसा-कुछ दे विदा किया पीछे जरासन्ध आदि सब देश२ के नरेशों को नौत बुलाया, वे अपना दल ले २ आये, तब यह भी अपना सब कटक ले ब्याहने चला उस ब्राह्मण ने आ राजा भीष्मक से कहा जो टीका ले गया था कि महाराज। मैं राजा शिशुपाल को टीका दे आया-- वह बड़ी धूम धाम से बरात ले ब्याहने आता है आप अपना कार्य कीजै यह सुन राजा भीष्म पहले तो निपट उदास हुए पीछे कुछ सोच समझ मन्दिर में जाय उन्होंने पटरानी से कहा वह सुनकर लगी मंगलामुखी और कुटम्ब की नारियों को बुलाय मङ्गलाचार करवाय ब्याह की सब रीति भाँति करने फिर राजा ने बाहर आ प्रधान और मन्त्रियों को आज्ञा दी कि कन्या के विवाह में जो जो वस्तु चाहिए सो२ सब इकट्ठा करो, राजा की आज्ञा पाते ही मन्त्री और प्रधानने सब वस्तु बातकी बात में बनवाय मंगवाय लाय धरीं, लोगों ने देखा सुना तौ यह चरचा नगर में फैली कि, रुक्मिणी का विवाह श्रीकृष्णचन्द्रसे होता था सो दुष्ट रुक्मने होने न दिया अब शिशुपाल से होगा।

इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा कि पृथ्वीनाथ। नगर में तौ यह घर घर बात होरही थी और राज मन्दिर में नारियां गाय बजाय के रीति भाँति करती थीं ब्राह्मण वेद पढ़ २ टहलें करवाते थे, ठौर २ दुन्दुभी बजाते थे, दरवाजे २ पर सपल्लव केले के खम्भ गाढ़ २ सोने के कलश भर २ लोग धरते थे और तोरण वन्दनवार बाँधते थे, और नगर निवासी न्यारे ही हाट बाट चौहटे झार बुहार पाट से पाटते थे, इस भांति घर और बाहर धूम मच रही थी, कि उसी समय दो चार सखियों ने जा रुक्मिणी से कहा कि—

तोहि रुक्म शिशुपाल दई। अब तू रुक्मणि रानी भई॥
बोली सोच नाय के शीश। मन वच क्रम मेरे जगदीश॥

इतना कह रुक्मिणी ने अति चिन्ता कर एक ब्राह्मण को बुलाय

हाथ जोड़ उसकी बहुतसी विनती और बड़ाई कर अपना मनोरथ उसे सब सुनाय के कहा कि महाराज मेरा सन्देश द्वारिका में ले जावो और द्वारिकानाथ को सुनाय उन्हें साथकर ले आवो तो मैं बड़ा गुणमानूंगी और यह जानूंगी कि तुमने दया कर मुझे श्रीकृष्ण वर दिया इतनी बात के सुनते ही वह ब्राह्मण बोला कि अच्छा तुम सन्देश कहो मैं ले जाऊंगा और श्रीकृष्णचन्द्र जी को सुनाऊंगा, वे कृपानाथ हैं जो कृपा कर मेरे संग आवेंगे तो ले आऊंगा इतना वचन जो ब्राह्मण के मुख मे निकला त्यों रुक्मिणी जी ने एक पाती प्रेम रङ्गराती लिख उसके हाथ दी और कहा कि श्री कृष्णचन्द्र आनन्द कन्द को पाती दे मेरी ओर से कहियो कि उस दासी ने कर जोड़ अति बिनती कर कहा है, कि आप अन्तर्यामी हैं घट घट की जानते ही हैं जिसमें लाज रहे सो कीजे और इस दासी को आय बेग दर्शन दीजै महाराज ऐसे कह सुन जब रुक्मिणी ने उस ब्राह्मण को विदा किया तब वह प्रभु का ध्यान कर नाम लेता द्वारिका को चला और हरि इच्छा से बात के कहते२ जा पहुँचा वहाँ जाय देखे तो समुद्र के बीच वह पुरी है। जिसके चहुँ ओर बड़े बड़े पर्वत और बन उपवन शोभा दे रहे हैं तिनमें भांति भाँति के पशु पक्षी बोल रहे हैं और निर्मल जल भरे सुथरे सरोबर उनमें कमल हड़ बढ़ाय रहे तिन पर भौंरों के झुण्ड के झुण्ड गूंज रहे तीर पै हंस सारस आदि पक्षी कलोल कर रहे कोसों तक अनेक२ प्रकार के फूल फलों की बाड़ियां चली गई हैं तिन बाड़ों पर पनबाड़ियाँ लहलहा रही हैं बावड़ी इन्दारों पै खड़े मीठे सुरों में गाय२ माली रहंट परोहे चलाय २ ऊंचे नीर सींच रहे हैं, पनघटों पर पनहारियों के ठट्ठ के ठठ्ठ लगे हुए हैं यह छवि निरख हरष वह ब्राह्मण जो आगे बढ़ा तो देखता क्या है कि नगर के चारों ओर अति ऊंचा कोट उसमें चार फाटक तिनमें कंचन खचित जड़ाऊ किवाड़ लगे हुए हैं, और पुरी के भीतर चाँदी सोने के मणिमय पचखने सतखने मन्दिर ऐसे ऊंचे कि आकाश में बातें करें जगमगा रहे हैं, तिनके कलश

कलशियां बिजली सी चमकती हैं वर्ण २ की ध्वजा पताका फहराय रहे हैं खिड़की झरोखे मोरियों जालियों से सुगन्ध की लपट आय रही हैं द्वार २ सपल्लव केले के खम्भ और कंचन कलश भरे धरे हैं, तोरण बन्दनवार बंधे हुए हैं और घर २ आनन्द के बाजने बाज रहे हैं. ठौर ठौरकथा पुराण और हरिचर्चा होरहीहै प्रजा सुखमे बास करतेहैं सुदर्शनचक्रपुरीकी रक्षाकरताहै।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव मुनि बोले की राजा ऐसी जो सुन्दर सुहावनी द्वारिकापुरी तिसे देखता २ वह ब्राह्मण राजा उग्रसेन की सभा में जा खड़ा हुआ और आशीष देकर वहाँ इसने पूछा कि श्रीकृष्णचन्द्र जी कहां बिराजते हैं तब किसी ने इसे हरि का मन्दिर बताय दिया यह जो द्वार पर खड़ा हुआ तो द्वारपालों ने इसे देखकर दंडवत कर पूछा—

कहिये आप कहां ते आये। कौन देश की पाती लाये॥

यह बोला मैं ब्राह्मण हूँ और कुण्डिनपुर का रहनेवाला राजा भीष्मक की कन्या रुक्मिणीजी की चिट्ठी श्रीकृष्ण को देने आया हूँ इतनी बात सुनते ही पौरियों ने कहा महाराज! आप मन्दिर में पधारिये श्रीकृष्णचन्द्र सौंही सिंहासन पर बिराजते हैं यह वचन सुन ब्राह्मण जो भीतर गया तो हरि ने देखते ही सिंहासन से उतर दण्डवत कर अति आदर मान किया और सिंहासन पर बिठाय चरण धोय चरणामृत लिया और ऐसे सेवा करने लगे जैसे कोई अपने इष्ट देव की सेवा करे, निदान प्रभु ने सुगन्ध उबटन लगाय नहलवाय धुलवाय पहले तो उसे षटरस भोजन करवाये फेर बीड़ा दे केशर चन्दन से चरच फूलों की माला पहिराय मणिमय मन्दिर में ले जाय एक सुथरे जड़ाऊ छपरखट पै लिटाया, महाराज! वह भी बाट का हारा थका तो था ही लेटते ही सुखपाय सोगया श्रीकृष्णजी कितनी एक बेर तक उसकी बात सुनने की अभिलाषा किये वहां बैठे मनही मन कहते रहे कि अब उठे निदान जब देखा कि न उठा तब आतुरहो उसके पैताने बैठ लगे पाँव दाबने इसमें उसकी नींद टूटी तो वह उठ बैठा. तब हरि ने उसकी क्षेम कुशल पूंछ पूंछाः—

नीके राज देश तुमतनो। हमसों भेद कहो अपनो॥
कौन काज यहां आवन भयौ। दरश दिखाय हमैं सुखद यौ॥

ब्राह्मण बोला कि कृपानिधान! आप मन दे सुनिये मैं अपने आने का कारण कहता हूँ, कि महाराज कुण्डिनपुर के राजा भीष्मक, की कन्या ने जबसे आपका नाम और गुण सुना है तभी से वह निशदिन तुम्हारा ध्यान किये रहती है और कोमल चरणों की सेवा किया चाहती है संयोग भी आय बना था पर बात बिगड़ गई प्रभु बोले सो क्या ब्राह्मण ने कहा दीन दयाल एक दिन राजा भीष्मकने अपने सब कुटुम्ब और सभाके लोगों को बुलाय के कहाकि भाइयो! कन्या ब्याहने योग्य हुई अब इसके लिये बर ठहराया चाहिए इतना बचन राजा के मुख से निकलने ही उन्होंने अनेक राजाओं का कुल गुण नाम और पराक्रम कह सुनाया पर इनके मन में एक न आया तब रुक्मकेशने आपका नाम सुनाया तो प्रसन्न हो राजा ने उसका कहना मान लिया और सबसे कहा कि भाइयो मेरे मन में तो इसकी बात पत्थर की लकीर हो चुकी तुम क्या कहते हो वे बोले महाराज ऐसा वर घर जो त्रिलोक में ढूंढियेगा तो न पाइयेगा इससे अब उचित यही है कि बिलम्ब न कीजै शीघ्र श्रीकृष्णचन्द्रजी से रुक्मिणी का विवाह कर दीजे, महाराज यही बात ठहर चुकी थी इसमें रुक्म ने भांजी मार रुक्मिणी की सगाई शिशुपाल से की अब वह सब असुर दल साथ ले ब्याह को चढ़ा है।

इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेवजी बोले पृथ्वीनाथ! ऐसे उन ब्राह्मण ने समाचार कह रुक्मिणी जी की चिट्ठी हरि के हाथ दी प्रभु ने अति हित से पाती ले छातीसे लगायली, और पढ़कर प्रसन्नहो ब्राह्मण से कहा देवता तुम किसी बात की चिन्ता मत करो, मैं तुम्हारे साथ चल असुरों को मार उनका मनोरथ पूरा करूंगा यह सुनकर ब्राह्मण को धीरज हुआ पर रुक्मिणी का ध्यान कर चिन्ता करने लगा।

अध्याय ५४ रुक्मिणी हरण लीला।

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा! श्रीकृष्णचन्द्र ने ऐसे उस ब्राह्मण को ढाढस बँधाय फिर कहा—

दोहा—जैसे घिसके काठते, काठहि ज्वाला जारि। ऐसे सुन्दरि ब्याइहौं, दुष्ट असुरदल मारि॥

इतना कहा फिर सुथरे वस्त्र आभूषण मन मानते पहन राजा उग्रसेन के पास जाय हाथ जोड़कर कहा महाराज कुण्डिनपुर के राजा भीष्मक ने अपनी कन्या देने को पत्र लिखकर पुरोहित के हाथ मुझे अकेला बुलाया है जो आपकी आज्ञा हो तो जा और उसकी बेटी ब्याह लाऊं।

सुनकर उग्रसेन यों कहै। दूर देश कैसे मन रहे॥
तहां अकेले जाय मुरारि। मत काहु से उपजे रारि॥

तब तुम्हारा समाचार हमें यहाँ कौन पहुँचावेगा, यों कह पुनि उग्रसेन बोले कि अच्छा तो तुम वहाँ जाना चाहते हो तो अपनी सब सेना साथ ले, दोनों भाई जावो और ब्याहकर शीघ्र चले आवो वहाँ किसी से झगड़ा लड़ाई न करना क्योंकि तुम चिरंजीव हो तो सुन्दरी बहुत आय रहैंगी आज्ञा पाते ही श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि महाराज! तुमने सच कहा, पर मैं आगे चलता हूँ आप कटक समेत बलरामजी को पीछे से भेज दिजियेगा, ऐसा कह हरि उग्रसेन वसुदेव से बिदा हो इस ब्राह्मण के निकट आये

और रथ समेत अपने दारुक सारथी को बुलवाया, वह प्रभु की आज्ञा पाते ही चार घोड़े का रथ तुरन्त जोत लाया तब श्रीकृष्णचन्द्र उसपर चढ़े और ब्राह्मण को पास बिठाय द्वारका से कुण्डिनपुर को चले जो नगर के बाहर निकले तो देखते हैं कि दाहिनी ओर तो मृग के झुण्ड के झुण्ड चले जाते हैं और सन्मुख से सिंह सिंहनी अपना भक्ष्य लिये गर्जते आते हैं यह शुभ शकुन देख ब्राह्मण बोला कि महाराज! इस समय इस शकुन के देखने से मेरे विचार में आता है कि, ये जैसे अपना काज साधके आते हैं तैसे ही तुम भी अपना काज सिद्ध कर आवोगे, श्री कृष्णचन्द्र बोले आपकी कृपा से, इतना कह हरि वहां से आगे बढ़े और नये नये देश नगर गांव देखते देखते कुण्डिनपुर में जा पहुँचे तो वहाँ देखा कि ठौर ठौर ब्याह की सामा जो संजोयी धरी है तिससे नगर की छवि और की और ही होरही है।

झरों गलि चौहटे छावै। चोवा चन्दन सों छिरकावै॥
पान सुपारी झौरा किये। बिच बिच कनक नारियल दिये॥
हरे पात फल फूल अपार। ऐसी घर घर बन्दरवार॥
ध्वजा पताका तोरण तने। सुढाव कलश कंचन के बने॥

और घर घर आनन्द हो रहा है महाराज! यह तो नगर की शोभा थी और राज मन्दिर में जो कुतूहल होरहा था उसका वर्णन कोई क्या करै वह देखते ही बनि आवे आगे श्री कृष्णचन्द्र ने नगर देख राजा भीष्मक की बाड़ी में डेरा किया, व शीतल छाँह में बैठ ठण्डे हो उस ब्राह्मण से कहा कि देवता तुम पहले हमारे आने का समाचार रुक्मिणीजी को जा सुनावो जो वे धीरज धर अपने मनका दुःख हरें पीछे वहां का भेद हमें आ बताओ, जो हम फिर उसका उपाय करें ब्राह्मण बोला कि कृपानाथ! आज ब्याह का पहिला दिन है राज मन्दिर में बड़ी धूम धाम होरही है मैं जाता हूँ पर रुक्मिणी जी को अकेली पायके आने का भेद कहूँगा यों कह ब्राह्मण वहाँ से चला महाराज! इधर से हरि तो चुपचाप अकेले पहुँचे और उधर से शिशुपाल जरासन्ध समेत सब असुर दल लिये इस धूमधाम से आया कि, जिसके बोझ से लगा शेषनाग, डगमगाने और

पृथ्वी उथलने, उसके आने की सुधि पाय राजा भीष्मक मन्त्री और कुटुम्ब के लोगों समेत आगू बढ़ लैने गये और बड़े आदरमान से अगौनी कर सब को पहरावनी पहराय रत्नजटित वस्त्र आभूषण और हाथी घोड़े दे उन्हें नगरमें ले आय जनवासा दिया फिर खानेपीने का सन्मान किया इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव मुनि बोले कि–महाराज अब मैं अन्तर कथा कहता हूँ आप चित्त लगाय सुनिये कि–जब श्रीकृष्ण द्वारिकासे चले तिसी समय सब यदुवंशियों ने जाय राजा उग्रसेन से कहाकि महाराज ! हमने सुना है कि कुण्डिनपुरमें राजा शिशुपाल जरासंध समेत सब असुर दलले ब्याहने गया है और हरि अकेले गये हैं इससे हमजानते हैं कि वहाँ श्रीकृष्णजीसे और उनसे युद्ध होगा यहबात जानके भी हम अजाने हो हरिको छोड़ यहाँ कैसे रहें महाराज ! मनतो मानता नहीं, आगे जो आप आज्ञा कीजै-सोकरें इसबात को सुनतेही राजा उग्रसेन ने अति घबराय भयखाय बलरामजी को निकट बुलाय समझाय के कहा कि तुम हमारी सब सेना ले श्रीकृष्ण के पहुँचते न पहुँचते शीघ्र कुण्डिनपुर में जावो और उन्हें अपने संगकर ले आवो राजा की आज्ञा पातेहीं बलदेवजी छप्पनकरोड़ यादव जोड़ संगले कुण्डिनपुरकोचले उसकाल कटककेहाथी काले धौले धूमरे दल बादल से जाते थे और उनके श्वेत दाँत बगपांतिसे जनातेथे धौंसा मेघसा गाजता था और शस्त्रबिजुलीसे चमकते थे रातेपीले बागे पहन घुड़ चढ़ों के टोल के टोल जिधर तिधर दृष्टि आते थे रथों के तांतों के तांते झमझमाते चले जाते थे तिनकी शोभा निरख हर्ष देवता अति हितसे अपने विमानों पर बैठे आकाश से फूल बर्षाय श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द-कन्दकी जय मनातेथे इस बीच सबदल लिये चले कुण्डिनपुर हरिके पहुँचते ही बलरामजी जापहुँचेयों सुनाय फिर शुकदेवजी बोलेकि महाराज ! श्रीकृष्णचन्द्र रूपसागर जगत उजागर इसभांति कुण्डिनपुर पहुँच चुके थे पर रुक्मिणीने आने का समाचार न पाया—

विलख बदन चितवै चहुँओर । जैसे चन्द्र मलिन भये भोर ॥

अति चिंता सुन्दर जिय बाढ़ी। देखै ऊँच अटा पै ठाढ़ी॥
चढ़ि चढ़ि उझकै खिड़की द्वार। नयनन ते छोड़े जलधार॥

दोहा०—बिलख बदन अतिमलिनमन,लेउउसास निसास। ब्याकुल बर्षा नयनजल,सोचतिकहतउदास॥

कि अब तक क्यों नहीं हरिआये, उनकातो नाम है अंतर्यामी ऐसी मुझसे क्या चूकपड़ी जो उन्होंने मेरी सुध न ली, क्या ब्राह्मण वहाँ न पहुँचा कै हरिने मुझे कुरूप जान मेरी प्रतीति नकरी, कै जरासंधका आना सुन प्रभु न आये, कल ब्याहका दिन है और असुर आय पहुँचा जो वह कल मेरा कर गहेगातो यह पापी जीव हरिबिन कैसे रहेगा, जप तप नेम धर्म कुछ आड़े न आया अब क्या करूँ किधर जाऊँ—

ले बरात आया शिशुपाल। कैसे बिरमे दीन दयाल॥

इतनी बात जब रुक्मिणीके मुखसे निकली, तबएक सखीनेतो कहाकि दूरदेश बिनपिता बन्धुकी आज्ञा हरिकैसे आवेंगे और दूसरी बोलीकि जिनका नाम है अंतर्यामी दीनदयालु वे बिन आये न रहेंगे रुक्मिणी तू धीरजधर ब्याकुल न हो मेरा मन यह हामी भरताहै कि हरिआये महाराज! ऐसेवे दोनों आपसमें बातें कररहीथीं कि उसी समय ब्राह्मणने जाय अशीश दे कहाकि, श्रीकृष्णचंद्र जीने आय राजबाड़ीमें डेराकिया और सबदललिये बलदेवजी पीछे से आते हैं ब्राह्मणको देखते और इतनीबात सुनतेही रुक्मिणीजीके जीमेंजी आया और इन्होंने उसका एक ऐसासुखमानाकि,जैसे तपसी तपका फलपायसुखमाने आगे श्रीरुक्मिणीजीहाथजोड़ शिरझुकाय बोलींमुझेप्राण-दान दिया मैंइसकेपलटे क्यादूं जो त्रिलोकीकी मायादूं तोभी तुम्हारेऋणसे उद्धार हूं ऐसेकह मनमार सकुचायरही तब वहब्राह्मण अतिसंतुष्टहो आशी-र्वाददे कर वहाँसे उठ राजा भीष्मकके पास गया और इनसे श्रीकृष्णके आने का ब्यौरा सबसमझाके कहा, सुनतेही प्रणामकर राजाभीष्मक उठधाया और चलाचल वहाँ आया जहाँ बाड़ीमें श्रीकृष्ण बलराम सुखधाम बिराजते थे, आतेही साष्टांग प्रणामकर सन्मुख खड़े हो राजा भीष्मकने कहाकि

मेरे मन बस हो तुम हरी। कहा कहों जो दुष्टन करी॥

अबमेरा मनोरथ पूर्णहुआ, जोआपने आय दर्शन दिया योंकह प्रभुके डेरे करवायराजाभोष्मकतो अपनेघर आया और चिंताकर ऐसेकहने लगा—

हरि चरित्र जाने नहिं कोई। का जाने अब कैसी होई॥

और यहां श्रीकृष्णबलदेव जोथे तहाँनगर निवासी क्यास्त्री क्या पुरुष आय शिरनाय२ प्रभुका यशगाय२ सराहि२ आपसमें यों कहतेथे रुक्मिणी योग्य वर श्रीकृष्णहीहै, विधना करे यह जोरी जुरें, चिरंजीव रहे इस बीच दोनों भाइयों के जीमेंजोकुछ आया तो नगर देखने चलेउस समयये दोनों भाई जिसहाट बाट चौहटमें होके जाते थे तहीं नगर नारियोंके ठट्ठ लगजाते थे और इन के ऊपर चोबा चन्दन गुलाब नीर छिड़क फूल बरसाय हाथ बढ़ाय २ प्रभू को आपस में यों कह २ बताते थे,

नीलाम्बर ओढ़े बलराम। पीताम्बर पहने घनश्याम॥
कुण्डल चपल मुकुटशिरधरैं। कमलनयन चाहत मनहरैं॥

और यह देखते जाते थे, निदान सब नगर और राजाशिशुपालका कटकदेख ये तो अपने दलमें आये और इनके आनेका समाचार सुन राजा भीष्मक का बड़ा बेटा अति क्रोधकर अपने पिताके निकट आया कहने लगाकि सच कहो श्रीकृष्ण यहीं किस कारण बुलाया आया वह भेद हमने न पाया बिन बुलाये कैसे आया

ब्याह काज है यह सुखधाम। इसमें इसका है क्या काम॥

ये दोनों कपटी कुटिल जहाँ जाते हैं तहाँ ही उत्पात मचातेहैं जो तुम अपना भला चाहोतो मुझसे सत्य कहो ये किसके बुलाये आये महाराज! रुक्म ऐसे पिता को धमकाय वहाँ से उठ सात पाँच करता वहाँ गया जहाँ राजा शिशुपाल और जरासंध अपनी सभा में बैठे थे और उनसे कहाकि यहाँ रामकृष्ण आये हैं तुम अपने सब लोगों को जतादो जो सावधानी से रहें इन दोनों भाइयों का नाम सुनतेही राजाशिशुपाल तो हरिचरित्रकोलख व्यवहार जुहार मनहींमन विचार करने लगा, औरराजाजरासंध ने कहाकि सुनो जहाँ ये दोनों जाते हैं तहाँ कुछ न कुछ उपद्रव मचाते हैं ये महाबली और कपटी हैं इन्होंने ब्रज में कंसादिक राक्षस सहज स्वभावही मारे हैं इन्हें तुम मत जानो बारे, ये एक भी लड़ कर नहीं हारे श्रीकृष्ण ने सत्रह बेर मेरा दल हना जब मैं अठारहवींबेर चढ़ आया तब यह भाग पर्वत पर चढ़ा जो मैंने उसमें आग लगाई तो यह छलकर द्वारका को चला गया।

याको काहू भेद न पायो। अब यह करन उपद्रव आयो॥
है यह छली महा छल करे। काहू पै जान्यौ न परे॥

इससे अब ऐसा कुछ उपाय कीजिये जिससे हमसबों की पतरहे इतनी बात जब जरासंध ने कही तब रुक्म बोलाकि ये क्या वस्तुहैं जिनके लिये तुम इतने भावित हो उन्हें तोमैं भली भांति से जानताहूँ कि बनबन नाचते गाते वेणु बजाते धेनु चराते फिरते थे बालक गँवार युद्ध विद्या की रीति क्याजाने तुम किसी बात की चिंता अपने मनमें मत करो हम यदुवंशियों समेत कृष्ण बलराम को क्षण भरमें मार हटावेंगे।

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! उसीदिन रुक्म तो जरासंध और शिशुपालको समझाय बुझाय ढाढस बंधाय अपने घर आया और उन्होंने सात पाँच कर रातगवाँई भोर होते ही इधर राजाशिशुपाल और जरासंध तो ब्याह का दिन जान बरात निकालने की धूम धाम में लगे और इधर राजा भीष्मक के यहाँ भी मंगलचार होंने लगे इसमें रुक्मिणीजी ने उठते ही एक ब्राह्मण के हाथ श्रीकृष्णचन्द्र से कहला भेजा कि कृपा निधान आज ब्याह का दिन है दो घड़ीदिन रहे नगर के पूर्व देवी का मन्दिर है तहाँ मैं पूजा करने जाउंगी मेरी लाज तुम्हें है जिसमें रहे सो करिये आगे पहर एक दिनचढ़े सखी सहेली और कुटुम्ब की स्त्रियाँ आईं उन्होंने आते ही पहले तो आँगन में गज मोतियों का चौक पुरवाय कंचन की जड़ाऊ चौकी बिछाय तिसपर रुक्मिणी को बिठाय सात सुहागनों से तेल चढ़वाय पीछे सुगन्ध उबटनलगाय नहवाय धुलाय उसे सोलहशृंगार करवाय बारह आभूषण पहरायेऊपरसे राता चोला चढ़ाय बनीबनाय बिठाया इतने में घड़ी चार एक दिन पिछला रहगया उसकाल रुक्मिणी अपनी सब सखी सहेलियों को साथ ले बाजे गाजेसे देवी की पूजाकरने को चली तो राजा भीष्मक ने अपने लोग रखवाली को उसके साथकर दिये ये समाचार पाय कि राजकन्या नगर के बाहर देवी पूजने चली है, राजा शिशुपाल ने भी श्री कृष्णचन्द्र के डरसे अपने बड़े२ रावत शूरवीर योधाओं को बुलाय सब भाँति ऊंचनीच समझाय बुझाय रुक्मिणीजी की चौकसी को भेज दिया. वे

भी आय अपने अपने अस्त्र शस्त्र संभाल राजकन्या के संग होलिये, तिस बिरियाँ रुक्मिणीजी सब शृङ्गारकिये सखी सहेलियों के झुण्डके झुण्ड लिये अन्तर पटकी ओटमें और काले काले राक्षसों के कोट में जाते ऐसी शोभायमान लगतीं थीं कि जैसे श्यामघटा के बीच तारामंडल समेतचन्द्र, निदान कितनी एक बेरमें चलीचली देवी के मन्दिर में पहुँची वहां जाय हाथ पाँव धोय आचमन कर श्रद्धा समेत वेद की विधि से देवी की पूजा की पीछे ब्राह्मणों को इच्छानुसार भोजन करवाय सुथरी तीयरें पहराय रोरीकी खोर काढ़ अक्षत लगाय उन्हें दक्षिणा दी और उनसे आशिष ली आगे देवीकी परिक्रमा दे वह चन्द्रमुखी चम्पकवर्णी मृगनयनी पिकवयनी गजगामिनी सखियोंको साथले हरिके मिलनेकी चिंताकिये जो वहाँसे निश्चिन्तहो चलने को हुई तो श्रीकृष्णचन्द्रभी अकेले रथपर बैठे वहां पहुँचे जहाँ रुक्मिणी के साथ सब शूर अस्त्र शस्त्र से जकड़े खड़े थे इतना कह श्रीशुकदेवजी बोले—

दो०—पूजि गौरि जबही चली, एक कहत अकुलाय। सुन सुन्दरि आये हरि, देख ध्वजा फहराय॥

यह बात सखी से सुन प्रभू के रथ की ओर देख राजकन्या अति आनन्दकर फूली अंग न समाती थी और सखी के हाथपर हाथ दियेमोहनी रूप किये हरिके मिलने की आश लिये कुछ२ मुसकराती, ऐसे सब के बीच मन्दगति जातीथी कि जिसकी शोभा कुछ वरणी नहीं जाती आगे श्रीकृष्ण चन्द्रजी को देखते ही सब रखवाले भूले से खड़े हो रहे और अन्तरपट उनके हाथ से छूट पड़े इसमें मोहिनी रूपसे रुक्मिणीजीको जो उन्होंने देखा तो औरभी, मोहितहो ऐसे शिथिल हुए कि जिन्हें अपने तनमनकी भी सुध न थी।

सो०—भृकुटी धनुष चढ़ाय, अंजन बरुणी पलकके। लोचन बाण चलाय, मारेपै को बचि रहै॥

महाराज! उसकाल सब राक्षस तो चित्रसे खड़े२ देखते ही रहे, और श्रीकृष्णचन्द्रजी सबके बीच रुक्मिणी के पास रथ बढ़ाय खड़ेहुए प्राणपति को देखते ही उसने सकुच कर जो हाथ बढ़ाया तो प्रभूने बांये हाथ से उठाय उसे रथपर बैठाया।

कांपत गात सकुचमन भारी, छाँड़िसबन हरिसंग सिधारी, ज्यों वैरागी छोड़ गेह, कृष्णचरणसों करे सनेह,

महाराज रुक्मिणीजीने जो जप, तप, व्रत पुण्य किये का फल पाया और पिछला दुःख सब गँवाया बैरी अस्त्र शस्त्र लिये खड़े मुख देखतेही रहे, प्रभु उनके बीच मे रुक्मिणी को ले ऐसे चले कि—

दोहा—ज्यों बहु झुण्डनि स्यारके,परै सिंह महराय । अपनो भचया लेइके,चले निडर घरमांय ॥

आगे श्रीकृष्णचन्द्र के चलते ही बलरामभी पीछे से धौंसा दे सब दल साथ ले जा मिले ।

अध्याय ५५

(रुक्मिणी विवाह)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! कितनीएक दूर जाय श्रीकृष्णचन्द्रजीने रुक्मिणीको सोच संकोचयुत देखकर कहाकि सुन्दरी अब तुम किसीबातकी चिन्ता मतकरो मैं शङ्खध्वनि कर तुम्हारे मनका डर हरूंगा और द्वारकामें पहुँच वेदकीविधिसे बरूंगा यों कह प्रभुने उसे अपनी मालापहराय बाईं ओर बैठाय ज्यों शङ्खध्वनिकरी त्यों शिशुपाल और जरासन्धकेसाथी चौंकपड़े यह बातसारेनगरमें फैलगईकि हरि रुक्मिणीको हरलेगये इतनेमें रुक्मिणीहरण अपने उन लोगोंके मुखमेंसुनाकि जो चौकसीको राजकन्याकेसंगगयेथे, राजा शिशुपाल और जरासन्ध अति क्रोधकर झिलमटोप पहन पेटी बाँध सब अस्त्र लगाय अपना कटकले लड़नेको श्रीकृष्णके पीछे चढ़ दौड़े और उनके निकट जाय आयुध सँभाल ललकारे अरे ! भागे क्यों जाते हो खड़े रहो अस्त्र पकड़

लड़ो जो क्षत्रिय शूरवीरहैं क्षेत्रमेंपीठनहीं देते महाराज इतनीबातके सुननेही यादव फिर सन्मुख हुए औरलगे दोनों ओरसे शस्त्रचलने,उसकाल रुक्मिणी तो अति भयमान घूंघटकी ओट किये आँसूभर लम्बी२स्वासें लेतीथी और प्रीतमका मुख निरख२मनही मन विचार यों कहतीथीं,कि ये मेरेलिये इतना दुःख पातेहैं अन्तर्यामी प्रभु रुक्मिणीके मनका भेद जान बोलेकि सुन्दरी तू क्योंडरतीहै तेरे देखतेही देखते सब असुरदलको मारि भूमि का भार उतारता हूँ तूअपने मनमें किसीबातकी चिन्ता मतकर, श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा उसकाल देवता अपनेअपने विमानोंमें बैठ आकाशसे देखते क्या हैं कि—

दो०—यादव असुरन सों लरत,होत महा संग्राम ।
ठाढ़े देखत कृष्ण हैं,करत युद्ध बलराम ॥

मारूबाजा बजताहै कड़खेत कड़खा गातेहैं चारण यश बखानते हैं अश्वपति अश्वपतिसे रथी रथीसे पैदल पैंदलसे भिड़रहे हैं इधर उधरके शूरवीर पिल पिलके मारते हैं और कायर खेतको छोड़ अपना जी ले ले भागते हैं घायल खड़े झूमतेहैं कवन्धहाथोंमें तलवारलिये चारोंओर घूमतेहैं औरलोथों परलोथ गिरती हैं तिनसेलोहूकीनदी बहचलीहै तिससे जहाँजहाँ हाथीजोमरे पड़ेहैं सो टापू जनाते हैं औरशेडें मगरसी महादेव भूत प्रेत पिशाच संगलिये शिरचुन२मुण्डमाल बनवाय२ पहनते हैं और गृध्र शृगाल कूकर आपसमें लड़ लड़ लोथें खेंच खेंच लाते और फाड़खानेहैं,कौवे आँखें निकाल निकाल धड़ोंसे ले जाते हैं,निदान देवताओंके देखतेही देखते बलरामजीने सबअसुर दल यों काट डाला ज्यों किसान खेत को काट डाले, आगे जरासन्ध और शिशुपाल सब दल कटाय कई एक घायल संग लिये भागके एक ठौर जा खड़े रहे तहाँ शिशुपालने बहुत अछताय पछताय शिर डुलाय जरासन्ध से कहाकि अबतो अपयश पाय और कुलको कलङ्क लगाय संसारमें जीना उचित नहीं इससे आप आज्ञा दो तो मैं रणमें जाय लड़ मरूं ।

नातर हौं करिहौं बनवास । लऊं योग छांड़ि सब आस ॥
गई आज पति अब क्यों जीजै । राखिप्राण क्यों अपयशलीजै ॥

इतनी बात सुन जरासन्ध बोला कि,महाराज ! आप ज्ञानवानहो और

सबबातें जानते हो मैं तुम्हें क्या समझाऊं,जो ज्ञानी पुरुषहैं सो हुई बातका सोचनहीं करते क्योंकि भले बुरेका कर्ता औरही है,मनुष्यका कुछ वश नहीं यह परवश पराधीन है, जैसे काष्ठ की पुतलीको नटुआ ज्यों नचाताहै त्यों नाचती है ऐसे मनुष्य कर्ताके वश है वह जो चाहताहै सो करताहै,इससे सुख दुःखमें हर्ष शोक न कीजे,सब स्वप्न सा जान लीजै मैं तेईस अक्षौहिणीले मथुरापुरी पर सत्रहबेर चढ़गया और इसी कृष्णने सत्रहबेर मेरा दल हना, मैंने कुछ सोच न किया और अठारहवींबेर जब इसका दल मारा तब कुछ हर्ष भी न किया यह भागकर पहाड़ पर चढ़ा, मैंने इसे वहीं पर फूंक दिया जानिये यह क्यों कर जिया इसकी गति कुछ जानी नहीं जाती इतना कह फिर जरासन्ध बोला महाराज! अब उचित यह है कि इस समय को टाल दीजै कहाहैकि प्राण बचेतो पीछे सब हो रहताहै, जैसे हमें हुआकि सत्रहबेर हारे अठारहवें बेर जीते इससे जिसमें अपनी कुशलहो सो कीजे और हठ छोड़ दीजे महाराज! जब जरासन्धने ऐसे समझाय के कहा तब उसे कुछ धीरज हुआ और जितने घायल योधा बचे थे तिन्हें साथले अछताय पछताय जरासन्ध के संग हो लिया ये तो यहाँ से यों हारके चले और शिशुपालका घर था तहांकी बात सुनोकि पुत्रके आवनको विचार शिशुपालकी माँ जो मंगलाचार करनेलगी तो सन्मुख छींक भई और दाहिनी आँख फड़कने लगी यह अशगुन देख उनका माथा ठनका कि इस बीच किसीने आय कहाकि, तुम्हारे पुत्रकी सब सेना कट गई और दुलहन भी नहीं मिली अब वहाँ से भाग अपना जीव लिये आता है। इतनी बात को सुनते ही शिशुपाल की महतारी अति चिन्ता कर अवाक हो रही आगे शिशुपाल और जरासन्ध का भागना सुन रुक्म अति क्रोध कर अपनी सभा में आन बैठा और सबको सुनाय कहने लगा कि कृष्ण मेरे हाथसे बचकर कहाँ जा सकता है? अभी जाय उसे मारूं रुक्मिणीको ले आऊं तो मेरा नाम रुक्म नहीं तो फिर कुंडिनपुर में नहीं आऊं महाराज! ऐसे पैजकर रुक्म अक्षौहिणी सेना ल कृष्णचन्द्रसे लड़ने को चढ़ धाया और उसने यादवों का

दल जा घेरा उसकाल उसने अपने लोगों से कहा कि, तुमतो यादवों को मारो मैं आगेजाय श्रीकृष्णको जीता पकड़लाताहूँ इतनी बातके सुनतेही उस के साथी तो यदुवंशियों से लड़ने लगे और वह रथ बढ़ाय श्रीकृष्ण के निकट जाय ललकार बोला अरे कपटी गँवार ! तू क्या जाने राजव्यवहार, बालपन में जैसे तैंने दूध दहीकी चोरी करी,तैसे तूने यहाँभी आय सुन्दरी हरी।

ब्रजवासी हम नहीं अहीर। ऐसे कह कर लीने तीर॥
विषके बुझे लिये उन बान। खैंच धनुष शर छोड़े तान॥

उन बाणों को आते देख श्रीमधुसूदनने बीचहीमें काटा, फिर रुक्मने और बाण चलाये. प्रभुने वह भी काट गिराये; और अपना धनुष संभाल कई एक बाण मारे कि रथके घोड़ा समेत सारथी उड़गया और धनुष उसके हाथसे कटि भूमिमें गिरा, पुनि जितने आयुध उसने लिये हरिने सब काट काट गिरादिये, तबतो वह अति झुंझलाय फरी खांड़ा उठाय रथसे कूद श्रीहरि की ओर यों झपटा जैसे गीदड़ गज पर आवे कै पतंग दीपक पर धावे, निदान जातेही उसने हरिके रथपर गदा चलाई कि प्रभुने झपट उसे पकड़ बाँधा और चाहा कि मारें, इसमें रुक्मिणीजी बोलीं।

मारो मत भैया है मेरो। छाँड़ो नाथ तिहारो चेरो॥
मूरख अन्ध कहा यह जाने। लक्ष्मीकंतहि मानुष माने॥
तुम योगीश्वर आदि अनंत। भक्त हेतु प्रगटे भगवन्त॥
यह जड़ कहा तुम्हें पहचाने। दीनदयालु कृपालु बखाने॥

इतना कह फिर कहने लगीं कि, साधु जड़ और बालक का अपराध मनमें नहीं लाते, जैसेकि सिंह श्वानके भूकने पर ध्यान नहीं करता और जो तुम इसे मारोगे तो होगा मेरे पिता को शोक, यह करना तुम्हें नहीं है योग, जिस ठौर तुम्हारे चरण पड़ते तहां सब प्राणी आनन्द में रहते हैं यह बड़े अचरजकी बात है कि तुमसा सगा रहते राजा भीष्मक पुत्रका दुखपावे महाराज ! ऐसे कह एक बार तो रुक्मिणीजी यों बोलीं कि महाराज ! तुमने भला हित सम्बन्धीसे किया, जो पकड़ बाँधा और खड्ग हाथमें ले मारने को उपस्थित हुए पुनि व्याकुलहो थरथराय आँख डब-

डबाय बिसूर२ पांत्रों पड़ गोद पसार कहने लगीं।

बन्धु भीख प्रभु मोकों देउ। इतनो यश तुम जग में लेउ॥

इतनी बातके सुनने से और रुक्मिणीजीकी ओर देखनेसे हरिका सब कोप शान्त हुआ, तब उन्होंने उसे जीवसे तो नहीं मारा पर सारथीको सैन-करी उसने झट पगड़ी उतार ढूंढना चढ़ाया डाढ़ी और शिर मूड़ सात चोटी रख रथके पीछे बांधलिया, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज! रुक्मकी तो हरिने यहाँतक व्यवस्था की और बलदेवजी वहांसे सब असुर दलको मार भगाकर भाई से मिलने को चले कि जैसे श्वेतगज कमल दलमें कमलोंको तोड़ खाय बिथराय अकुलायके भागताहोय। निदान कितनीएक देरमें प्रभुके समीप आय पहुँचे और रुक्मको बँधादेख हरिसे अति झुंझलाय के बोलेकि तुमने यहक्याकामकिया जो सालेकोबाँधा तुम्हारी कुटेवनहींजाती—

बाँन्यो जाहि करी बुधि थोरी। यह तुम कृष्ण सगाई तोरी॥
औ यदुकुल की लीक लगाई। अब हमसों को करे सगाई॥

जिस समय यह युद्ध करने को आपके सन्मुख आया, तब तुमने इसे समझाय उलटा क्यों न फेर दिया महाराज ऐसे कह बलरामजीने रुक्म को तो खोल समझाय बुझाय शिष्टाचारसे बिदा किया फिर हाथजोड़ अति बिनती कर बलराम सुखधाम रुक्मिणी से कहने लगेकि हे सुन्दरि! तुम्हारे भाई की जो यह दशाहुई इसमें कुछ हमारी चूक नहीं यह उसके पूर्व जन्म के किए कर्म का फल है और क्षत्रियोंका धर्म भी यहीहै कि भूमि धन स्त्रियों के काज; करते हैं युद्ध दल परस्पर साज, इस बातका तुम बिलग मत मानो मेरा कहा सचाहो जानो हारजीत भी उसके साथही लगी है और यह संसार दुःखका समुद्रहै यहाँ आय सुख कहां पर मनुष्य माया के वशहो दुख सुख भला बुरा हारजीत संयोग वियोग मनही मन से मान लेते हैं पर इसमें हर्ष शोक जीव को नहीं होता तुम अपने भाई के बिरूप होने की चिन्ता मत करो क्योंकि ज्ञानीलोग जीव को अमर और देह को नाशवान कहते हैं इस लेखे देहकी पति जानेसे कुछ जीवकी नहीं गई।

श्रीशुकदेवजीबोले धर्मावतार जब बलरामजीने रुक्मिणीको समझायातब-
दोहा–सुनि सुन्दरि मनसमझिके,किये जेठकी लाज। सैननमहिं पियसों कहति,हाँकहुरथ व्रजराज॥
घूंघट ओट बदनकी करे,मधुर वचन हरिसों उच्चरे,सन्मुखठाढ़ेहैं बलदाऊ,अहोकंत रथवेगि चलाऊ

इतना वचन रुक्मिणी के मुख से निकलते ही इधर तो श्रीहरिने रथ द्वारिकाको हाँका और उधर रुक्म अपनेलोगोंमेंजाय अति चिन्ताकर कहने लगा कि मैं कुंडिनपुर से यह पैज करके आया था कि अभी जाय हरि बल रामको सब यदुवंशियों समेत मार रुक्मिणी को ले आऊंगा सो मेराप्रण पूरा न हुआ और उलटी अपनी पतिखोई अब जीता न रहूँगा इस देश और गृहस्थाश्रम को छोड़ वैरागी होय कहीं जाय मरूंगा जब रुक्मने ऐसे कहा तब उसके लोगोंमेंसे कोई बोला महाराज! तुम महावीर हो और बड़ेप्रतापी तुम्हारे हाथसे वे जीते बचगये सो उनके भले दिन थे अपनी प्रारब्धके बलसे निकल गये नहींतो आपके सन्मुखहो कोई शत्रु कबजीता बच सकताहै,तुम सज्ञान हो ऐसी बात क्यों विचारते हो कभी हारहोतीहै कभीजीत पर शूरवीर काधर्म है जो साहस नहींछोड़ते,भला रिपु आज बचगया फिरमारलेंगे महाराज जब यों उसने रुक्मको समझाया तब वह कहने लगा कि सुनो—

हारयो उनसों औ पति गई। मेरे मन अति लज्जा भई॥
जन्म नहीं कुण्डिनपुर जाऊं। बरन औरही गाँव बसाऊं॥
यों कह इन एकनगर बसायो। सुत दारा धन तहाँ मँगायो॥
ताको धरयो भोजकट नाम। ऐसे रुक्म बसायो ग्राम॥

महाराज उधर रुक्मतो राजा भीष्मक से बैर कर रहाथा और इधर श्रीहरि और बलदेव चले२ द्वारिका के निकट आय पहुंचे।

उड़ी रेणु आकाश जु छाई। तबही पुरवासिन सुधि पाई॥
दोहा–आवत हरि जाने जबहि,राख्यौ नगर बनाय। शोभा भई तिहुँलोककी,कही कौन पर जाय॥

उसकाल घर२मङ्गलाचार हो रहे थे द्वार२केलेके खम्भ गढ़े कलशसजल सपल्लव धरे ध्वजा पताका फहराय रही तोरण बन्दनवार बँधीहुई और घर२ हाटबाट चौहटों में चौमुख दिये लिए युवतियों के यूथकेयूथ खड़े और राजा उग्रसेन भी सब यदु वंशियों समेत गाजेबाजे से अगाऊ जाय रीति भाँति

कर सुखधाम बलराम आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र को नगर में ले आए उस समयके बनाव की छबि कुछ बरणीं नहींजाती क्यास्त्री क्यापुरुष सबहीके मन आनन्द छाय रहाथा, प्रभुसोंही आय२सबभेंट देदे भेंटतेथेऔर नारियां अपने२ द्वारों चौबारों कोठों परसे मङ्गलगीत गाय गाय आरतीउतार फूल बरसातींथीं श्रीहरि और बलदेवजी यथायोग्य सबकी मनुहार करते जाते थे निदान तिसी रीतिसे चले चले राजमन्दिरमें जा बिराजे, आगे कईएक दिन पीछे एक दिन श्रीकृष्णचन्द्रजी राज सभामें गये, जहां राजा उग्रसेन शूरसेन बसुदेव आदि सब बड़े बड़े यदुवंशी बैठेथे और प्रणाम कर इन्होंने उनके आगे कहा कि महाराज ! युद्धजीत जोकोई सुन्दरी लाता है, राक्षस विवाह कहाता है. इतनी बातके सुनतेही शूरसेनजीने पुरोहित बुलायके उसे समझाके कहा कि तुम श्रीकृष्णके विवाहका दिन ठहरादो उसने झट पत्री खोल भला महीना दिन बार नक्षत्र देख शुभ सूर्य चन्द्रमा विचार ब्याहका दिन ठहरादिया, तब राजा उग्रसेनने अपने मंत्रियोंको तो यह आज्ञा दी कि तुम ब्याहका सामान इकट्ठा करो और आप बैठ पत्रलिखा कर कौरव पांडव आदि सब देश देश के राजाओं को ब्राह्मण के हाथ भिजवाए, महाराज चिट्ठी पानेही सब राजा प्रसन्न हो हो उठ धाए तिन्होंके साथ ब्राह्मण पण्डित भाट भिखारी भी हो लिए और यह समाचार पाय राजा भीष्मकने बहुत अस्त्रशस्त्र जड़ाऊ आभूषण और रथ हाथी घोड़े, दासदासियोंके डोले एकब्राह्मणकोदे कन्यादान का सङ्कल्प मनहीमन ले अति विनतीकर द्वारकाको भेजदिया उधरसेतो देश२के नरेश आए और इधर राजाभीष्मकका पठाया सब सामानलिए वह ब्राह्मणभी आया उससमयकी शोभा द्वाकापुरीकी कुछ वरणी नहींजाती, जब ब्याहकादिन आया तो सब रीति भाँति कर वर कन्याको मंडप के नीचे ले जा बैठाया और सब बड़े बड़े झुंड यदुवंशियों के भी आ बैठे उस बिरियाँ।

पण्डित तहां वेद उच्चरें। रुक्मिणि संग हरि भाँवरि फिरें॥
ढोल दुन्दुभी भेरि बजावें। हरषहिं देव पुष्प बरसावें॥
सिद्ध साधु चारण गन्धर्व। अन्तरिक्ष ह्वै देखें सव॥

चढ़े विमान घिरे शिर नावें। देव वधू सब मंगल गावें॥
हाथ गह्यो प्रभु भाँवर पारी। वाम अंग रुक्मिणि बैठारी॥
जोरी गाँठ पटा फिर दियो। कुल देवी को पूजन कियो॥
छोरत कंकण रही सुन्दरी। खेलत दूधा बाती खरी॥
अति आनन्द रच्यो जगदीशा। निरखि हरषि सब देहिं अशीष॥
हरिरुक्मिणिजोड़ी चिरजीवो। जिनको चरित्र सुधारस पीवो॥
दीनों दान विप्र जे आये। मागध बन्दी जन पहिराये॥
जे नृप देश देश के आये। दीनी विदा सबै पहुँचाये॥

श्रीशुकदेवजी बोलेकि जो जन रुक्मिणीका चरित्र पढ़ेगा और सुनेगा और स्मरण करेगा,सोभक्त मुक्ति यश पावेगा पुनि जो फलपाताहै अश्वमेध आदि यज्ञ गङ्गादि तीर्थ के करनेमें सोई फल मिलता है हरिकथा सुननेमें।

अध्याय ५६

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज एकदिन श्रीमहादेवजी अपने स्थानके बीच ध्यानमें बैठे थे कि एकाएक कामदेव ने आ सताया तो हरका ध्यान छूटा और लगे अज्ञान हो पार्वतीजी के साथ क्रीड़ा करने इसमें कितनी एक बेर पीछे शिवजीको केलिचिन्तन करने२ जब ज्ञान हुआ,तब क्रोधकर कामदेव को जलाय भस्म किया।

कामवली जब शिव दह्यो,तब रति धरत न धीर। पतिबिन अति तड़फत खरी,बिह्वल विकल शरीर॥
काम नारि अति लोटत फिरै। कंतकंत कह चित भुज फिरै॥
पिय बिन तियकहँ दुखिया जान। तब यों गौरी कियौ बखान॥

कि हे रति! तू चिन्ता-मतकर, तेरा पति तुझे जिस भाँति मिलेगा तिसका भेद सुन मैं कहती हूँ कि पहले तो वह श्रीकृष्णके घरमें जन्म लेगा और उसकानाम प्रद्युम्न होगा, पीछे उसे शम्बर ले जाय समुद्र में बहावेगा, फिर वह मत्स्य के पेटमें ही शम्बर ही की रसोई में आवेगा तू वहीं जायके रह जब वह आवे तब उसे ले पालियो पुनि वह शम्बरको मार तुझे साथ ले द्वारिका में सुख से जाय बसेगा महाराज!

शिवरानी यों रति समझाई। तब तनु धर शंबर घर आई॥
सुन्दरि बीच रसोई रहै। निशदिन मारग प्रिय को चहै॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले कि, हे राजा! इधर रति तो पिया से मिलने की आशा कर यों रहने लगी और उधर रुक्मिणी जी को गर्भ रहा और दश महीना पूरे दिन होनेपर पुत्र भया यह समाचार पाय ज्योतिषियों ने आय लग्न साधी श्रीशुकदेव जी ने कहा कि महाराज! इस बालक के शुभग्रह देख हमारे विचार में यों आता है कि रूप गुण पराक्रम में यह श्रीकृष्णजी के समान होगा, पर बालकपन भर जल में रहेगा पुनि रिपु को मार स्त्री समेत आ मिलेगा यों कह ज्योतिषी तो दक्षिणा ले बिदा हुए और द्वारिकापुरी में मंगलाचार होने लगे,

आगे श्रीनारद मुनि ने आय उसी समय समझाय शंबर से कहा कि तू किस नींद में सोता है तुझे चेत है या नहीं, वह बोला क्या उन्हों ने कहा तेरा बैरी काम का अवतार प्रद्युम्न नाम श्री कृष्णचन्द्र के घर में जन्म ले चुका नारदजी तो राजा शंबर को यों चेताय चले गये और शंबर ने सोच विचार कर मन ही मन यह उपाय ठहराया कि पवन रूप हो वहां जाय उसे हर लाऊं और समुद्र में बहाऊं तो मेरे मनकी चिन्ता मिटे और निर्भय हो रहूँ यह विचार कर शंबर वहाँ से उठ अलख हो चला चला श्री हरि के मन्दिर आया कि जहाँ रुक्मिणी जी अन्तर में हाथ में दबाये छाती से लगाये बालक को दूध पिलाती थीं और आप चुपचाप दृष्टि लगाय खड़ा रहा, ज्यों बालक पर से रुक्मिणी जी का हाथ अलग

हुआ त्यों असुर अपनी माया फैलाय उसे उठाय ऐसे ले गया कि जितनी स्त्रियां वहां बैठी थीं तिन में से किसी ने न देखा न जाना कि कौन किस रूप में आया क्यों कर उड़ाय ले गया, बालक को आगे न देख रुक्मिणी जी अति घबराईं और रोने लगीं उनके रोने का शब्द सुन सबयदुवंशी क्या स्त्री क्या पुरुष घिर आये और तरह तरह की बातें कह कह चिन्ता करने लगे इस बीच नारद मुनि ने आय सब को समझा कर कहा कि तुम बालक के पाने की कुछ भावना मत करो उसे किसी बात का डर नहीं वह कहीं जाय पर उसे काल न व्यापेगा, और बालापन व्यतीत कर एक सुन्दरी नारी साथ ले तुम्हें आय मिलेगा। महाराज! ऐसे सब यदुवंशियों को भेद बताय समझाय बुझाय नारद मुनि जब बिदा हुए तब वे भी सोच समझ सन्तोष कर रहीं, अब आगे की कथा सुनिये कि शंबर जो प्रद्युम्न को ले गया था उसने उन्हें समुद्रमें डाल दिया वहां एक मछली इन्हें निगल गई उस मछली को एक और बड़ी मछली निगल गई, इस में एक मछुए ने जाय समुद्र में जाल फेंका तो वह मीन जाल में आई, धीवर खेंच उस मत्स्य को अति प्रसन्न हो ले अपने घर आया निदान वह मछली उसने जाय राजा शंबर को भेंट दी राजाने ले अपने रसोई घर में भेज दी रसोई करनेवालीने जो उस मछली को चीरा तो उस में से एक और मछली निकली उसका पेट फाड़ा तो एक लड़का श्याम वर्ण अति सुन्दर उस में से निकला उसने देखतेही अति अचरज किया और वह लड़का ले जाय रति को दिया, उसने महा प्रसन्न हो ले लिया यह बात शंबर ने सुनी तो रतिको बुलाय के कहा कि इस लड़के को भली भांति से यत्न कर पाल, इतनी बात राजा की सुन रति उस लड़के को ले निज मन्दिर में आई, उस काल नारद जी ने रति से कहा—

अबतूथाहिपाल चितलाय। तोपतिप्रद्युम्नप्रकट्योआय॥शंबरमारतोहिलैजैहै। बालापन याठौरबितैहै॥

इतना भेद बताय नारदमुनि चलेगये और रति अति हितसे चितलगाय पालने लगी ज्यों ज्यों वह बालक बढ़ता था, त्यों त्यों पति के मिलने का चाव होता था कभी वह उसका रूप देख प्रेम कर के हिय से लगाती थी,

कभी दृग मुख कपोल चूम आपही विहँसि उसके गले लगी और यों कहती थी कि—

ऐसे प्रभु संयोग बनायो । मछरी माँहि कन्त मैं पायो ।।

और महाराज ?

दो०—प्रेमसहित पय ल्यायके,हितसों प्यावति ताहि । हलरावति गुणगाय के,कहति कन्त चितचाहि।।

आगे जब प्रद्युम्नजी पाँच वर्ष के हुए तब रति अनेक२ भांति के वस्त्र आभूषण पहनाय२ अपने मनकी साध पूरी करने लगी और नयनों को सुख देने लगी उसकाल वह बालक जो रति का अंचल पकड़ पकड़ मां मां कहने लगा तो वह हँसकर बोली हे कन्त तुम यह क्या कहते हो, मैं तुम्हारी नारी, गौरी की आज्ञा है कि तुम शम्बर के घर में जाय रहो तेरा पति श्रीकृष्ण के घर में जन्म लेगा, सो मछली के पेट में तेरे पास आवेगा, और नारदजी भी कह गये थे कि तेरा स्वामी तुझे आय मिलेगा तभी से मैं तुम्हारे मिलने की आश किये यहाँ बास कर रही हूँ तुम्हारे आने से मेरी आश पूरी भई ऐसे कह रति ने फिर पति को धनुष विद्या सब पढ़ाई जब वे धनुष विद्या में निपुण हुए तब एक दिन रति ने कहा कि स्वामी अब यहाँ रहना उचित नहीं, क्यों कि तुम्हारी माता श्री रुक्मिणीजी तुम बिन ऐसे दुख पाय अकुलाती हैं जैसे बच्छ बिनु गाय । इससे अब उचित यह है कि असुर शम्बर को मार मुझे सङ्ग ले कर द्वारिका में चल मातापिता को दर्शन कीजै, और उन्हें सुख दीजै, जो आपके देखने की लालसा किये हुए हैं, श्रीशुकदेवजी यह प्रसंग सुनाय राजा से कहने लगे कि महाराज इस रीति से रति की बातें सुनने२ प्रद्युम्न जी जब सयाने हुए तब एकदिन खेलते खेलते राजा शम्बरके पास गये वह इन्हें देखतेही अपनेही लड़के के समान लाड़ कर बोला कि इस बालक को मैंने अपना लड़का कर पाला है इतनी बात के सुनते ही प्रद्युम्नजी ने अति क्रोध कर कहा कि मैं बालक हूँ बैरी तेरा, अब तू लड़कर देख बल मेरा, यों सुनाय ताल ठोंक सन्मुख हुआ तब हँसकर शम्बर ने कहा कि भाई यह मेरे लिये दूसरा प्रद्युम्न कहाँ से आया क्या

दूध पिलाय मैंने सर्प बढ़ाया जो ऐसी बातें करता है, इतना कह फिर बोला अरे बेटा तू क्या कहता है ये बैन, क्या तुझे यमदूत आये हैं लैन, महाराज इतनी बात शंबर के मुख से सुनते ही वह बोला प्रद्युम्न मेरा ही है नाम मुझसे आज तू कर संग्राम, तैंने तो मुझे सागर में बहाया पर अब मैं अपना बैर लैने आया तूने अपने घर में अपना काल बढ़ाया अब कौन किसका बेटा कौन किसका बाप।

दो०—सुन शंबर आयुध गहे, बढ्यो क्रोध मनमाव। मनहुँ सर्पकी पूँछ पर पड़्यो अँधेरे पाँव।

आगे शंबर अपना दल मँगवाय प्रद्युम्न को बाहर ले आया क्रोध कर गदा उठाय मेघ की भांति गर्जकर बोला, देखूं अब तुझे काल से कौन बचाता है। इतना कह जो इसने झपट के गदा चलाई, तो प्रद्युम्न जी ने सहज ही काट गिराई फिर उसने रिसायकर अग्निबाण चलाये उन्होंने जलबाण छोड़ बुझाय गिराये तब तो शंबर ने महाक्रोध कर जितने आयुध उसके पास थे सब प्रहार किये और उन्होंने काट काट गिराये जब कोई आयुध उसके पास न रहा तब क्रोधकर धाय प्रद्युम्न जी को जाय लिपटा और दोनों से मल्लयुद्ध होने लगा कितनी एक बेर पीछे ये उसे आकाश को ले उड़े वहाँ जाय खड्ग से उसका सिर काट गिराय दिया और फिर आय असुरदल का बध किया शंबर को मरा सुन रतिने सुख पाया और उस समय एक विमान स्वर्ग से आया उसपर रति पति दोनों चढ़ बैठे और द्वारिका को चले ऐसे कि दामिनी समेत सुन्दर मेघ जाता है और चले २ वहाँ पहुँचे कि जहाँ कंचन के मन्दिर ऊँचे सुमेरु से जगमगाय रहे थे बिमानसे उतर अचानक दोनों रनवास में गये उन्हें देख सब सुन्दरी चौंक उठीं और यों समझा कि श्रीकृष्ण एक सुन्दरि नारि संग ले आये हैं सकुच रहीं परयह भेद किसी न जाना कि प्रद्युम्न हैं सब कृष्ण ही कृष्ण कहती थीं इसमें जब प्रद्युम्नजी ने कहा कि हमारे माता पिता कहाँ हैं तब रुक्मिणीजी अपनी सखियों से कहने लगीं कि हे सखी यह हरि की उनहार कौन है वे बोलीं

हमारी समझ में तो ऐसा आताहै कि हो न हो यह श्रीकृष्ण जी का पुत्र है इतनी बात के सुनते ही रुक्मिणी की छाती से दूधकी धार बह निकली और बाईं बांह फड़कने लगी व मिलने को मन घबराया पर बिन पति की आज्ञा मिल न सकी उस काल वहाँ नारद जी ने आय पूर्व कथा कह सबके मनका सन्देह मिटाया तब तो रुक्मिणी जी ने दौड़कर पुत्रका सिर चूम उसे छाती से लगाया और रीति भांति से ब्यौहार कर बेटे बहूको घर में लिया उस समय क्या स्त्री क्या पुरुष सब यदुवंशियों ने आय मंगल चार कर अति आनन्द किया घर २ बधाई बजने लगी और सारी द्वारिकापुरीमें सुख छाय गया इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहाकि महाराज ऐसे प्रद्युम्न जन्म ले बालकपन अन्त बिताय रिपु को मार रति ले द्वारिकापुरी में आये तब घर २ मंगल आनन्द हुए बधाये।

अध्याय ५७

श्रीशुकदेवमुनि बोले कि महाराज सत्राजितने पहले तो श्रीकृष्ण को मणिकी चोरी लगाई पीछे झूंट समझ लज्जित हो उसने अपनी कन्या सत्यभामा हरिको ब्याह दी यह सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि कृपानिधान सत्राजित कौन था मणि उसने कहाँ पाई और कैसे हरि को चोरी लगाई फिर क्योंकर झूंठ समझ कन्या ब्याहदी यह मुझे बुझाय के कहो श्री शुकदेवजी बोले कि महाराज ! सुनिये मैं समझा कर कहता हूँ सत्राजित एक यादव था तिसने बहुत दिन तक सूर्य की अति कठिन तपस्या की तब सूर्यदेवताने प्रसन्न हो उसे निकट बुलाय मणि दे

कहा कि स्यमंतक मणि इसका नाम, इसमें है सुखसम्पति का विश्राम, सदा इसे मानियो और बलतेजमें मेरे समान जानियो, जो तू इसे जप तप संयम व्रतकर ध्यावेगा तो इससे मुंह माँगा फल पावेगा जिस दिन घर में यह जावेगी, वहां दुःखदरिद्रकाल भी न आवेगा सर्वदा सुकाल रहेगा और ऋद्धि सिद्ध भी रहेगी महाराज! ऐसे कह सूर्य देवता ने सत्राजित को विदा किया वह मणि ले अपने घर आया आगे प्रातही उठ वह प्रातःस्नान कर संध्यातर्पण से निश्चिंतहो नित्य चन्दन अक्षत पुष्प धूप, दीप नैवेद्य सहित मणि की पूजा किया करै और उस मणि से जो आठ भार सोना निकले सो ले और प्रसन्न रहे एक दिन पूजा करते २ सत्राजित ने मणि की शोभा और कांतिदेख निज मनमें विचारा कि यह मणि श्रीकृष्णचन्द्रजी को लेजाकर दिखाइये तो भला, यों विचार मणिकण्ठमें बांध सत्राजित यदुवंशियों की सभा को चला मणिका प्रकाश दूरही से देख यदुवंशी खड़े हो श्रीकृष्णचन्द्रजी से कहने लगेकि महाराज तुम्हारे दर्शनकी अभिलाषाकिये सूर्य चला आताहै तुमको ब्रह्मा रुद्र, इन्द्रादि सब देवता ध्यावते हैं और आठ पहर ध्यानधर तुम्हारा यश गावते हैं तुमहो आदि पुरुष अविनाशी तुम्हें नित सेवतीहै कमलाभई दासी।

तुमहो सब देवन के देव। कोई नहिं जानत तुम्हरो भेव॥
तुम्हरे गुण और चरित्र अपार। क्यों प्रभु छिपे आय संसार॥

महाराज जब सत्राजितको आता देख सब यदुवंशी यों कहने लगे तब हरि बोले कि यह सूर्य नहीं सत्राजित यादव है इसने सूर्यकी तपस्याकर एक मणि पाई है उसका प्रकाश सूर्यके समानहै वही मणिबाँधे चलाआता है महाराज इतनी बात जब तक श्रीकृष्णजी कहैं तब तक वह आय सभा में बैठा, जहाँ यादव पांसासार खेल रहे थे मणिकी कांत देख सबका मन मोहित हुआ और श्रीकृष्णचन्द्र भी देख रहे तब सत्राजित कुछ मनही मन समझ उस समय विदा हो अपने घर गया आगे वह मणि गले में बांधि नित आवे, एकदिन सब यदुवंशियों ने हरिसे कहा कि महाराज सत्राजित से मणि ले राजा उग्रसेन को दीजै और जगत में यश लीजै, यह मणि

उसे नहीं फबती,यह राजा के योग्य है इसके सुनते ही श्रीकृष्णजीने हंसते हँसते सत्राजित से कहाकि यह मणि राजा को दो संसार में यश बड़ाई लो, देनेका नाम सुनते ही वह प्रणामकर चुपचाप वहाँसे उठ सोच विचार करता अपने भाईके पास जा बोलाकि आज श्रीकृष्णजीने मुझसे मणिमांगी और मैंने न दी,इतनीबात जो सत्राजितके मुँहसे निकलीतो क्रोधकर उसकेभाई प्रसेनने वह मणिले अपने गलेमें डाली और शस्त्र लगाय घोड़ेपर चढ़ अहेरको निकला महाबन में जाय धनुष चढ़ाय लगा साबर चितल पाढ़े और मृग मारने इसमेंएक हरिणजो उसके आगेसे झपटातो इसनेभी खिजलाके उसके पीछे घोड़ा सपटा और चलाचल अकेला वहाँ पहुँचा कि जहाँ युगान युगकी एक बड़ी अंधी गुफाथी मृग और घोड़े के पांवकी आहट पाय उससे एक सिंह निकला वह इन तीनोंको मार मणिले उस गुफामें बढ़गया मणिके जाते ही उस महाअँधेरी गुफामें ऐसा प्रकाश हुआ कि पातालतक चाँदनी होगई वहाँ जामवन्त नाम रीछ जो श्रीकृष्णचन्द्र के साथ रामअवतार में था सो त्रेतायुगसे तहाँ कुटुम्ब समेत रहता था वह गुफामें उजाला देख उठधाया और चला २ सिंहके पास आया. फिर वह सिंहको मार मणि ले अपनी स्त्री के निकट गया उसने मणि ले अपनी पुत्री के पालने में बाँधी वह उसे देख नित हँस हँस-खेला करे और सारे स्थानमें आठ पहर प्रकाश रहे इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! मणि-यों गई और प्रसेन की यहि गति भई तब प्रसेन के साथी जो लोग गये थे वे आकर सत्राजित से कहने लगेकि महाराज!

हमको त्याग अकेलो धायो। जहां गयो तहँ खोज न पायो॥
कहत न बने ढूँढि फिर आयो। कहूँ प्रसेन न बनमें पायो॥

इतनी बात के सुनते ही सत्राजित खाना पीना छोड़ अति उदास हो चिन्ता कर मन ही मन कहने लगा कि यह बात श्रीकृष्ण की है जो भाई को मणि के लिये मार मणि ले घर में आय बैठा है पहले मुझ से मांगता था मैंने नदी अब उसने यों लेली ऐसा वह मन ही मन कहै और रात दिन महा चिन्ता में रहै एक दिन वह रात्रि समय स्त्री के पास सेज

पर तन क्षीण मन मलीन मन मारे बैठा मन ही मन कुछ विचार करता था कि उसकी नारी ने कहा—

कहा कन्त मन सोचत रहौ। मोसों भेद आपनो कहौ॥

सत्राजित बोला कि स्त्रीसे कठिन बातका भेदकहना उचित नहीं क्योंकि उसके पेटमें बात नहीं रहती, जो घरमें सुनती है सो बाहर प्रकाश करदेती है यह अज्ञान है इसे किसी बातका ज्ञान नहीं भली हो कै बुरी इतनी बातके सुनते ही सत्राजित की स्त्री खिजलाकर बोली कि मैंने कब कोई बात घरमें सुनी बाहर कही है जो तुम कहतेहो,सब नारी क्या एक समानहैं? यों सुनाय कहाकि जबतक तुम अपने मनकी बात मेरे आगे न कहोगे तब तक मैं अन्न पानी भी न खाऊँगी यह वचन नारीसे सुन सत्राजित बोलाकि झूठ सचकी तो भगवान जानें, पर मेरे मनमें एक बात आई है सो तेरे आगे कहताहूँ; परन्तु किसीके सोंही मतकहियो, उसकी स्त्री बोली अच्छा मैं न कहूँगी, तब सत्राजित कहने लगाकि एकदिन श्रीकृष्णजीने मुझसे मणि मांगी और मैंने न दी इससे मेरे जीमें आता है कि उसीने मेरे भाईको वन में जाय मारा और मणिली यह उसका कामहै, दूसरेकी सामर्थ नहीं जो ऐसा काम करे, इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! इस बातके सुनते ही उसको रातभर नींद न आई और सात पाँचकर रैनि गंवाई भोर होते ही उसने जो सखी सहेली और दासियों से कहाकि श्रीकृष्ण जीने प्रसेन को मारा और मणि ली. यह बात मैंने अपने कन्तके मुख से सुनीहै परन्तु तुम किसी के आगे मत कहियो, वे वहाँ से तो भला कह चुपचाप चली आईं पर अचरज कर एकान्त में बैठ आपसमें चर्चा करने लगीं निदान एक दासीने यह बात श्रीकृष्णचन्द्र के रनिवास में जा सुनाई, सुनते ही सबके जी में आया कि जो सत्राजित की स्त्री ने यह बात कही है तो झूठी न होगी ऐसे समझ उदास हो सब रनवास श्रीकृष्ण को बुरा कहने लगा इस बीचमें किसी ने आय श्रीकृष्णचन्द्रजी से कहा कि महाराज तुम्हें प्रसेन को मारने, और मणि के लेनें का कलंक लग चुका तुम क्या बैठे करते हो कुछ इसका उपाय करो।

इतनी बात के सुनतेही श्रीकृष्णजी पहले तो घबराये पीछे कुछ सोच समझ वहां आये, जहां उग्रसेन बसुदेव और बलराम सभामें बैठे थे और बोले कि महाराज! हमें यह सब लोग कलंक लगाते हैं कि कृष्ण ने प्रसेन को मार मणि ले ली इससे आपकी आज्ञा ले प्रसेन और मणि को ढूंढने जाते हैं जिससे यह अपयश छूटै यों कह श्रीकृष्णजी वहाँ से आय कितने एक यदुवंशियों और प्रसेन के साथियों को साथ ले वन को चले कितनी एक दूर जाय देखें तो घोड़ों के चरण चिन्ह दृष्टि पड़े, उन्हीं को देखते २ वहाँ जाय पहुँचे जहां सिंहने तुरङ्ग समेत प्रसेन मार खाया था दोनोंकी लाश और सिंहके पावों के चिन्ह देख सबने जाना कि उसे सिंहने मार खाया पर मणि न पाय श्रीकृष्णचन्द्र सबको साथ लिये २ वहां गये जहाँ वह औंड़ी अँधेरी महा भयावनी गुफा थी उसके द्वार पर देखते क्या है कि सिंह मरा पड़ा है पर मणि वहां भी नहीं ऐसा अचरज देख सब श्रीकृष्णचन्द्र जी से कहने लगे कि महाराज! इस बनमें ऐसा कौन बड़ा जन्तु आया जो सिंह को मार मणिले गुफा में बैठा अब इसका कुछ उपाय नहीं जहाँ तक ढूंढ़ने का धर्म था तहां तक आपने ढूंढा तुम्हारा कलंक छूटा अब नाहक आपकेशिर अपयश पड़ा श्रीकृष्णजी बोले चलो इस गुफामें धसके देखें कि नाहर को मार मणि कौन ले गया वे सब बोले कि महाराज जिस गुफा का मुख देख हमें डर लगता है उसमें धसेंगे कैसे वरन हम तुम से भी विनती कर कहते हैं कि इस महा भयावनी गुफामें आपभी न जाइये अब घर को पधारिये हम सब मिल नगर में कहेंगे कि प्रसेनको मार सिंहने मणिली और सिंहको मार कोई जन्तु एक अति डरावनी औंड़ी गुफा में गया यह हम सब अपनी आंखों से देख आये श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले मेरा मन मणिमें लगा है मैं अकेला गुफा में जाता हूँ दश दिन पीछे आऊंगा तुम दश दिन तक यहाँ रहियो इस में बिलम्ब होय तो घर जाय सदेशा कहियो महाराज! इतनी बात कह हरि उस अँधेरी भयावनी गुफामें पैठे और चले २ वहाँ पहुँचे जहाँ

जामवन्त सोताथा और उसकी स्त्री अपनी लड़की को खड़ी पालने में झुलाती थी वह प्रभुको देख भय खाय पुकारी जामवन्त जगा तो धाय हरिसे लिपटा और मल्लयुद्ध करने लगा तब उसका कोई दांव और बल हरि पर न चला तब मनही मन बिचारकर कहने लगा मेरे बलके तो हैं लक्ष्मण राम और इस संसार में ऐसा बली कौन है जो मुझसे करे संग्राम महाराज। जामवन्त मनही मन ज्ञानसे विचार फेर प्रभुका ध्यान कर बोला

ठाढ़ो भयो जोरके हाथ, बोल्यो दरश देहुरघुनाथ। अन्तर्यामी मैं तुम जाने,लीला देखतही पहचाने।
भलीकरी लीन्हो अवतार, करिहौ दूर भूमिकोभार। त्रेतायुगते ईंहिठां रह्यौ,नारद भेदतुम्हारो कह्यो।
मणि के काज प्रभू इत ऐहैं। तब ही तोकौं दरशन देहैं॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहाकि हे राजा जिस समय जामवन्त ने प्रभुको जान यों बखान किया तिस काल श्रीमुरारी भक्त हितकारी ने जामवन्त की लग्न देख मग्न हो राम का वेष धर धनुषवाण ले दर्शन दिया तब जामवन्त ने अष्टांग प्रणाम कर खड़े हो हाथ जोड़ अति दीनता से कहा कि हे कृपासिन्धु दीनबन्धु जो आप की आज्ञा पाऊं तो अपना मनोरथ कह सुनाऊं प्रभु बोले अच्छा कह तब जामवन्त ने कहा कि हे पतित पावन दीनानाथ मेरे चित्त में ये है कि यह कन्या जामवन्ती अपको ब्याह दूं और जगत में यश बड़ाई लूं भगवान ने कहा जो तेरी इच्छा में ऐसा आया तो हमें भी प्रमाण है इतना वचन प्रभु के मुख से निकलते ही जामवन्त ने पहले तो श्रीकृष्ण की चन्दन अक्षत धूप दीप नैवेद्य से पूजा की पीछे वेदकी विधि से अपनी बेटी ब्याह दी और उसके यौतुक में वह मणीभी धर दी।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवमुनि बोले कि हे राजा श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द तो मणि समेत जामवन्ती को ले यों गुफासे चले और जो यादव गुफा के मुंह पर प्रसेन और श्रीकृष्ण के साथी खड़े थे अब तिनकी कथा सुनिये गुफा के बाहर उन्हें जब अट्ठाईस

दिन बीते और हरि न आये तब वे वहाँ से निराश हो अनेक अनेक प्रकारकी चिन्ताकरते और रोते पीटते द्वारिकामें आये यह समाचार पायसब यदुवंशी निपट घबराये औरश्रीकृष्णका नाम लेले महाशोककर रोने पीटनेलगे और सारे रनिवासमें कोहराम पड़गया निदान सबरानियां अति व्याकुल हो तनछीन, मनमलीन राजमन्दिरसे निकल रोतीपीटती वहाँआई जहाँ नगरके बाहर एककोसपर देवीका मन्दिरथा, पूजाकर गौरीको मनाय हाथजोड़ शिरनाय कहनेलगी हे देवी! तुझे सुरनरमुनि सब ध्यावतेहैं और तुझसे जो वरमाँगे हैं,सो पावते हैं तू भूत भविष्य वर्तमानकी सबबात जानती है, कह श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द कब आवेंगे? महाराज सब रानियाँ तो देवीकेद्वार धरनादे योंमनाय रहीथीं,उग्रसेन बलदेव आदि सब यादव महा चिन्तामें बैठे थे कि इसीबीच श्रीकृष्णचन्द्र अविनाशी द्वारिकावासी हंसते २ जामवन्तीको लिये आय राजसभामें खड़े हुए प्रभुका चन्द्रमुख देख सबको आनन्दहुआ और यह शुभसमाचार पाय सब रानियाँभी देवी पूज घरआईं और मङ्गलाचार करनेलगीं, इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज श्रीकृष्णजी ने सभामें बैठतेही सत्राजितको बुला भेजा और वह मणि देकर कहाकि यह मणि हमने न ली थी तुमने झूठमूठ हमको कलंक दिया।

यहमणि जामवन्त कपिलीनी। सुता समेत मोहि तिन दीनी॥
मणि ले तबहि चल्यो शिरनाय। सत्राजित मन सोचत जाय॥
हरि अपराध कियो मैं भारी। अनजाने दीन्ही कुलगारी॥
यादव पतहि कलंक लगायो। मणि के काजै बैर बढ़ायो॥
अब यह दोष कटै सो कीजै। सत्यभामामणि कृष्णहि दीजै॥

महाराज ऐसेमनही मन सोचविचार करता मणिलिये मनमारे सत्राजित अपने घर गया उसने सब अपने जी का विचार स्त्रीसे कह सुनाया उसकी स्त्रीबोली स्वामी यह बात तुमने अच्छी विचारी सत्यभामा श्रीहरिको दीजै और जगतमें यश लीजै इतनी बातके सुनतेही सत्राजितने एक ब्राह्मणको बुलवाय शुभलग्न मुहूर्त् ठहराय रोरी,अक्षत,रुपया नारियल एकथालीमें धर पुरोहितके हाथ श्रीहरिजी के यहाँ टीका भेज दिया श्रीहरि बड़ी धूमधामसे मौर बांधि ब्याहने आये,तब सत्राजितने अपनीसब रीति भांतिकर वेदकी

विधि से कन्या दान किया और बहुतसा धन दे यौतुक में मणि को भी धर दिया मणि को देखते ही हरिने उसे निकाल बाहर किया और कहाकि यह मणि हमारे किसी काम की नहीं है क्योंकि तुमने सूर्य की तपस्या कर पाई हमारे कुलमें श्री भगवान् छुड़ाय और देवता की दी हुई वस्तु नहीं लेते, यह तुम अपने घरमें रक्खो, महाराज श्रीहरिजी के मुखसे इतनी बात निकलते ही सत्राजित मणि ले जाय रहा और श्रीहरि सत्यभामाको ले बाजे गाजेसे निज धाम पधारे और आनन्दसे सत्यभामा समेत राजमन्दिर में जा बिराजे इतनी कथा सुन राजा परीक्षितने श्रीशुकदेवजीसे पूछा कि कृपानिधान श्री-हरिको कलङ्क क्यों लगा ! कृपाकर कहो, शुकदेवजी बोले—

दो०-चांद,चौथि को देखियो मोहन भादों मास। ताते लग्यो कलंक यह अति मन भयो उदास ॥

और सुनो—

दो०-जो भादों की चौथि को, चांद निहारे कोय, यह प्रसङ्ग कानन सुने ताहि कलंक न होय ॥

अध्याय ५८

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! मणिके लिये जैसे शतधन्वा सत्राजित को मार मणि ले अक्रूर को दे द्वारिका छोड़ भागा तैसे में अब कथा कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो, एक दिन हस्तिनापुर से आय किसी ने बलराम सुख-धाम और श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द से यह सन्देशा कहा कि—

दो०—पांडव न्योते अंध सुत घर के बीच सुवाय। अर्द्ध रात्रि चहुँओरते दीनी आग लगाय॥

इतनी बातके सुनते ही दोनों भाई अति दुख पाय घबराय तत्काल दारुक सारथी से अपना रथ मँगवाय तिसपर चढ़ हस्तिनापुर को गये और रथसे उतर कौरवों की सभामें जाय खड़े रहे वहां देखते क्या हैं कि सब तनछीन मन मलीन बैठे हैं दुर्योधन मनही मन कुछ सोचता है, भीष्म नयनों से जल पोंछता है धृतराष्ट्र बड़ा दुख करता है द्रोणाचार्य की भी आंखों से पानी चलता है, विदुरजी भी पछिताते हैं, गान्धारी उनके पास आय बैठी और भी जो कौरवों की स्त्रियाँ थीं सब पांडवोंकी सुध कर२ रो रही थीं और सारी सभा शोक मय हो रही थी महाराज वहांकी यह दशा देख श्रीकृष्ण बलराम उनके पास जा बैठे और उन्होंने पांडवों का समाचार पूछा पर किसी ने कुछ भेद न कहा सब चुप हो रहे।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहाकि महाराज श्रीकृष्ण बलरामजी तो पांडवों के जलने का समाचार पाय हस्तिनापुर को गये, और द्वारका में शतधन्वा नाम यादव था कि जिसने पहले सत्य-भामा माँगी थी तिसके यहां अक्रूर और कृतवर्मा मिलकर गये और दोनों ने उससे कहा कि हस्तिनापुर को गये हैं श्रीकृष्ण और बलराम, अब आय पड़ा है तेरा दांव सत्राजितसे तू अपना बैर ले क्योंकि उसने तेरी बड़ी चूककी जो तेरी मांग श्रीकृष्ण को दी और तुझे गाली चढ़ाई अब यहां उसका कोई नहीं सहाई, इतनी बातके सुनतेही शतधन्वा अति क्रोधकर उठा और रात्रिमें सत्राजितके घर जा ललकारा निदान छलकर उसे मार वह मणि ले आया तब शतधन्वा अकेला घर में बैठ कुछ सोच विचार कर मनही मन पछताय कहने लगा—

मैं यह बैर कृष्ण सों कियो, मतो अक्रूर केर मन लियो॥

दो०-कृतवर्मा अक्रूर मिल मतो दियो मोय आय। साधु कहै जो कपट की तासों कहा बसाय॥

महाराज इधर शतधन्वातो इस भांति पछिताय पछिताय बार२ कहता कि होनहारसे कुछ न बसाय कर्मकी गति किसीसे जानी न जाय और इधर सत्राजितको मरा निहार,उसकी रानी रो२कर कन्त२ कह उठी पुकार, उसके

रोनेकी ध्वनि सुन सब कुटुम्ब के लोग क्या स्त्री क्या पुरुष अनेक अनेक भाँतिकी बातें कह २ रोने पीटने लगी और सारे घरमें कुहराम पड़गया पिता का मरना सुन उसी समय सत्यभामाजी आय सबको समझाय बुझाय बापकी लोथ तेलमें डलवाय अपना रथ मंगवाय तिसपर चढ़ श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्दके पास चली और रात दिनके बीच जा पहुँची ।

देखतही उठबोले हरी, घरहै कुशलक्षेम सुन्दरी ॥ सतभामा कह जोरेहाथ,तुमबिन कुशलकहां यदुनाथ
हमहि विपति शतधन्वादई,मारो पिता हत्यो मणिलई ॥ घरे तेलमें श्वसुर तिहारे,करोदूरसबशूल हमारे

इतनी बात कह सत्यभामाजी श्रीकृष्ण बलदेवजीके सोंही खड़ी हो हाय पिता कर धाय मार रोने लगी उनका रोना सुन श्रीकृष्ण बलराम आशा भरोसा दे ढाढस बँधाय वहाँ से साथ ले द्वारका में आये श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज द्वारिका में आते ही श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सत्यभामाको महा दुखी देख प्रतिज्ञा कर कहाकि सुन्दरी तुम अपने मनमें धीरजधरो और किसी बात की चिन्ता मतकरो जो होनाथा सो तो हुआ पर अब मैं शतधन्वाको मार तुम्हारे पिता का बैर लूंगा तब मैं और काम करूंगा ।

महाराज राम कृष्ण के आतेही शतधन्वा अतिभय खाय घर छोड़ मनही मन यह कहता था पराये कहे मैंने श्रीकृष्णजी से बैर किया अब शरण किसकी लूं कृतवर्मा के पास आय और हाथजोड़ अति विनती कर बोला कि महाराज आपके कहने से मैंने किया यह काम, मुझ पर कोपेंहैं श्रीकृष्ण बलराम इससे मैं भागकर तुम्हारे शरण आया हूँ मुझे कहीं रहनेको ठौर बतलाइये, शतधन्वा की यह बात सुन कृतवर्मा बोलाकि सुनो हमसे कुछ नहीं हो सकता, जिसका बैर श्री कृष्णचन्द्र से भया सो नर सबही से गया तू क्या नहीं जानता था कि हैं अति बली मुरारी तिनसे बैर किये होगी हानि हमारी किसीसे कहने से क्या हुआ अपना बल विचार काम क्यों न किया संसारकी रीति है कि बैर ब्याह और प्रीति समान ही से कीजै तू हमारा भरोसा मत रख हम श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दके सेवक हैं उनसे बैर करना हमें नहीं शोभता, जहाँ तेरा सींग समाय तहां जा, महाराज ! इतनी बात सुन शतधन्वा निपट उदास हो वहां से चल अक्रूर के पास आया और

हाथ बाँध शिरनाय बिनती कर हा हा खाय कहने लगा कि—

प्रभु तुम हो यादव पति ईश। तुम्हें नवावत हैं सब शीश॥
साधु दयालु धरम तुम धीर। दुख सह आप हरत परपीर॥
वचन कहे की लाज है तुम्हें। शरण आपनी राखौ हमें॥

मैंने तुम्हारा ही कहा मान यह काम किया अबतुम हमें कृष्ण के हाथसे बचाओ, इतनी बातके सुनते ही अक्रूरजीने, शतधन्वासे कहा कि बड़ा मूरख है जो हमसे ऐसी बात कहता है, क्या तू नहीं जानता कि श्रीकृष्ण चन्द्र सबके कर्त्ता दुःख हर्त्ता हैं, उनसे बैर कर संसार में कब कोई रह सकता है, कहने वाले का क्या बिगड़ा? अबतो शिरपर तेरे आन पड़ी है, सुन नर मुनिकी याही रीती, स्वारथ लागि करें सब प्रीती, और जगत में बहुत भाँति के लोग हैं सो अनेक २ प्रकारकी बात अपने स्वाथसे कहतेहैं, इससे मनुष्य को उचित है कि कहेपर न जाय, जो काम करे तिसमें पहले अपना भला बुरा विचारले पीछे उस काम में पाँव दे, तूने बे समझ बूझ किया है काम, अब तुझे कहीं जगत्में रहनेका नहीं है धाम; जिसने कृष्ण से बैर किया वह फिर न जिया, जहाँ भागके रहा तहाँ मारा गया मुझे मरना नहीं जो तेरा पक्ष करूं संसारमें जीव सबको प्याराहै, महाराज अक्रूरजीने जब शतधन्वाको यों रूखेसूखे वचन सुनाये तबतो निराशहो जीनेकी आशा छोड़ मणि अक्रूरजीके पास रखकर रथ पर चढ़ नगर छोड़ भागा और उसके पीछे रथपर चढ़ श्रीकृष्ण बलरामजी भी उठदौड़े और चलते २ उसे सौयोजन पर जाय लिया, उनके रथकी आहट पा शतधन्वा अति घबराय रथ से उतर मिथिलापुरी में जा बढ़ा, प्रभुने उसे देखकर क्रोधकर सुदर्शन चक्रको आज्ञा दी कि तू अभी शतधन्वा का शिर काट, प्रभू की आज्ञा पाते ही सुदर्शन चक्रने उसका शिर जा काटा तब श्री कृष्णचन्द्र ने उसके पास जाय मणि ढूंढ़ी पर न पाई, उन्होंने बलरामजी से कहा कि भाई! शतधन्वा को मारा पर मणि न पाई, बलरामजी बोलेकि भाई वह मणि किसी बड़े पुरुष ने पाई तिसने हमें लाय न दिखाई वह मणि किसी के पास छिपने की नहीं तुम देखियो निदान कहीं न कहीं प्रगटेगी इतनी

बात कह बलदेवजी ने श्रीकृष्णचन्द्र से कहाकि भाई ! अब तुमतो द्वारका पुरी को सिधारो और हम मणि खोजने को जाते हैं जहाँ पावेंगे तहां से ले आवेंगे ।

इतनी कथा कह शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहाकि, महाराज ! श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द तो शतधन्वा को मार द्वारिकापुरी को पधारे, और बलराम सुखधाम मणिके खोजने को सिधारे, देश देश नगर नगर गाँव गांव ढूंढ़ते २ बलदेवजी चले २ हस्तिनापुर में जा पहुँचे इनके पहुँचने का समाचार पाय वहां का राजा दुर्योधन उठ धाया, आगे बढ़ भेंटकर भेंटदे प्रभुको गाजे गाजेसे पाटम्बर के पांवड़े डालता निज मन्दिर में ले आया सिंहासन पर बिठाय अनेक प्रकारसे पूजाकर भोजन करवाय अति बिनती कर शिरनाय हाथ जोड़ सन्मुख खड़ा हो बोला, कृपासिन्धु आपका आना इधर कैसे हुआ सो कृपाकर कहिये, महाराज बलदेवजी ने उसके मनमें लग्न देख मग्न हो अपने आने का सब भेद कह सुनाया इतनी बात सुन राजा दुर्योधन बोला कि नाथ वह मणि कहीं किसी के पास न रहेगी कभी आपसे आप प्रकाश हो रहेगी यों सुनाय फिर हाथ जोड़ कहने लगा, दीन दयालु मेरे बड़े भाग्य जो आपका दर्शन मैंने घर बैठे पाया, और जन्म २ का पाप गँवाया, अब कृपाकर हमारे मनकी अभिलाषा पूरी कीजै. और कुछ दिवस शिष्य को गदा युद्ध सिखाय जगतमें यश लीजै महाराज दुर्योधनसे इतनी बात सुन बलरामजी ने उसे शिष्य किया कुछ दिन वहां रह सब गदा युद्ध की विद्या सिखाई, परि मणि वहां भी सारे नगर में खोजी और न पाई आगे हरि के पहुँचने के उपरान्त कितने एक दिन पीछे बलरामजी भी द्वारिकानगरी में आये तो यादव नाथजी ने यादवों को साथले सत्राजितको तेल से निकाल अग्नि संस्कार किया और अपने हाथों दाह दिया, श्रीकृष्णजी क्रिया कर्म से निश्चिन्त हुए तब अक्रूर कृतवर्मा कुछ आपसमें सोच विचारकर श्रीकृष्ण जी के पास आये उन्हे एकान्तमें ले जाय मणि दिखाय कर बोले कि

महाराज! यादव सबही मूरख भये और माया में मोह गये, तुम्हारा सुमिरण ध्यान छोड़ धनान्ध होरहे हैं जो ये अब कुछ कष्ट पावें तो प्रभु की सेवामें आवें इसलिये, हम नगर छोड़ मणि ले भागते हैं, जब हम इनसे आपका भजन सुमिरन करावेंगे तभी द्वारकापुरी में आवेंगे इतनी बात कह अक्रूर और कृतवर्मा सब कुटुम्ब समेत आधीरात को श्रीकृष्ण चन्द्र के भेद से द्वारकापुरीसे भागे, ऐसे कि किसी ने जाना कि किधर गये भोर होते ही सारे नगरमें यह चर्चा फैली कि न जानिये रातकी रात में अक्रूर और कृतवर्मा कुटुम्ब समेत किधर गये और क्या हुए? इतनी कथा कह शुकदेवजी बोले कि महाराज! इधर द्वारकापुरी में नित घर घर यह चर्चा होने लगी, और उधर अक्रूरजी प्रथम प्रयागमें जाय मुण्डन करवाय त्रिवेणी न्हाय बहुतसा दान पुण्य कर तहाँ हरपौड़ि बंधवाय गया को गये, वहाँ भी फल्गूनदीके तीर बैठ शास्त्रकी रीतिसे श्राद्ध किया और गयावासियों को जिमाया बहुतही दानदिया पुनि गदाधर के दर्शन करके वहांसे चल काशीपुरीमें आये इनके आने का समाचार पाय इधर उधर के राजा सब आय भेंट कर भेंट धरने लगे और ये यहाँ यज्ञ, दान तप, व्रत कर रहने लगे इसमें कितने एक दिन बीच श्रीमुरारी भक्त हितकारी ने अक्रूरजी को बुलाना जीमें ठान बलरामजी से कहा कि भाई अब प्रजाको कुछ दुखदीजे अक्रूरजी बुलाय लीजे, बलदेवजी बोले महाराज जो आपकी इच्छामें आवे सो कीजै और साधुओं को सुख दीजै इतनी बात बलरामजी के मुखसे निकलतेही श्रीयादवनाथ ने ऐसा किया कि द्वारकापुरी में घर घर ताप तिजारी, भिगारी, क्षयी, दाद, खाज अतिश कोढ़, महाकोढ़, जलन्धर, भगंदर कठोदर, अतिसार, आँवमरोड़ा खांसी शूल अर्द्धांग, शीतांग, भोलात सन्निपात आधव्याधि, फैल गई और चार महिने वर्षा भी न हुई तिससे सारे नगर के नदी नाले सरोवर सूख गये, तृण अन्नभी कुछ न उपजा, नभचर थलचर जीव जन्तु पक्षी और ढोर लगे व्याकुल हो, सूख२ मरने और पुरवासी भूखके मारे

आहि२ करने, निदान सब नगर निवासी महा व्याकुलहो घबराय श्रीकृष्ण चन्द्र दुःख निकन्दनजीके पास आये और अति गिड़गिड़ाय अधिक आधीनता कर हाथ जोड़ शिर नवाय कहने लगे कि—

हमतो शरण तिहारी रहै। कष्ट महा अब क्यों कर सहैं॥
मेघ न बरष्यो पीड़ा भई। कहा विधाता ने यह ठई॥

इतना कहा फिर कहने लगे कि द्वारकानाथ दीन दयालु! हमारे तो कर्त्ता दुख हर्त्ता तुम्हींहो तुम्हें छोड़ कहां जांय और किससे कहें? यह उपाधि बैठे बिठाये कहां से आई और क्यों हुई, सो कृपा कर कहिये—

श्रीशुकदेव मुनि बोले कि महाराज इतनी बातके सुनते ही श्रीकृष्ण जी ने उनसे कहा नि सुनो जिस पुरसे साधुजन निकल जाता है तहां आपसे आप आपत्काल दरिद्र दुःख आता है, जबसे अक्रूरजी इस नगर से गये हैं तभी यह गति हुई है, जहां रहते हैं साधु सत्यवादी और हरिदास, तहाँ होता है अशुभ अकाल विपत्ति का नाश, इन्द्र रखता हरिभक्तों का स्नेह, इसलिये उस नगर में भली भाँति वर्षता है मेह, इतनी बात के सुनतेही सब यादव बोल उठे कि महाराज! आपने सत्य कहा यह बात हमारे भी जीमें आई क्योंकि अक्रूर के पिता का नाम सुफलक है वहभी बड़ा साधु सत्यवादी धर्मात्माहै, जहां वह रहता है तहां कभी दुख और दरिद्र नहीं होताहै अकाल, सदा समयपर मेघवर्षता है, उससे होताहै सुकाल और सुनिये कि एक समय काशी नगरीमें बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा तहां काशीका राजा सुफलक को बुलाय ले गया महाराज सुफलक के जाते ही उस देश में मेह मन मानता वर्षा मौसम हुआ और सबका दुख गया पुनि काशी नगरीके राजाने अपनी लड़की सुफलक को ब्याहदी वे आनन्द से वहां रहने लगे उस राजकन्याका का नाम गाँदिनी था तिसका पुत्र अक्रूर है इतना कह सब यादव बोले कि महाराज हमतो यह बात आगे से जानते थे अब जो आप आज्ञा कीजै सो करें श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि तुम अति आदर मान कर अक्रूरजी को जहां पावो तहां से ले आवो यह वचन प्रभुके मुखसे निकलते ही सब यादव मिल अक्रूरजी के ढूंढ़ने को निकले और चले२

बाराणसीपुरी में पहुँचे अक्रूरजी से भेंठदे हाथ जोड़ शिरनाय सन्मुख खड़े हो बोले—

चलो नाथ गोकुल बल श्याम । तुम बिन पुरवासी हैं बिराम ॥
जितही तुम तितही सुखबास । तुम बिन कष्ट दरिद्र निवास ॥
यद्यपि पुर में श्री गोपाल । तऊ कष्ट दै परयो अकाल ॥
साधुन के वश श्री पति रहैं । तिनते सब सुख संपति लहैं ॥

महाराज ! इतनी बात सुनतेही अक्रूरजी वहांसे आतुरहो कुटुम्ब समेत कृतवर्मा को साथले सब यदुवंशियोंको लिये गाजे बाजेसे चल खड़े हुए और कितने एक दिनों के बीच आ सब समेत द्वारिकापुरी मे पहुंचे इनके आने का समाचार पाय श्रीकृष्णजी और बलराम आगे बढ़ आय इन्हें अति मान सन्मान से नगरमें लिवाय ले गये, हे राजा अक्रूरजी के नगर में प्रवेश करतेही मेघवर्षा और मौसम हुआ सारे नगरका दुःख दरिद्र बह गया अक्रूरजी की महिमा हुई सब द्वारिकावासी आनन्द मङ्गल से रहने लगे।

आगे एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दने अक्रूरजीको निकट बुलाय एकांत ले जायके कहाकि तुमने सत्राजित की मणि क्या की वह बोला महाराज मेरे पास है, फिर प्रभुने कहाकि जिसकी वस्तु तिसको दीजै और वह न होय तो उसके बेटेको सौंपिये बेटा न होयतो उसकी स्त्रीको दीजे स्त्री न होय तो उसके भाईको दीजे भाई न होय तो उसके कुटुम्बको सौंपिये कुटुम्ब भी न होयतो उसके गुरुपुत्रको दीजिये गुरुपुत्र न होयतो ब्राह्मणको दीजिये पर किसी का द्रव्य आप न लीजिये, यह न्याय है, इसमें अब तुम्हें उचित है कि सत्राजित की मणि उसके नाती को दो और जगत में बड़ाई लो महाराज ! श्रीकृष्णचन्द्र के मुखसे इतनी बात के निकलते ही अक्रूरजी ने मणिलाय प्रभुके आगे धर हाथ जोड़ अति बिनती कर कहा कि दीनदयालु यह मणि आप लीजिये और मेरा अपराध दूर कीजिये इस मणिने सोना निकाला सो मैंने तीर्थ यात्रामें उठायाहै प्रभु बोले अच्छा किया, यों कह मणि ले हरिने सत्यभामाको जाय दी, और उसके चित्त की सब चिन्ता दूर की।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे शतधन्वा बधो नाम अष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५८॥

अध्याय ५६

श्रीशुकदेवजी बोले महाराज! एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र जगबन्धु आनन्द कन्दजीने यह विचार किया कि अब चलकर पाँडवों को देखिये, जो आग से बचे जीते जागते हैं इतनी बात कह हरि कितने एक यदु वंशियों को साथ ले, द्वारकापुरी से चले हस्तिनापुर को आये, इनके आने का समाचार पाय युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन नकुल, सहदेव, पाँचों भाई अति हर्षित हो उठ धाये और नगर के बाहर आय मिल बड़ी भाव भक्ति कर लिवाय घर ले गये घर जाते ही कुन्ती और द्रोपदी ने पहले तो सात सुहागिनों को बुलाय मोतियों का चौक पुरवाय तिसपर कंचन की चौकी बिछवाय उसपै श्रीकृष्ण को बिठाय मङ्गलाचार करवाय अपने हाथों आरती उतारी पीछे प्रभुके पांव धुलवाय रसोई में ले जाय षटरष भोजन करवाये, महाराज! जब श्रीकृष्णजी भोजन कर पान खाने लगे तब—

कुन्ती ढिंग बैठी कह बात। पिता बन्धु पूंछत कुशलात ॥
नीके सूरसेन वसुदेव। बन्धु भतीजे अरु बलदेव ॥
तिन में प्राण हमारो रहे। तुम बिन कौन कष्ट दुख सहै ॥
जब जब बिपतिपरी अतिभारी। तब तुम रक्षाकरी हमारी ॥
अहो कृष्ण तुम पर दुख हरण। पांचो बन्धु तुम्हारी शरण ॥
ज्यों मृगनी वृक झुण्ड के त्राता। यों ये अन्ध सुतनके बासा ॥

महाराज! जब कुन्ती यों कह चुकी—

तबहिं युधिष्ठिर जोरे हाथ। तुम ही प्रभु यादव पतिनाथ॥
तुमको योगेश्वर नित ध्यावत। शिव विरंचिके ध्यान न आवत॥
हमको घरही दर्शन दीन्हो। ऐसो कहा पुण्य हम कीन्हो॥
चार मास रहि कै सुख दैहो। वर्षा ऋतु बीते घर जैहो॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! इस बात के सुनतेही भक्त हितकारी श्री बिहारी सबको आशा भरोसा दे वहाँ रहे और दिन दिन आनन्द प्रेम बढ़ाने लगे, एक दिन राजा युधिष्ठिर के साथ श्री कृष्णचन्द्र अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव को लिये धनुषबाण कर गहे रथ पर चढ़ बनमें अहेर को गये, वहां जाय रथ से उतर फेंटा बांध बांहें चढ़ाय शर साध जंगल झाड़ २ लगे सिंह बाघ, गैंड़े, हरने साँबर, सूकर, हरिण, ऋच्छ, मार २ युधिष्ठिर के सन्मुख लाय २ धरने और राजा युधिष्ठिर हँस२ लेने, और जो जिसका भक्ष्यथा तिसे देने, और हरिण साँबर रसोई में भेजने तिसी समय श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन आखेट करते२कितनी एक दूर सब से आगे जाय एक वृक्ष के नीचे खड़े हुए, फिर नदी के तीर जाके दोनों ने जल पिया, इतने में श्रीकृष्णजी देखते क्या हैं कि नदी के तीर एक अति सुन्दरी नवयौवना, चन्द्रमुखी, चंपकवरणी, मृगनयनी, पिकबयनी, गजगामिनी कटिकेहरि, नखशिख से शृङ्गार किये अनगमद पिये महा छवि लिये अकेली फिरती है इसे देखतेही हरि चकित थकित हो बोले—

यहको सुन्दरि बिरहिन अंगे। कोऊ नहीं तासु के संग॥

महाराज! इतनी बात प्रभु के मुख से सुन और उसे देख अर्जुन हड़बड़ाय दौड़ कर वहाँ गया जहाँ वह महासुन्दरी नदी के तीर बिहरती थी और पूछने लगा कि कह सुन्दरी! तू कौन है? और कहां से आई है और किस लिए यहां अकेली फिरती है, यह भेद अपना सब मुझे समझा कर कह। इतनी बात के सुनते ही—

सुन्दिरिकथा कहै है अपनी, हौं कन्या मैं सूरज तनी। कालिंदी है मेरो नाम, पिता दिया जलमें विश्राम॥
रचो नदीमें मंदरआय, मोसों पिताकह्योसमुझाय। कीजो सुता नदीढिंगफेरो, आय मिलेगोतहंवरतेरो॥
यदुकुल माँहि कृष्णऔतरे, तोकाजे इहिठां अनुसरे। आदिपुरुषअविनाशीहरी। ताकाजै तूहैऔतरी॥
ऐसे जबही तात रवि कह्यो। तबते मैं हरिपद को चह्यो॥

महाराज ! इतनी बात के सुनते ही अर्जुन अति प्रसन्न हो बोले कि हे सुन्दरी जिनके कारण तू यहाँ फिरती है वे ही प्रभु अविनाशी द्वारका बासी श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द आय पहुँचे ! महाराज ! ज्यों अर्जुन के मुंह से इतनी बात निकली त्यों भक्त हितकारी श्रीबिहारी भी रथ बढ़ाय वहाँ जा पहुँचे, प्रभु को देखते ही अर्जुन ने जब उसका सब भेद कह सुनाया, तब श्रीकृष्णचन्द्र ने हंस कर झट उसे रथपर चढ़ाय नगर की बाटली, जितने में श्रीकृष्णचन्द्र, नगर में बन से आये, इतने में विश्वकर्मा ने एक मन्दिर अति सुन्दर सब से निराला प्रभु की इच्छा देख बनाया हरिने आते ही कालिंदी को वहां उतारा और आप भी रहने लगे, आगे कितने एक दिन पीछे एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन रात की बिरियां किसी स्थान पर बैठे थे, कि अग्नि ने आय हाथ जोड़ शिर नाय हरि से कहा कि महाराज ! मैं बहुत दिन का भूखा सारे संसार में फिर आया, पर खाने को कहीं न पाया अब एक आस आपकी है, जो आज्ञा पाऊं तो बन जंगल जाय खाऊं प्रभु बोले अच्छा जाव खाव, फिर अग्निने कहा कृपानाथ ! मैं बन में अकेला नहीं जा सक्ता जो जाऊं तो इन्द्र आय मुझे बुझाय देगा यह बात सुन श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन से कहा, कि बन्धु ! तुम जाय अग्नि को चराय आवो यह बहुत दिन से भूखा मरता है ।

श्रीकृष्णचन्द्र के मुख से इतनी बात निकलते ही अर्जुन धनुष बाण ले अग्नि के साथ हुए, और अग्नि बन में जाय भड़का और लगे आम, इमली, बड़, पीपल, पाकड़, ताल, तमाल, महुवा, जामुन, खिरनी, कचनार, दाख, चिरौंजी, केला, निंबू बेर आदि वृक्ष सब जलने और—

फरकें कांस बांस अति चटकें । बनके जीव फिरैं मग भटकें ॥

जिधर देखिये उधर सारे बनमें अग्नि हूहूकर जलता है और धुवाँ मड़राय आकाश को गया, उस धुयें को देख ,इन्द्र ने मेघपति को आज्ञा दी कि बनके पशु पक्षी जीव जन्तुओंको बचाओ इतनी आज्ञा पाय मेघपति दल बादल साथले वहाँ आय घबराय जो वर्षने हुआ, तो अर्जुन ने ऐसे

पवन बाण मारे कि बादल राई सा हो यों उड़गया कि जैसे रुई के पहल पवन के झोंके से उड़ जांय, न किसी ने आते देखा न जाते, ज्यों आये त्यों सहज ही विलाय गये और अग्नि बन झाड़ खण्ड जलाता२ कहां आया कि जहाँ मय नाम असुर का मन्दिर था, अग्नि को अति रिस भरा आता देख मय महा भय खाय नंगे पाँवों गले में कपड़ा डाल हाथ बाँध मन्दिरसे निकल सन्मुख आय खड़ा हुआ और साष्टांग प्रणामकर अति गिड़ गिड़ाय के बोला हे प्रभु। इस आग से बचाय बेग मेरी रक्षा करो।

परयो अग्नि पायो सन्तोष। अब तुम मागो जनि कछु दोष।
मेरी बिनती मनमें लावो। बैसंदर तैं मोहि बचावो।

महाराज! इतनी बात मय दैत्य के मुख से निकलते ही अग्नि बाण वैसन्दर ने धरे और अग्नि भी सकुच खड़े रहे निदान वे दोनों को साथ ले श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द के निकट जा बोले महाराज।

यह मय असुर आय है काम। तुम्हारे लिये बनै है धाम।
अबहीं सुधि तुम याकी लेहु। अग्नि बुझाय अभय करि देहु।

इतनी बात कह अर्जुन ने गाँडीव धनुष शर समेत हाथ से भूमि में रक्खा तब प्रभु ने आग की ओर आँख दबाय सैनकी, वह तुरन्त बुझ गया और सारे बन में शीतलता हुई श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुन सहित मय को साथ ले आगे बढ़े वहां जाय मय ने कंचन के मणि मय मन्दिर अति सुन्दर सुहावने मन भावने क्षणभर में बनाय खड़े किये, ऐसे कि, जिनकी शोभा कुछ वरणि न जाती जो देखने को आता सो चकित हो चित्रसा खड़ा रह जाता आगे श्रीकृष्णजी वहाँ चार महीने बिरमे, पीछे वहाँ से चल कहां आये कि जहां राजसभा में राजा युधिष्टिर बैठे थे आते ही प्रभुनेराजासे द्वारका जाने की आज्ञा मांगी। यह बात श्रीकृष्णचन्द्र के मुख से निकलते ही सभा समेत राजा युधिष्टिर अति उदास हुए और नगर वासी भी क्या पुरुष स्त्री सब चिन्ता करने लगे, निदान प्रभु सबको यथा योग्य समझाय बुझाय आशा भरोसा दे अर्जुनको साथ ले युधिष्ठिर से बिदा हो हस्तिनापुर से चल हंसते खेलते कितने एक दिनों में द्वारकापुरी में आ पहुँचे

इनका आना सुन सारे नगरमें आनन्द होगया, और सबका बिरह दुःख गया पिता माता ने पुत्र मुख देख सुख पाया और मनका खेद सब गंवाया। और एक दिन श्री कृष्णजी ने राजा उग्रसेन के पास जाय कालिंदीका भेद सब समझायके कहा कि महाराज! भानुसुता कालिंदी को हम ले आये हैं, तुम वेद की विधी से हमारा उसके साथ ब्याह करदो. यह बात सुन उग्रसेन ने मंत्री को बुलाय आज्ञा दी कि तुम अबही जाय ब्याह की सामग्री लावो आज्ञा पाय मन्त्री ने विवाह की सामग्री बात की बातमें सब लाय दी, तिसी समय उग्रसेन बसुदेव ने एक ज्योतिषी को बुलाय शुभ दिन ठहराय श्रीकृष्णचन्द्रजी का कालिंदी के साथ वेद की विधि से ब्याह कर दिया।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव बोले कि राजा! कालिंदी का विवाह तो यों हुआ, अब आगे जैसे मित्रबिंदा को हरिलाये, और ब्याह किया तैसे कथा कहता हूँ तुम चित दे सुनो, शूरसेनजीकी बेटी श्रीकृष्ण की फूफी जिसका नाम राजाधिदेवी उसकी कन्या मित्रबिंदा जब ब्याहने योग्य हुई, तब उसने स्वयंबर किया तहाँ सब देश के नरेश, गुणवान, रूपनिधान, महाराज, बलवान, शूरवीर अति धीर बन ठनके एक से एक अधिक जाइकट्ठे हुए यह समाचार पाय श्रीकृष्णचन्द्रजी भी अर्जुन को साथ ले वहां गये और जाके बीचो बीच स्वयंबर में खड़े हुए।

हरषी सुन्दरि देखि मुरारी। डार डार मख रही निहारी॥

महाराज! यह चरित्र देख सब देश२के राजा लज्जित हो मन ही मन अनखनाने लगे, और दुर्योधन ने जाय उसके भाई मित्रसेनसे कहा कि बन्धु! तुम्हारे मामा का बेटा है हरी, तिसे देख भूली है सुन्दरी, यह लोक विरुद्ध रीति है इसके होनेसे जगत में हँसी होगी. तुमजाय बहन को कहोकि, कृष्णको नहीं बरै, नहीं तो सब राजाओं की भीड़ में हंसी होगी, इतनी बात के सुनतेही मित्रसेनने जाय बहन को बुझाय के कहा भाई की बात सुन समझ जो मित्रबिंदा प्रभु के पास से हटकर अलग दूर हो खड़ी हुई तो

अर्जुन ने झुककर श्रीकृष्ण के कान में कहा कि, महाराज ! अब आप किसकी कान करते हो बात बिगड़ चुकी जो कुछ करना हो सो कीजै विलम्ब न करिये अर्जुन की बात सुनतेही श्रीकृष्णाने स्वयंबर के बीच से उठ हाथ पकड़ मित्रबिंदा को उठाय रथमें बैठा लिया, और वोहीं सबके देखते रथ हाँक दिया. उसकाल सब भूपाल तो अपने२ शस्त्र ले ले घोड़ों पर चढ़२ प्रभु का आगा घेर लड़ने को खड़े हुए और नगर निवासी लोग हँस२ तालियाँ बजाय गालियाँ दे दे यों कहने लगे--

फूफी सुता को ब्याहन आयो । यह तुम कृष्ण भलो यश पायो ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले, महाराज ! जब श्रीकृष्णाचन्द्र जी ने देखाकि, चारों ओर से असुर दल घिर आया है सो लड़े बिना नरहेगा, तब उन्होंने कई एक बाण निषंग से निकाल धनुष तान ऐसे मारे कि वह सब सेना असुरों की छीन भीन हो वहां की वहीं बिलाय गई और प्रभु निर्द्वन्द्व हो आनन्द से द्वारका पहुँचे।

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज ! श्रीकृष्णाजी ने मित्रबिंदा को तो यों ले जाय द्वारका में ब्याहा, अब आगे जैसे सत्याको प्रभु लाये सो कथा कहता हूँ तुम चित लगाय सुनो कौशल देश में नग्नजीत राजा ने सात बैल अति ऊंचे भयावने बिन नाथे मंगवाय यह प्रतिज्ञा कर देशमें छुड़वाय दिये कि, जो इन वृषभों को एक बार नाथ लावेगा, उसे मैं अपनी कन्या ब्याह दूंगा, महाराज ! वे सातों बैल शिर झुकाये पूंछ उठाये भू खूंद२ डकराते फिरैं और जिसे पावें तिसे हनैं, आगे यह समाचार पाय श्रीकृष्णा-चन्द्र अर्जुन को साथ ले वहाँ गये, और जा राजा नग्नजीत के सन्मुख खड़े हुए, इनको देखते ही राजा सिंहासनसे उतर प्रणामकर इन्हें सिंहासन पर बिठाय चन्दन अक्षत पुष्प चढ़ाय धूप दीप कर नैवेद्य आगे धर हाथ जोड़ शिर नाय अति विनती कर बोला कि आज मेरे भाग्य जागे जो शिव, बिरंचि के कर्ता प्रभु मेरे घर आये, यों सुनाय फिर बोला कि महाराज ! मैंने एक प्रतिज्ञा की है सो पूरी होनी कठिन थी, पर अब मुझे निश्चय

हुआ कि आपकी कृपा से तुरन्त पूरी होगी, प्रभु बोले ऐसी तूने क्या प्रतिज्ञा की है कि, जिसका होना कठिन है ? तभी राजा ने कहा कि कृपा-नाथ ! मैंने सात बैल अननाथे छुड़वाय यह प्रतिज्ञा की है कि जो सातों बैलों को एकबेर नाथेगा तिसे मैं अपनी कन्या ब्याहूँगा, श्रीशुकदेवजी बोलेः-

सुन हरि फेंट-बांधि तहं गये । सात रूप धरि ठाढ़े भये ॥
काहु न लख्यो अलख व्यौहार । सातो नाथे एकहि बार ॥

वे वृषभ नाथने के समय ऐसे खड़े रहे कि, जैसे काष्ठके बैल खड़े होंय, प्रभु सातों को नाथ एक रस्सी में बांध राज सभा में ले आये यह चरित्र देख नगर निवासी तो सब क्या स्त्री क्या पुरुष अचरज कर धन्य२ कहने लगे, और राजा नग्नजीत ने उसी समय पुरोहित को बुलाय वेद की विधि से कन्यादान किया तिसके यौतुक में दश सहस्र गाय, नौ लाख हाथी, दश लाख घोड़े, तिहतर लाख रथ दे, दास दासी अनगिनत दिये, श्रीकृष्णचन्द्र सब ले वहाँ से जब चले, तब खिजलाय सब राजाओं ने प्रभु को मार्ग में आय घेरा, तहां मारे बाणों के अर्जुन ने सबको मार भगाया, हरि आनन्द मंगल से सब समेत द्वारका पुरी में पहुँचे, उस काल सब द्वारकावासी आगे आय प्रभु को बाजे गाजे से पाटम्बर के पांवड़े डालते राज मन्दिर में ले गये और यह कौतुक देख सब अचम्भे में रहे।

नग्नजीत की करी बड़ाई । कहत लोग यह बड़ी सगाई ॥
भलो ब्याह कोशलपति कियो । कृष्णहि इतो दायजो दियो ॥

महाराज ! नगर निवासी तो इस ढब की बातें कर रहे थे कि उसी समय श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजीने वहां आके राजा नग्नजीतका दिया हुआ सब दायज अर्जुनको दिया, और जगत में यश लिया, और अब जैसे श्रीकृष्णजी भद्रा को ब्याह लाये, सो कथा कहता हूँ तुम चित लगाय निश्चिन्त हो सुनो, केकय देश के राजा ने बेटी भद्रा का स्वयंबर किया और देश२के नरेशों को पत्र लिख भेजा वे आय इकट्ठे हुए, तहाँ श्रीकृष्णजी भी अर्जुनको साथ लेकर गये और स्वयंबर के बीच सभा में जा खड़े हुए, जब राज कन्या माला हाथ में लिये सब राजाओं को देखती भालती रूप

सागर जगत् उजागर श्रीकृष्णचन्द्र के निकट आई तो देखते ही भूलरही और उसने माला उनके गले में डाली, यह देख उसके माता पिता ने प्रसन्नहो वह कन्याहरिको वेदकी विधिसेब्याह दी, उसके दायजे में बहुतकुछ दिया कि, जिसका पारावार नहीं इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले महाराज, । श्रीकृष्णचन्द्रजी भद्रा को तो यों ब्याह लाये फिर प्रभुने लक्ष्मणा को ब्याहा सो कहता हूँ तुम सुनो, मद्र देश का नरेश अति बली और प्रतापी तिसकी कन्या लक्ष्मणा जब ब्याहने योग्य हुई तब उसने स्वयंबर कर चारों दिशाओं के नरेशों को पत्र लिख२बुलवाये वे अति धूमधाम से अपनी२सेना साज २ वहां आये और स्वयंबर के बीच बड़े बनाव से पांति की पाँति जा बैठे श्रीकृष्णचन्द्रजी भी अर्जुन को साथ ले तहां गये और जा स्वयंबर के बीच जा खड़े भये तो लक्ष्मणा ने सबको देख आ श्रीकृष्णजी के गले में माला डाली, उसके पिता ने वेद की विधि से प्रभु के साथ लक्ष्मणा का ब्याह कर दिया, सब देश२के नरेश वहां आये थे, सो महालज्जित हो आपस में कहने लगे कि, देखें हमारे रहते किस भाँति कृष्ण लक्ष्मणा को लेजाता है ऐसे कह वे सब अपना अपना दल साज मार्ग में रोक जा खड़े हुए ज्यों श्रीकृष्णचन्द्रने और अर्जुन लक्ष्मणा समेत रथ ले आगे बढ़े त्यों उन्होंने इन्हें आय रोका, और युद्ध करने लगे, निदान एक बेर में मारे बाणों के अर्जुन और श्रीकृष्णजी ने सबको मार भगाया और आप आनन्द मङ्गल से नगर द्वारका पहुँचे, इनके जातेही सारे नगर में घर घर आनन्द भये।

भई बधाई मंगलचार। कीन्हों वेदरीति ब्यौहार ॥

इतनी कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! इस भांति श्रीकृष्णजी पाँच ब्याह कर लाये, तब द्वारका में आठों पटरानियों समेत सुख से रहने और पटरानियां आठों पहर सेवा करने लगीं पटरानियों के नाम रुक्मणी, जाम्बवन्ती, सत्यभामा, कालिंदी मित्रबिंदा, सत्या भद्रा लक्ष्मणा।

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेमसागरे श्रीकृष्णपंच विवाह वर्णनो नाम ऐकोन षष्टितमोऽध्यायः ॥५६॥

अध्याय ६०

* श्रीकृष्ण भौमासुर संग्राम *

श्रीशुकदेवजी बोले कि हे राजा! एक समय पृथ्वी मनुष्य तनु धारण कर अति कठिन तप करने लगी तहां ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र इन तीनों देवताओं ने आ उससे पूछा कि तू किस लिये इतनी कठिन तपस्या करती है? धरती बोली कृपानिधान! मुझे एक पुत्रकी वासनाहै इस कारण महा तपस्या करती हूँ दयाकर मुझे एक पुत्र अति बलवन्त महा प्रतापी बड़ा तपस्वी दो, ऐसा कि जिसका सामना संसार में कोई न करे, न वह किसी के हाथ से मरे यह वचन सुन प्रसन्न हो तीनों देवताओं ने बरदे उससे कहा कि तेरा सुत नरकासुर नाम अति बली महा प्रतापी होगा, उससे लड़ कोई न जीतेगा वह सृष्टि के सब राजाओं को जीत अपने वश करेगा, स्वर्गलोक में जाय देवता वर्ग को मार भगाय अदिति के कुण्डल छीन आप पहनेगा, और इन्द्र का छत्र छिनाय लाय अपने शिर धरेगा, संसार के राजाओं की कन्या सोलह सहस्र एक सौ लाय अनब्याही घर में रक्खेगा तब श्रीकृष्णचन्द्र अपना सब कटक ले उस पर चढ़ जांयगे और उनसे तू कहेगी इसे मारो, पुनि वे मार सब राज कन्याओं को ले द्वारिकापुरी पधारेंगे।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि,

महाराज! तीनों देवताओं ने जब यों कहा तब भूमि इतना कह चुप हो रही, कि मैं ऐसी बात क्यों कहूँगी कि मेरे बेटे को मारो आगे कितने दिन पीछे भूमि पुत्र भौमासुर हुआ तिसी का नाम नरकासुर भी कहते हैं वह प्राग्ज्योतिषपुर में रहने लगा उस पुर के चारों ओर पहाड़ की ओट और जल अग्नि पवन का कोट बनाय सारे संसार के राजाओं की कन्या बल कर छीन धाय समेत लाय लाय उसने वहाँ रक्खीं, नित उन सोलह सहस्र एक सौ राजकन्याओं के खाने पीने पहरने की चौकसी किया करे, और बड़े यत्न से उन्हें पलवावे, एक दिन भौमासुर अति कोपकर पुष्पक विमान में बैठ जो लंका से लाया था सुरपुर में गया और लगा देवताओं को सताने उसके दुःख से देवता स्थान छोड़ २ अपना जीव ले ले जिधर तिधर भाग गये तब वह अदिति के कुण्डल इन्द्र का छत्र छीन लाया और सब सृष्टि के सुर, नर, मुनियों को अति दुःख देने लगा, उसका सब कारण सुन श्रीकृष्णचन्द्र जगबन्धुजी ने अपने जी में कहा।

ताहि मारि सुन्दरि सब ल्याऊं। सुरपति छत्र तहां पहुंचाऊं।
जाय अदित के कुण्डल दैहौं। निर्भय राज्य इन्द्र को कै हों।

इतना कह पुनि श्रीकृष्णचन्द्रजीने सत्यभामा से कहा हे नारि! तू मेरे साथ चल तो भौमासुर मारा जाय, क्योंकि तू भूमि का अंश है इस लेखे उसकी माँ हुई, जब देवताओं ने भूमि को वर दिया था तब यह कह दिया था कि, जब तू मारने को कहेगी, तब तेरा पुत्र मरेगा, नहीं तो किसी से किसी भांति मारा न मरेगा, इस बात के सुनते ही सत्यभामाजी कुछ मन ही मन सोच समझ इतना कह अनमनी हो रहीं कि महाराज! मेरा पुत्र आपका सुत हुआ तुम उसे क्यों कर मारोगे? प्रभुने उस बात को टाल कहा कि, उसके मारने की तो मुझे कुछ चिन्ता नहीं पर एक समय मैंने तुझे वचन दिया था तिसे पूरा किया चाहता हूँ सत्यभामा बोली सो क्या? प्रभु कहने लगे कि एक समय नारदजी ने आय मुझे कल्पवृक्ष का फूल दिया वह ले मैंने रुक्मिणी को भेजा यह बात सुन तू रिसाय रही, तब

यह प्रतिज्ञा करी की तू उदास मत हो, मैं तुझे कल्पवृक्ष लादूंगा सो अपना बचन प्रतिपालने को और तुझे स्वर्ग दिखाने को साथ ले चलता हूँ इतनी बात सुनते ही सत्यभामाजी अति प्रसन्न हो हरि के साथ चलने को उपस्थित हुई तब प्रभु उसे गरुड़ पर अपने पीछे बैठाय साथ ले चले कितनी एक दूर जाय श्रीकृष्णचन्द्रजीने सत्यभामासे पूछा कि सत्य कह सुन्दरी इस बात को सुन तू पहले क्या समझ अप्रसन्न हुई थी उसका भेद मुझे समझाय के कह जो मेरे मन का संदेह जाय, सत्यभामा बोली महाराज! तुम भौमासुर को मार सोलह सहस्र एक सौ राजकन्या लावोगे तिनमें मुझे भी गिनोगे, यह समझ अनमनी हुई थी श्रीकृष्ण बोले कि तू किसी बात की चिन्ता मतकर मैं कल्पवृक्ष लाय तेरे घर रक्खूंगा और तू उसके साथ मुझे नारदमुनि को दान कीजो फिर मोल ले मुझे अपने पास रखना मैं तेरे सदा आधीन रहूँगा ऐसे ही इन्द्रानी ने इन्द्र को वृक्ष के साथ दान किया था और अदिति ने कश्यपको, इसदानके करने से कोई रानी तेरे सामान मेरे न होगी, महाराज इस भांति की बातें कहते२ श्रीकृष्णजी प्राग्ज्योतिषपुरके निकट जा पहुँचे वहाँ पहाड़ का कोट अग्नि जल पवन की ओट देखते ही प्रभुने गरुड़ सुदर्शन चक्रको आज्ञा दी उन्होंने पलभर में ढाय ढाय बुझाय बहाया अच्छा पंथ बनाय दिया ज्यों हरि आगे बढ़ नगर में जाने लगे त्यों गढ़ के रखवाले दैत्य लड़ने को चढ़ आये, प्रभु ने तिन्हें गदा से सहज ही मार गिराया, उनके मरने का समाचार पाय मुर नाम राक्षस पांचशीश वाला जो इसपुर और गढ़का रखवाला था सो आ क्रोधकर त्रिशूल हाथ में ले श्रीकृष्णजी पर चढ़ा और लगा आंखें लाल लाल कर दाँत पीसकर कहने कि—

मोते बली कौन जग और। वाहि देखिहों मैं यहि ठौर॥

महाराज! इतना कह मुर दैत्य श्रीकृष्णचन्द्र पर यों झपटा कि ज्यों गरुड़ पर सर्प झपटे, आगे उसने त्रिशूल चलाया, सो प्रभु ने चक्र से काट गिराया फिर खिजलाय मुरने जितने शस्त्र हरि पर घाले, तितने प्रभुने

सहज ही काट डाले, पुनि वह हक बकाय दौड़ कर प्रभु से आय लिपटा और मल्ल युद्ध करने लगा कितनी एक बेर युद्ध करते करते श्रीकृष्ण जी ने सत्यभामा को महा भयमान जान सुदर्शन चक्र से उसके पांचों शिर काट डाले, धड़ से शिर गिरते ही धमक्का सुन भौमासुर बोला कि, यह अति शब्द काहे का हुआ इस बीच किसी ने जाके सुनाया कि महाराज श्रीकृष्ण ने आय सुर दैत्य को मार डाला इतनी बातके सुनते ही प्रथम तो भौमासुर ने अपने सेनापति को युद्ध करने को आयुस दिया वह सब कटक साज लड़ने को गढ़के द्वार पर जा उपस्थित हुआ और उसके पीछे अपने पिता का मरना सुन मुरके सात बेटे जो अति बलवान और योद्धा थे सो अनेक प्रकार के अस्त्रशस्त्र धारण कर श्रीकृष्णजी से लड़ने को सन्मुख जा खड़े हुए, पीछे से भौमासुर ने अपने सेनापति और मुर के बेटों से कहला भेजा कि तुम सावधानी से युद्ध करो मैं अभी आता हूँ लड़ने की आज्ञा पाते ही सब असुर दल साथ ले मुर के बेटों समेत भौमासुर का सेनापति श्रीकृष्ण से युद्ध करने को चढ़ आया, और एकाएकी प्रभुके चारों ओर सब कटक दल बादल सा जाय छाया, सब ओर से अनेक२ प्रकार के अस्त्र शस्त्र भौमासुर के शूर श्री कृष्णचन्द्र पर चलाते और सहज स्वभाव ही काट२ कर ढेर करते जाते थे निदान हरि ने सत्यभामा जी को महा भयातुर देख असुर दल को मुर के सातों बेटों समेत सुदर्शन चक्रसे बात की बातमें यों काट गिराया जैसे कोई ज्वार की खेती को काट गिरावे।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! श्रीकृष्णजी ने मुर के बेटों समेत सब सेना काट डाली, यह सुन पहले तो भौमासुर अति चिन्ताकर महा घबराया, पीछे कुछ सोच समझ धीरज धर कितने एक महाबली राक्षसों को अपने साथ ले लाल२ आँख क्रोध से किये कस कर फेंट बांध, शर साध, बकता झकता श्रीकृष्णजी से लड़ने को आय उपस्थित हुआ ज्यों भौमासुर ने प्रभुको देखा त्यों उसने एक बार

आय रिसाय मूठके बाणचलाये सो हरिने तीन२टुकड़े काट गिरायेउसकाल—

काढ़ि खड्ग भौमासुर लियो । कोपि हँकारि कृष्ण उर दियो ॥
करै शब्द अति मेघ समान । अरे गँवार न पावे जान ॥
कर कस वचन तहाँ उच्चरे । महा युद्ध भौमासुर करै ॥

महाराज ! वह तो अति बलकर इन पर गदा चलाता था और श्री कृष्णजी के शरीर में उसकी चोट यों लगती थी ज्यों हाथी के अग में फूल छड़ी आगे वह अनेक २ अस्त्र शस्त्र ले प्रभु से लड़ा और श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सब काट डाले तब वह फिर घर जाय एक त्रिशूल ले आया और युद्ध करनेको उपस्थित हुआ।

तब सतिभामा टेर सुनाई । अब क्यों नहीं हतो यदुराई ।
बचन सुनत प्रभु चक्र संभारयो । काट शीश भौमासुर मारयो ॥
कुंडल मुकुट सहित शिर परो । धरती गिरत शेष थर थरो ।
तिहूं लोक में आनन्द भयो । शोच दुःख सबही को गयो ॥
तासु ज्योति हरि देह समानी । जय जय शब्द करें सुरज्ञानी ॥
खड़े विमान पुष्प बरसावें । वेद बखानि देव यश गावें ।

इतनीकथा कह श्रीशुकदेवमुनि बोले कि महाराज भौमासुर की स्त्री पुत्र समेत आय प्रभु के सन्मुख हाथ जोड़ शिर नवाय अति विनती कर कहने लगी,हे ज्योतिरूप ब्रह्मरूप भक्त हितकारी बिहारी। तुम साधु संत के हेतु धरते वेष अनन्त तुम्हारी महिमा लीला माया है अपरम्पार तिसे कौन जाने किसे इतनी सामर्थ्य जो बिना कृपा तुम्हारी उसे बखाने तुम सब देवों के हो देव कोई नहीं जानता तुम्हारा भेव, महाराज ऐसे कह छत्र कुण्डल पृथ्वी प्रभु के आगेधर फेर बोली हे दीनानाथ। दीनबन्धु कृपासिन्धु यह भगदत्त भौमासुर का बेटा आपकी शरण आया है अब करुणा कर अपना कमल सा कर इसके शिर पर दीजै और अपने भय से इसे निर्भय कीजै इतनी बात के सुनते ही करुणा निधान श्री कान्ह ने करुणा कर भगदत्त के शीश पर हाथ धरा और अपने डर से उसे निडर किया तब भौमावती भौमासुर की स्त्री बहुत सी भेंट हरि के आगे धर अति विनती कर हाथ जोड़ शिर नवाय खड़ी हो बोली हे दीनदयालु। कृपालु ! जैसे

आपने दर्शन दे हम सबको कृतार्थ किया, तैसे अब चलकर मेरा घर पवित्र कीजै इस बात के सुनते ही अन्तर्यामी भक्त हितकारी श्री मुरारी भौमासुर के घर पधारे उस काल वे दोनों माँ बेटा हरि को पाटम्बर के पाँवड़े डाल घर में ले जाय सिंहासन पर विठाय अर्घ्य दे चरणामृत ले अति दीनता कर बोले, हे त्रिलोकी नाथ आपने भला किया जो इस महा असुर का बध किया, हरि से विरोध कर किसने संसार में सुख पाया रावण कुम्भकरण, कंसादिक ने बैरकर अपना जी गंवाया, और जिसने आपसे द्रोह किया, तिस तिसका जगत में नाम लेवा पानी देवा कोई न रहा इतना कह फिर भौमावती बोली हे नाथ! अब आप मेरी विनती मान भगदत्त को निज सेवक जान जो सोलह सहस्र, एक सौ राजकन्या इसके बाप ने अनब्याही रोकरक्खी हैं सो अङ्गीकार कीजै, महाराज! यों कह उसने सब राजकन्याओं को निकाल प्रभु के सो हीं पाँति की पांति लाखड़ी कीं वे जगत उजागर रूपसागर श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द को देखते ही मोहित हो अति गिड़गिड़ाय हा हा खाय हाथ जोड़ बोलीं, नाथ! जैसे आपने आय हम अबलाओं को इस महा दुष्ट की बन्द से निकाला, तैसे अब कृपा कर हम दासियों को साथ ले चलिये, और निज सेवा में रखिये, तो भला, यह बात सुन श्रीकृष्णचन्द्रजीने उनसे इतना कहा कि, हम तुम्हारे को साथ ले चलने को रथ पालकियां मँगवाते हैं, यह कह भगदत्त की ओर देखा, भगदत्त प्रभु के मन का कारण समझ अपनी राजधानी में जाय हाथी घोड़े सजवाय घुड़बहल और रथ झम झमाते जगमगाते जुतबाय सुखपाल, पालकी नालकी, डोली, चंडोल झूल बारे के कसवाय लिवाय लाया हरिउनको देखतेही सब राजकन्याओं को उन पर चढ़ने की आज्ञा दे भगदत्त को साथ ले राजमन्दिर में जाय उसे राजगद्दी पर बिठाय राजतिलक निज हाथ से दे आप जिसकाल सब राज कन्याओं को साथले वहांसे द्वारिका को चले, तिस समय की शोभा वर्णी नहीं जाती कि हाथी बैलों की गङ्गा यमुनी, झूलों की चमक और

घोड़ों पाखड़ों की दमक और सुखपाल पालकी नालकी डोली चंडोल रथ घुड़बहलों के घटा टोपों की आब और उनकी मोतियोंकी झालरोंकी ज्योति से मिल एकसी जगमगाय रही थी, आगे श्रीकृष्णचन्द्र सब कन्याओं को लिये कितने एक दिनों में चलेर द्वारिका पुरी जाय राज-कन्याओं को मन्दिर में रख राजा उग्रसेन के पास गये प्रणामकर पहले तो श्रीकृष्णचन्द्रजी ने भौमासुरको मारने और राज कन्याओं को छुड़ाय लाने का भेद कह सुनाया फिर राजा उग्रसेन से बिदा होय प्रभु सत्यभामा को साथ ले छत्र कुंडल लिये गरुड़ पर बैठ स्वर्गको गये तहां पहुँचते ही—

कुंडल दिये अदिति को ईश । छत्र धरयो सुरपति के शीश ॥

यह समाचार पाय वहाँ नारद आये तिनसे हरिने कह सुनाया कि जाय इन्द्रसे कहो कि सत्यभामा तुमसे कल्पवृक्ष माँगती है. देखो वह क्या कहता है इस बातका उत्तर मुझे लादो, पीछे समझा जायगा, महाराज इतनी बात श्रीकृष्णजीके मुखसे सुन नारदजीने सुरपति से जाय कहा कि सत्यभामा तुम्हारी भौजाई तुमसे कल्पतरु मांगती है तुम क्या कहते हो सो कहो ? मैं उन्हें जाय सुनाऊं । इन्द्र इस बातके सुनतेही पहले तो हकबकाय कुछ सोचता रहा पीछे उसने नारदमुनि का कहा सब इन्द्राणीसे जाय कहा ।

इन्द्रानी सुन कहै रिसाय । सुरपति तेरी कुमति न जाय ॥
तू हैं बड़ो मूढ़ मति अन्धु । को है कृष्ण कौन को बन्धु ॥

तुझे वह सुध है कि नहीं जो उसने ब्रजमें पूजा मेट ब्रजावसियों से गिरि पुजवाय छलकर तेरी पूजाका सब पकवान आप खाय फिर सात दिन तुझे गिरि पर वर्षवाय उसने तेरा गर्व गँवा सब जगतमें निरादर किया इस बातकी कुछ तेरेताईं लाजहै कि नहीं ? वह अपनी स्त्रीकी बात मानताहै तू मेरा कहा क्यों नहीं सुनता ? महाराज! जब इन्द्राणी ने इन्द्र से यों कह सुनाया तब वह अपना सा मुंह ले उलटा नारद जी के पास आया और बोला हे ऋषिराज ! तुम मेरी ओर से जाय श्रीकृष्णचंद्र से कहोकि कल्प वृक्ष नंदन बन तज अंत न जायगा और जायगा तो वहाँ किसी भाँति न

रहेगा, इतनाकह फिर समझाय के कहियो, कि आगे किसीभाँति अब यहाँ हमसे बिगाड़ न करें जैसे ब्रजमें ब्रजवासियों को बहकाय गिरि का मिसकर सब हमारी पूजाकी सामिग्री खायगये, नहीं तो महायुद्ध होगा।

यह बात सुन नारदजी ने आय श्रीकृष्णचन्द्रजी से इन्द्र की बात कही, कह सुनाय के बोले हे महाराज! कल्पतरु इन्द्र तो देता था, पर इन्द्राणीने न देने दिया,इस बात के सुनतेही श्रीकृष्ण मुरारी गर्व प्रहारीने नन्दन बन में जाय रखवालों को मार भगाया और कल्पवृक्ष को उखाड़ गरुड़ पर धर ले आये उसकाल वे रखवाले जो प्रभुकी मार खाय भागे थे, इन्द्र के पास जाय पुकारे तब कल्पतरु के ले जाने के समाचार पाय, महाराज! राजा इन्द्र अति कोपकर बज्र हाथ में ले सब देवताओंको बुलाय ऐरावत हाथीपर चढ़ श्रीकृष्णचन्द्रजीसे युद्ध करने को उपस्थित हुआ फिर नारद मुनि ने जाय इन्द्र से कहा, महाराज! तुम महा मूर्ख हो जो स्त्री के कहे से भगवानसे लड़ने को उपस्थित हुए ऐसी बात करते तुझे लाज नहीं आती, जो तुझे लड़ना ही था तो जब भौमासुर तेरा छत्र और अदिति के कुंडल छिनाय ले गया, तब क्यों न लड़ा अब प्रभुने भौमासुरको मार कुंडल और छत्र ला दिया, तो उन्हींसे लड़ने लगा जो तू ऐसा ही बलवान था तो भौमासुर से क्यों न लड़ा! तू वह दिन भूल गया जो ब्रज में जाय प्रभुकी अति दीनता कर अपना अपराध क्षमा कराय आया फिर उन्हीं से लड़ने चला है महाराज! नारदजी के मुखसे इतनी बात सुनते ही राजाइन्द्र जो युद्ध करने को उपस्थित हुआ था, सो पछिताय२ लज्जित हो मन मार रह गया आगे श्रीकृष्णचन्द्र द्वारिका पधारे, तब हर्षित भये देख हरि को यादव सारे, प्रभुने सत्यभामा के मन्दिरमें कल्प वृक्ष ले जाय के रक्खा और राजा उग्रसेन ने सोलह सहस्र एकसौ जो कन्या अन ब्याही लाये थे सो सब वेद की रीति से श्रीकृष्णचन्द्र को ब्याह दीं।

भयो वेद विधि मंगलचार। ऐसे हरि विहरत संसार॥

सोलह सहस एकसौ गेह। रहत कृष्णाकर परम सनेह॥
पटरानी आठों जे गिनी। प्रीति निरन्तर तिनसों घनी॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोलेकि हेराजा हरिने ऐसे भौमासुर का बध किया और इन्द्र का छत्र ला दिया फिर सोलह सहस्रएकसौ आठ विवाह कर श्रीकृष्णचन्द्र द्वारिकापुरीमेंआनन्दसे सबको ले लीला करनेलगे।

अध्याय ६१

(रुक्मिणी मानलला

श्रीशुकदेवजी बोलेकि, महाराज ! एकसमय मणिमयकञ्चनके मन्दिर में कुन्दन का जड़ाऊ छपरखट बिछा था, तिसपर फेन से बिछौने फूलों से सँवारे कपाल कड़ुआ और आरसीयुक्त सुगन्धसे महक रहे थे, कपूर गुलाब नीर चोबा चंदन अरगजा सेजके चारोंओर पात्रोंमेंभराधराथा अनेक२प्रकार के बिचित्र चित्र चारों ओर भीतोंपर खिंचे हुए थे आलोंमें जहाँ तहाँ फूल पकवान पाक धरेथे और सब सुखका सामान जोचाहिए सोउपस्थितथा भूल बारेको घांघरा घूमनुमाला तिसपर सच्चेमोती टके हुए चमचमाती अंगिया झलझलाती सारी, और जगमगाती ओढ़नी पहने ओढ़े नखशिखसे शृंगार किये रोरी की आड़दिये बड़े२ मोतियों की नथ, शीशफूल कर्णफूल माँग, टीका ठेंटीबेंदी चन्द्रहार मोहनमाला धुकधुकी, पँचलड़ी, सतलड़ी मुक्तमाला दुहरे तिहरे नौरतन और भुजबन्द कंकन, पहुँची, नौगरी, चुड़ाछल्ले,

किंकिणी अनवट बिछुए, जेहर तेहर आदि सब आभूषण रत्न जटित पहने चन्द्रबदनी चम्पक वर्णी मृगनयनी पिकबयनी गजगामिनी कटिकेहरि श्री रुक्मिणी, और मेघ वरण चन्द्रबदन,कमलनयन. मोरमुकुट दिये बनमाल हिये, पीताम्बर पहरे, पीतपट ओढ़े रूप सागर; त्रिभुवन उजागर श्रीकृष्ण चन्द्रआनन्दकन्द तहाँ बिराजतेथे और आपसमें सुख लेतेदेतेथे,कि एकाएकी लेटे२ श्रीकृष्णजीने रुक्मिणीजीसे कहाकि सुनसुन्दरी एकबात मैं तुमसे पूछताहूँ तू तो महासुन्दरी सबगुणयुक्त और राजाभीष्मककी कन्या और महा बली प्रतापी राजा शिशुपाल चन्देरीका राजा ऐसाकी जिसके घर सातपीढ़ीसे राज्य चलाआताहै और हम उसके त्राससे भागे२ फिरतेहैं, मथुरातज समुद्रमें आय बसेहैं ऐसेराजाको तुम्हें तुम्हारे माता पिता भाई देतेथे,और बरातले ब्याहनकोभी आचुकाथा तिसे न वर तुमने कुलकीमर्यादा छोड़ संसारकीलाज और मातापिता और बन्धुकी शंका तज हमें ब्राह्मणके हाथ बुलाय भेजा।

तुम्हरे योग न हम परवीन। भूपति नहीं रूपगुण हीन ॥
काहू याचक कीरति करी। सो तुम सुनके मनमें धरी ॥
कटक साज नृप ब्याहन आयो। तबतुम हमको बोलपठायो ॥
आय उपाधि बनी तहं भारी। क्यों हूँके पति रही हमारी ॥
तिनके देखत तुमको लाये। दल हलधर उनके बिच लाये ॥
तुम लिख भेजीही यह बानी। शिशुपालते छुड़ावहु आनी ॥
सो प्रतिज्ञा रही तिहारी। कछू न इच्छा हती हमारी ॥
अजहूँ कछू न गयो तिहारो। सुन्दरि मानहुं वचन हमारो ॥

कि जोकोई भूपति कुलीन तुम्हारेयोग्य होय तुमतिसके पास जाय रहियो, यहबात सुन रुक्मिणीजी भय चकितहो पछाड़ खाय भूमिपर गिरीं और जल बिन मीनकी भाँति तड़फाय अचेतहो लगीं ऊर्ध्वश्वास लेने तिसकाल—

दो०-इह छबि मुख अलकावली,रही लपट एक सङ्ग। मानहु शशि भूतल परो,पीवत अमी भुजङ्ग ॥

यह चरित्रदेख इतनाकह श्रीकृष्णचन्द्र घबराय उठेकि यहतो अभी प्राण तजतीहै, तब चतुर्भुजहो उसकेपासजाय लगे दोहाथसे अलक संवार ने, महाराज। उसकाल नन्दलाल प्रेमवश हो अनेक२ चेष्टा करने लगे

कभीपीताम्बरसेप्यारीका चन्द्रमुख पोंछतेथे कभी कोमल कमल सा अपनाहाथ उसके हृदयपररखतेथे कितनीएकदेरमें रुक्मिणीके जीमें जीआया तबहरिबोले

तू है सुन्दरि प्रेम गंभीर। तें मन कछू न राखी धीर ॥
तें मन जान्यो सांचे छांड़ी। हमने हंसी प्रेम की मांड़ी ॥
अब तू सुन्दरि देह संभार। प्राण राखि अरु नयन उघार ॥
जोलों तू बोलत नहिं प्यारी। तौलों हम दुख पावत भारी ॥
चेती बचन सुनत प्रियबानी। चितवई वारि नयन उच्चारी ॥
देखी कृष्ण गोद में लीये। भई आज अति सकुची हिये ॥
हरबराय उठि ठाढ़ी भई। हाथ जोर पायन परि रही ॥
बोले कृष्ण पीठ कर देत। भली मिली जू प्रेम अचेत ॥

हमने हाँसीठानी, जो तुमने सांचीहीजानी, हँसीकीबातमें क्रोध करना उचित नहीं उठो अब क्रोध दूरकरो यहसुन रुक्मिणीजी हाथजोड़ कहने लगीकि नाथ आपने जोकहाकि हम तुम्हारे योग्यनहीं सो सचकही क्योंकि तुम लक्ष्मीपति शिवबिरंचिकेईश आपकी समताका त्रिलोकीमें कौनहै हेजगदीश आपको छोड़ जो जन औरको ध्यावें सो ऐसे हैं जैसेकि कोई हरि यश छोड़ गृध्रगुण गावें नाथ! आपने जोकहाकि तुम किसी महाबली राजाको देखो सो आपसे अतिबली और बड़ा राजा त्रिभुवनमें कोहै सोकहो! ब्रह्मा रुद्रइन्द्रादिक सब देवता वरदाई आपकीआश कर रहे हैं, आपकी कृपासे वे जिसे चाहते हैं तिसे महाबली प्रतापी,यशी तेजस्वी वरदे बनाते हैं और जो लोग आपकी सैकड़ों वर्ष अतिकठिनतपस्या करतेहैंसो राजपदपातेहैं फिर आपका भजन ध्यान जप तप भूल नीति छोड़ अनीति करते हैं तबवे आपसे आपही अपना सर्वस्व खोय भ्रष्टहोते हैं कृपानाथ! आपकी तो सदाकी यह रीति है कि अपने भक्तोंकेलिये संसारमें आय बारम्बार अवतार लेते हैं और दुष्ट राक्षसोंको मार पृथ्वीकाभार उतार निजजनोंको सुखदे कृतार्थ करतेहो और नाथ जिसपर आपकी बड़ीदया होतीहै वहधन राज यौवन रूप प्रभुता पाय जब अभिमानसेअन्धा और धर्म कर्म तप,सत्य,दया,पूजा,भजनभूलताहै तब आप उसे दरिद्री बनाते हो, क्योंकि दरिद्री सदाही आपका ध्यान

स्मरण किया करताहै इसीसे आप दरिद्री बनाते हो जिसपर आपकी बड़ीकृपा होगी सो सदा निर्धन रहेगा. इतनीकह फिर रुक्मिणीजी बोलींकि हेप्राणनाथ जैसा काशीपुरीके राजाइन्द्रद्युम्नकी बेटी अम्बाने किया वैसा मैंनकरूंगी कि वह पतिछोड़ राजाभीष्मकके पासगई और जबउसने इसेनरक्खा तबफिर अपने पतिकेपास आई पुनि पतिने उसेनिकालदिया, तबउसने गङ्गातीरमें महादेव बड़ातप किया तहाँ भोलानाथने आय मुहमांगा वर दिया उस वरके बलसे जाय राजा भीष्मकसे अपना पलटा लिया सो मुझसे न होगा।

अरु तुम नाथ यही समुझाई। काहू याचक करी बड़ाई॥
वाको वचन मान तुम लीयो। हम पर विप्र पठै के दीयो॥
याचक शिव विरंचि शारदा। नारद गुण गावत सर्वदा॥
विप्र पठाये जानि दयाल। आय कियो दुष्टन को काल॥
दीन जानि दासी संग लई। तुम मोहि नाथ बड़ाई दई॥
यह सुनि कृष्ण कहत सुनि प्यारी। ज्ञान ध्यान गति लई हमारी॥
सेवा भजन प्रेम ते जान्यौ। तोही सों मेरो मन मान्यौ॥

महाराज! प्रभुके मुखसे इतनी बात सुन सन्तुष्ट हो रुक्मिणीजी हरिकी सेवा करने लगीं।

अध्याय ६२ (प्रद्युम्न विवाह)

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! सोलह सहस्त्र एकसौ आठ स्त्रियोंकी

ले श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द से द्वारिकापुरी में विहार करने लगे, और आठों पटरानियाँ आठों पहर हरिकी सेवा में रहें नितउठ भोरही कोई मुख धुलावै कोई उबटन लगाय नहलावै, कोई षटरस भोजन बनाय जिमावै कोई अच्छे पान लौंग इलायची जावित्री जायफल समेत पियाको बनाय खिलावै कोई सुंदर वस्त्र और रत्न जटित आभूषण चुनवाय और बनाय प्रभुको पहनातीथी, कोई फूल माला पहनाय गुलाबजल छिड़क केशर चन्दन चरचतीथी कोई पंखा ढोलतीथी. और कोई पांव यो इसी भांति सब रानियाँ अनेक२ प्रकार से प्रभुकी सदा सेवा करें और हरि हर भाँति उन्हें सुखदें.इतनीकथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज कई वर्ष के बीच—

दो०-एक एक यदुनाथकी नारिन जाये पुत्र।
एक,एक कन्या लक्ष्मी दश दश पुत्र सुपुत्र॥
एक लाख इकसठ सहस भये बाल इक सार।
भये कृष्णके पुत्र ये गुण बल रूप अपार॥

सब मेघवर्ण चन्द्रमुख कमलनयन, नीले पीले झंगुले पहने गण्डेकठले ताइत गलेमें डाल घर२ बाल चरित्रकर मातापिताको सुखदें, और उनकी मायें अनेक भाँतिसे लाड़ प्यारकर प्रतिपाल करें महाराज श्रीकृष्णचन्द्रजीके पुत्रोंका होना सुन रुक्मने अपनी स्त्री से कहाकि अबमैं अपनी कन्या चारुमती जो कृतवर्मा ने माँगीहै उसे न दूंगा स्वयम्वर करूंगा तुम किसी को भेज मेरी बहन रुक्मिणी को पुत्रसमेत बुलाय भेजो इतनी बातके सुनतेही रुक्मकी नारीने अतिविनती कर ननदको पत्रलिख पुत्रसमेत एक ब्राह्मण के हाथ बुलवाया और स्वयम्वर किया, भाई भौजाई की चिट्ठी पातेही रुक्मिणीजी श्रीकृष्णजीसे आज्ञाले बिदाहो पुत्रके सहित चली द्वारिकासे भोजकटमें भाईके घर पहुँचीं।

देखि रुक्म ने अति सुख पाय। आदर कर नींचौ शिर नायौ॥
पायन पर बोली भौजाई। हरख भयौ तब से अब आई॥

यहकह फिर उसने रुक्मिणीजीसे कहाकि ननद जो आप आईहो तो हम पर बड़ी दया मया कीजै और चारुमती कन्याको अपने पुत्रके लिये

लीज इसबातके सुनतेही रुक्मिणीजी बोलीं कि भौजाई तुम पतिकी गति जानती हो मत किसीसे कलह करवाओ.भैयाकी बात कुछ कही नहींजाती क्या जानिये किससमय क्या करे इससे कोई बात कहते करते भय लगताहै रुक्म बोलाकि बहन अब तुम किसी भाँति न डरो कुछ उपाधि न होगी वेद की आज्ञाहै कि,दक्षिण देशमें कन्यादान भानजे को दीजै इस कारण मैं अपनी पुत्री चारुमती आपके पुत्र प्रद्युम्नको दूंगा, अरु श्रीकृष्णजीसे वैर भाव छोड़ नया सम्बन्धकरूंगा, महाराज इतनी कह जब रुक्म वहांसे उठ सभामें गया तब प्रद्युम्नजी मातासे आज्ञा ले बन ठन कर स्वयंवर के बीच में गये तो क्या देखते हैं कि देश२ के नरेश भांति भांति के वस्त्र आभूषण पहने शस्त्र बांधे बनाव किये विवाहकी अभिलाषा हिये में लिये सब खड़े हैं और वह कन्या जयमाल करमें लिये चारों ओरमें दृष्टि किये बीच में फिरती है पर किसीपर दृष्टि उस की नहीं ठहरती इस में ज्यों प्रद्युम्नजी स्वयम्वरके बीच में गये, त्यों देखतेही उस कन्याने मोहितहो आ.इनके गले में जयमाल डाली सब राजा अछताय पछताय अपना सा मुँह ले.देखते खड़े रह गये, और अपने मनहीमन कहनेलगेकि भलादेखें हमारे.आगेसे इन कन्याको कैसे लेजायगा, हम बाटहीमें छीन लेंगे महाराज सब राजातो यों कह रहेथे और रुक्मने वर कन्या को मांढ़ेके नीचे लेजाय वेद की विधि से संकल्पकर कन्यादान किया और उसके यौतुकमें बहुतही धन द्रव्य दियाकि जिसका पारावार नहीं, आगे श्रीरुक्मिणीजी पुत्रको व्याह भाई भौजाई से बिदाहो बेटे बहूको ले रथपर चढ़ जो द्वारिकापुरीको चलीं तो सब राजाओं ने आय मार्ग रोका इसलिएकि प्रद्युम्नसे लड़ कन्या को छीन लें उनकी यहकुमतिदेख प्रद्युम्नजीभी अपनेअस्त्रशस्त्रले युद्धकरनेको उपस्थित हुए कितनीही एकबेरतक इनसेउनसे युद्ध होतारहा निदान प्रद्युम्न जीने उनसबको मार भगाया आनन्द मङ्गलसे द्वारिकापुरी में पहुँचे इनके पहुँचनेका समाचार पाय सब कुटुम्बके लोग क्या स्त्री क्या पुरुष पुरी के बाहर आय रीति भाँति कर पाटम्बर के पाँवड़े डालते बाजे गाजे से इन्हें ले

गये,सारे नगरमें मङ्गलाचार हुआ ये राज मन्दिरमें सुखसे रहने लगे।

इतनी कथा सुनाय शुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! कई वर्ष पीछे आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्रके पुत्र प्रद्युम्नजीके पुत्र हुआ उस काल श्रीकृष्णचन्द्रजीने ज्योतिषियों को बुलाय सब कुटुम्ब के लोगों को बैठाय मङ्गलाचार करवाय शास्त्रकी रीतिसे नाम करण किया ज्योतिषियोंने पत्रा देख वर्ष, मास, दिन, तिथि, घड़ी, लग्न, नक्षत्र, ठहराय उस लड़के का नाम अनिरुद्ध रक्खा उसकाल—

फूले अङ्ग न समांय,दीन दक्षिणा द्विजन को। देतन कृष्ण अघाँय,पुत्र भयो प्रद्युम्नके॥

महाराज! नातीके होनेका समाचार पाय पहलेतो रुक्मने बहन बहनोई को अति हित कर यह पत्रोंमें लिख भेजी कि तुम्हारे पोते से हमारी पोतीका ब्याह होय तो है और पीछे एक ब्राह्मण को बुलाय रोरी, अक्षत रुपया नारियलदे उसे समझायके कहाकि द्वारिकापुरीमें जाय हमारी ओरसे अति विनती कर श्रीकृष्णका पुत्र अनिरुद्ध जो हमारा दोहता है तिसे टीका दे आओ बातके सुनतेही ब्राह्मण टीका और लग्न साथले चला२ श्रीकृष्णचन्द्रके पास द्वारिकापुरी में गया उसे देख प्रभुने अति मान आदरसे पूछा कि कहो देवता आपका आना कहाँसे हुआ ब्राह्मण बोला महाराज मैं राजा भीष्मक के पुत्र रुक्मका पठायाहूँ उनकी पौत्री और आपकेपौत्रसे सम्बन्ध करनेको टीका और लग्न ले आयाहूँ इस बातके सुनतेही श्रीकृष्णजीने दश भाइयों को बुलाय टीका और लग्नले उस विप्रको बहुत कुछदे बिदा किया और आप बलरामजी के निकट जाय चलने का विचार करने लगे, निदान वे दोनों भाई वहाँसे उठ राजा उग्रसेनके पासआय सब समाचार सुनाय उनसे बिदाहो बाहर आय बरातका सब सामान मंगवाय इकट्ठी करवानेलगे कई एक दिनोंमें जब सब सामान इकट्ठा होचुका तब बड़ी धूम धामसे प्रभु बरात ले द्वारिका से भोजकटनगरको चले उसकाल एक झमझमाते रथपर तो रुक्मिणीजी पुत्र पौत्रको ले बैठी जातींथीं और एक रथपर श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम बैठे जाते थे निदान कितनेएक दिनोंमें सब समेत प्रभु वहाँ पहुँचे

महाराज बरातके पहुँचतेही रुक्म कालिंगादि सब देश२के राजाओंको साथले नगरके बाहर जाय आगौनी कर सबको बागे पहराय अति आदर मानकर जनवासे में लिवाय लाया आगे सबको खिलाय पिलाय मांढ़े के नीचे लिवाय ले गया और उसने वेदकी रीति से कन्यादान किया, उसके यौतुक में जो दानदिया उसको मैं कहाँतक कहूँ अकथहै इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले महाराज ब्याह के हो चुकतेही राजा भीष्मकने जनवासे में जाय हाथ जोड़ अति विनती कर श्रीकृष्णजीसे चुपके२ कहा महाराज विवाह हो चुका रस रहा, अब आप शीघ्र चलने का विचार कीजै क्योंकि,

भूप सङ्ग जे रुक्म बुलाये। ते सब दुष्ट उपाधी आये॥
मति काहू सों उपजे रारि। याही ते हों कहत मुरारि॥

इतनीबातकह जो राजाभीष्मकगये, त्योंहीं रुक्मिणीजीके निकट रुक्म आया

दो०—कहति रुक्मिणी टेर कर,किम घर पहुँचें जाय। वैरी भूपति पाहुने,जुरे तिहारे आय॥
जो तुम भैया चाहौ भलो। हमहिं वेग पहुँचावन चलौ॥

नहींतो रसमें अनरस होता दीखताहै, यह वचन सुन रुक्म बोला कि बहन तुम किसी बातकी चिंता मत करो, मैं पहले जो राजा देश२ के पाहुने आये हैं तिन्हें बिदाकर आऊं पीछे जो तुम कहोगी सो करूंगा इतना कह रुक्म यहां से उठ जो राजा, पाहुने आयेथे उनके पास गया वे सब मिलके कहने लगे कि रुक्म तुमने कृष्ण बलदेव को इतना धन द्रव्य दिया और उन्होंने मारे अभिमान के कुछ भला न माना, एक तौ हमें इस का पछितावा है, और दूसरी उस बातकी कसक हमारे मनसे नहीं जाती कि जो बलराम ने तुम्हें अभरन किया था महाराज इस बात के सुनते ही रुक्म को क्रोध हुआ तब राजा कलिंग बोला कि, एक बात मेरे जी में आई है कहो कहूँ! रुक्मने कहा कहो, फिर उसने कहा कि हमें श्रीकृष्ण से कुछ काम नहीं पर बलराम को बुलादो तो हम उससे चौपड़ खेल सब धन जीत लें और जैसा उसे अभिमानहै तैसा यहाँ से रीते हाथ बिदा करें ज्यों कलिंग ने यह बात कही त्योंही रुक्म वहाँ से उठ कुछ सोच विचार

कर बलरामजी के निकट जा बोला कि महाराज आपको सब राजाओं ने प्रणाम कर चौपड़ खेलने को बुलाया है।

सुनि बलभद्र सबहि तहं आये। भूपति उठि के शीश नवाये॥

आगे सब, राजा बलरामजी का शिष्टाचार कर बोले कि आपको चौपड़ खेलने का अभ्यास है, इसलिये हम आपके साथ खेला चाहते हैं इतना कह उन्होंने चौपड़ मंगवाय बिछाई और रुक्म से और बलराम जी से होने लगी, पहले रुक्म दश बेर जीता तो बलरामजीसे कहने लगा कि धन तो सब जीता अब काहे से खेलो इसमें राजा कलिंग बड़ी बात कह हंसा, यह चरित्र देख बलदेवजी नीचा शिर कर सोच विचार करने लगे तब रुक्मने दशकरोड़ रुपये एकबार लगाये सो बलरामजी नेजो जीत के, उठाये तो सब धांधलीकर बोलेकि यहां रुक्म का पासा पड़ा तुम क्यों रुपये समेटते हो।

सुनि बलराम फेरि सब दीने। दाव लगायौ पीछे लीन्हे।

फिर हलधर जीते और रुक्म हारा, उस समय भी रोंमटी कर सब राजाओं ने रुक्म जिताया और यों कह सुनाया—

जुआ खेल पांसे की सार। यह तुम जानो कहा गंवार॥
जुआ युद्ध गति भूपति जाने। ग्वाल गोप गैयन पहिचाने॥

इस बातके सुनते ही बलदेवजी को क्रोध यों बढ़ाकि जैसे पूनों को समुद्र की तरंग बढ़े निदान ज्यों त्योंकर बलरामजी ने क्रोध को रोक मन को समझाय फिर सात अर्ब रुपये लगाये और चौपड़ खेलने लगे फिर भी बलदेवजी जीते और सबों ने कपट कर रुक्म ही को जीता कहा इस अनीति के होते ही आकाश से यह वाणी हुई कि हलधर जीते और रुक्म हारा अरे राजाओ तुमने क्यों झूंठ वचन उचारा। महाराज जब रुक्म समेत सब राजाओं ने आकाश वाणी सुनी अनसुनी की, तब तो बलदेवजी महा क्रोध में आय, बोले—

करी सगाई बैर न छांडयौ। हमसे फेरिकलह तुम मांडयौ॥
मारों तोहि अरे अन्याई। भलो बुरो मानहु भौजाई॥
अब काहु की कानि न करिहों। आज प्राण कपटीं के हरिहों॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहाकि महाराज ! निदान बलरामजी ने सब के देखतेर रुक्म को मारडाला और कलिंग को पछाड़ मारे घूसों से उसके दांत उखाड़ लिये और कहा कि तू भी मुंह पसार के हंसा था, आगे सब राजाओं को मार भगाय बलरामजी ने जनवासे में श्रीकृष्णचन्द्र के पास आय सब व्यौरा कह सुनाया, बात के सुनतें ही हरि ने सब समेत वहाँ से प्रस्थानकिया और चलेर आनन्द मङ्गलसे द्वारिका में आये इनके आतेही सारे नगर में सुख छागया घरर मङ्गलाचार होने लगा श्रीकृष्णचन्द्र और बलदेवजी ने राजा उग्रसेन के सन्मुख जाय हाथ जोड़ कहा, महाराज ! आपके पुण्य प्रताप से अनिरुद्ध को ब्याह लाये और महादुष्ट रुक्म को मार आये।

अध्याय ६३

ऊषा स्वप्न अनिरुद्ध हरण

श्रीशुकदेवजीबोले कि, महाराज अब जो द्वारिकानाथका बल पाऊं तो ऊषा हरण की कथा सुनाऊं, जैसे उसने रात्रीसमय स्वप्नमें अनिरुद्धजी को देख और आसक्त हो खेदकिया पुनि चित्ररेखाने अनिरुद्धको लायऊषा से मिलाया तैसे मैं सब प्रसंग कहता हूँ तुम मनदे सुनो ब्रह्माके वंशमें पहले कश्यप हुआ तिसका पुत्रहिरण्यकश्यप अति बली और महाप्रतापी और

अमरभया उसका सुत हरिजन प्रभुभक्त प्रह्लाद नाम हुआ उसका बेटा राजा बिरोचन बिरोचनका पुत्र राजाबलि जिसका यशधर्म धरणीमें अब तक छाय रहा है कि प्रभुने वामन अवतारले राजाबलिको छल पाताल पठाया उस बलिकाज्येष्ठपुत्र महापराक्रमी बड़ा तेजस्वी वाणासुर हुआ वह शोणित पुरमें बस, नितकैलाशमें जाय शिवकी पूजाकरै, ब्रह्मचर्य पाले सत्य बोले, जितेन्द्रिय रहै, महाराज एक दिन वाणासुर कैलाश में जाय हरिके प्रेम में आय लगा मग्न हो मृदँग बजाय२ नाचने गाने, उसका गाना बजाना सुन श्रीमहादेव भोलानाथ मग्न होने लगे पार्वतीजी को साथले नाचने और गाने डमरू बजाने निदान नाचते२ शंकर ने अति सुखपाया प्रसन्न हो वाणासुरको निकट बुलाय कहा पुत्र मैं तुझ पर सन्तुष्ट हुआ बरमांग ! जो तू मांगगा सो दूंगा ।

तैंने बाजे भले बजाये । सुनत श्रवण मेरे मन भाये ॥

इतनी बातके सुनतेही महाराज ! वाणासुर हाथजोड़ शिरनाय अतिदीनता कर बोलाकि कृपानाथ ! जोआपने मेरे ऊपर कृपाकी तो पहले अमरकर मुझे पृथ्वीका राज दीजै, पीछे मुझे ऐसाबली कीजै,कि कोईमुझ से न जीतेगा महादेवजी बोले मैंने तुझेयह बरदिया और सब भयसे निर्भय किया त्रिभुवनमें तेरे बलको कोई न पावेगा विधाताकाभी तुझपर वश न चलेगा

बाजे भले बजाय के, दियो परम सुख मोय । मैं हिय अति आनन्द कर, दिये सहस्र भुज तोय ॥

अब तू घर जाय निश्चिन्ताई से बैठ अविचल राज्यकर महाराज ! इतना वचन भोलानाथके मुखसे सुन सहस्र भुजपाय बाणासुर अति प्रसन्न हो परिक्रमा दे शिरनाय बिदाहो आज्ञाले शोणितपुरमें आय आगे त्रिलोकी को जीत सब देवताओं को बशकर नगर में चारों ओर जलकी चुआन चौड़ी खाई और अग्निपवनका कोट बनाय निर्भयहो सुख से राज्यकरनेलगा कितने एक दिन पीछे-

लरवे बिन भई भुज सबल, फरकहिं अति सहराय । कहत बाण कासोंजुरौं, कापर अब चढ़िजाउं ॥

भई खाज लड़वे बिन, भारी । को पुजवे हिय हौंस हमारी ॥

इतना कह बाणासुर घर से बाहर जाय लगा पहाड़ उठाय २ तोड़ तोड़ चूर करके देश देश फिरने जब सब पर्वत फोड़ चुका और उसके हाथों की सुरसुराहट खुजलाहट न गई तब—

कहत बाण अब कासों लरों। इतनी भुजा कहा लै करों
सबल भार मैं कैसे सहौं। बहुरि जायके हरिसों कहौं॥

महाराज ऐसे मनही मन सोच विचारकर बाणासुर महादेवजीके सन्मुख जा हाथ जोड़ शिरनाय बोला कि हेत्रिशूलपाणिनाथ! आपने जो कृपाकर सहस्रभुजा दीं सो मेरे शरीर पर भई इनका बल अब मुझसे संभाला नहीं जाता इसका उपाय कुछ कीजै, कोई महाबली युद्ध करनेको मुझे बता दीजै मैं त्रिभुवन में ऐसा पराक्रमी किसी को नहीं देखता, जो मेरे सन्मुख हो युद्ध करे आप दयाकर जैसे आपने मुझे महाबली किया तैसे कृपाकर मुझसे लड़ मेरे मनकी अभिलाषा पूरी कीजै नहीं तो और किसी अतिबली को बता दीजै तिससे मैं जाकर युद्ध करूं और अपने मन का शोक हरू इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज बाणासुरसे इस भाँति की बातें सुन श्रीमहादेवजीने बिलखाय मनहीं मन इतना कहाकि मैंने तो इसे साधु जानिके वर दिया अब यह मुझसे ही लड़ने को उपस्थित हुआ इसमूर्ख को बलका घमण्ड भया यह जीता न बचेगा जिसने अहंकार किया सो जगत में आय बहुत रोज न जिया ऐसा मनही मन कह महादेवजी बोलेकि बाणासुर तू मत घबराय तुझसे संग्राम करने वाला थोड़े दिन के बीच यदुकुलमें श्रीकृष्णावतार होगा उस बिन त्रिभुवनमें तेरा सामना करनेवाला कोई नहीं यह वचन सुन बाणासुर अति प्रसन्न हो बोलाकि नाथ वह पुरुष कब अवतार लेगा और मैं कैसे जानूंगा कि अब वह उपजा है, राजा शिवजी ने एक ध्वजा बाणासुरको दे कर कहाकि इसको लेजा अपने मन्दिर के ऊपर गाड़दे जब यह ध्वजा आपसेआप टूटकर गिरे तब तू जानियोकि रिपु जन्मा है। महाराज जब शंकरने उससे ऐसे समझाकर कहा तब बाणासुर ध्वजाले निज घरको शिरनाय चला आगे घरजाय ध्वजा मन्दिर पर चढाय नित्य २

यही मानता था कि कब वह पुरुष प्रगटे और मैं उससे युद्ध करूं इसमें कितने एकवर्ष बीते उसकी बड़ीरानी बाणावती तिसके गर्भ रहा और पूरे दिनों में एक लड़की हुई उसकाल बाणासुरने ज्योतिषियोंको बुलायके कहा कि इस लड़की का नाम और गुण गण कर कहो, इतनी बातके सुनते ही ज्योतिषियों ने झट वर्ष मास, पक्ष तिथि, बार, घड़ी, मुहूर्त, नक्षत्रठहराय लग्न विचार उस लड़कीकानाम ऊषा धरके कहाकि महाराज! यह कन्या रूप गुण शीलकी खान महा सुजान होगी इसके ग्रह लक्षण ऐसे ही आन पड़े हैं।

इतना सुन बाणासुरने अतिप्रसन्नहो बहुत कुछ ज्योतिषियोंकोदे बिदा किया पीछे मङ्गला मुखियोंको बुलाय मङ्गला चार करवाये पुनि ज्यों२ वह कन्या बढ़ने लगी त्यों२ बाणासुर उसे अतिप्यार करने लगा अब ऊषा सात वर्ष की भई तब उसके पिताने शोणित पुरके निकटही कैलाशथा तहाँ कई एक सखी सहेलियों के साथ शिवपार्वतीजीके पास पढ़नेको भेजदिया, ऊषा गणेश सरस्वतीको मनाय शिव पार्वतीजीके सन्मुख जाय हाथजोड़ विनती कर बोलीकि हे कृपासिन्धु शिव गौरी दयाकर मुझ दासीको विद्यादानदीजै और जगतमें यश लीजै महाराज, ऊषाके अतिदीनवचन सुन शिवगौरीजी ने उसे प्रसन्नहो विद्याका आरम्भ करवाया वह नित्यप्रति जाय पढ़२ आवै, इसमें कितने एक दिनों केबीच सबशास्त्रपढ़ विद्यागुणवतीहुई और सबयन्त्र बजाने लगी, एकदिन ऊषा पार्वतीजीके साथ मिलकर बीणाबजाय सङ्गीत की रीतिसे गाय रही थी कि शिवजी ने आय पार्वतीजी से कहा हे प्रिये! मैंने जो कामदेव को जलाया था तिसे श्रीकृष्णचन्द्रजीने उपजाया इतना कह श्रीमहादेवजी गिरिजाको साथले गंगातीरमेंजाय नीरमें न्हायन्हिलाय सुखकी इच्छाकर अति लाड़प्यारसे लगे गौरीजी को वस्त्र आभूषण पहराने और हितकरने, निदान अति आनन्दमें मग्नहो डमरू बजाय२ ताण्डव नाच संगीत शास्त्रकीरीतिसे गाय२लगे पार्वतीजीकोरिझाने और बडेप्यारसे कण्ठ लगाने उस समय ऊषा शिव गौरीके प्यार देख२ पति के मिलनेकी

अभिलाषकर मनहींमन कहने लगीकि मेराभी कन्तहोयतो मैंभी शिवगौरी
की भाँति उसकेसाथ बिहारकरूं प्रतिदिन कामिनीऐसी शोभाहीनहै, जैसेचन्द्र
बिन यामिनी महाराज ज्यों ऊषाने मनहीमन इतनी बात कही, त्यों अन्तर
यामिनी पार्वतीजी ने ऊषाकी अंतरगतिजान उसे हितसे निकटबुलायप्यार
कर समझाकेकहाकि बेटीतू किसीबातकी चिंता मतकर तेरापति तुझेस्वप्नमें
आय मिलेगा, तू उसे ढूंढ़वा लीजो, और उसके साथ सुख भोग कीजो ऐसे
वर दे शिवरानी ने ऊषाको बिदा किया वह सब विद्या पढ़ दण्डवतकर
अपने पिताके पासआई पिताने एकमन्दिर अतिसुंदर निराला उसे रहनेको
दिया और यह कितनी एक सखी सहेलियों को ले वहाँ रहने लगी और
दिन२ बढ़ने महाराज जिसकाल वह बाला बारह वर्षकी हुई तो उसके मुख
चन्द्र की कांतिको देख पूर्णमासीका चन्द्रमा छीन हुआ बालों की श्यामता
के आगे अमावस की अन्धेरी फीकी लगने लगी उसकी चोटी सटकाईलख
नागिनी अपनी केंचुली छोड़ सटक गई भौंह की बकाई निरख धनुष धक-
धकाने लगा आँखोंकी बड़ाई चञ्चलाई पेख मृग मीन खञ्जन खिस्याय रहे
नाककी सुन्दरताई देख तिल फूल मुरझा गया, उसके अधरकी लालीपेख
बिम्बीफल बिलबिलाने लगा दांतकी पांतिनिरख दाड़िमका हिया दरकगया
कपोलोंकी कोमलताई पेख गुलाब फूलने से रहा गले की गुलाई देख कपोत
कुमलाने लगे, कुचों की कोर निरख कर कमल कलीसी सरोवरमें जाय गिरी
जिसकी कटिकी कृशता देख केसरीने बनवास लिया जंघों की चिकनाईपेख
केलेने कपूर खाया, देहकी गोराई निरख सोने को सकुच भई और चम्पा
चप गया, कर पदके आगे पद्मकी पदवी कुछ न रही ऐसी वह गजगामिनी,
पिकबयनी नवबाला यौवनकी सरसाईसे शोभायमान भईकि जिसने इनसब
की शोभाछीनली आगे एकदिन वह नवयौवनी सुगन्ध उबटन लगाय
स्वच्छ नीरसे मल न्हाय कंघी चोटीकर पाटी सँभार माँग मोतियों से भर
अंजन मंजन कर मेंहदी महावर रचाय पानखाय सुन्दर जड़ाऊ सोने के
गहने मंगवाय शीशफूल बैना, बेंदी बंकी, ठैंटी कर्णफूल चौंदानियां बड़े

गजमोतियोंकीनथ झलकेलटकनसमेत जुगनूमोतियोंके दुलड़ेमेंगुही चन्द्रहार. मोहनमाल पचलड़ी धुकधुकी, भुजबन्द नौरतनचूड़ी, नौगरी कङ्कण कड़े मुदरी, छापछल्ले किंकिणी तेहर जेहर, गूजरी अनवट बिछुए पहन सुथरा झमझमाता साँचे मोतियोंकी कोर का बड़ेघेरका घांघरा, और चमचमाती कंचुकीकस ऊपरसे झलमलाती ओढ़नी ओढ़ और ओढ़नीपर सुगन्ध लगाय इस सज धज से हंसतीं२ सखियोंके साथ मातापिता को प्रणाम करने गई कि जैसे लक्ष्मी, ज्यों सन्मुख जाय दण्डवत कर ऊषा खड़ीहुई त्यों बाणासुर ने उसके यौवनकी छटा देख निजमनमें इतनाकह उसे बिदाकिया कि अब यह ब्याहन योग्यहुई और पीछेसे कईएकराक्षसी उसकी चौकसी को पठाई वह वहां जाय आठों पहर सावधानीसे रहने लगी और राक्षसियाँ सेवाकरने लगीं महाराज वह राजकन्या पति के लिये नित्यप्रति जप पुण्य व्रतकर श्री गौराजीकी पूजा कियाकरे एकरोज नित्य कर्मसे निश्चिन्त हो रात समय सेजपर अकेली बैठी मनहीमन यों सोचरही थी कि देखिये पिता मेरा विवाह कब करें और किस भाँति मेरा वर मुझे मिले इतनाकह स्वामीकेही ध्यान में सो गई तो देखती क्या है कि एक पुरुष किशोर वेष श्याम वर्ण चन्द्रमुख कमल नयन अति सुन्दर कामरूप मोहन स्वरूप पीताम्बर पहने मोर मुकुट शिर धरे त्रिभङ्गी छवि करें रत्नजटित आभूषण मकराकृत कुण्डल बनमाल गुंजाहार पहने और पीत वसन ओढ़े महाचंचल सन्मुख आगे खड़ाहुआ यह उसे देखतेही मोहित हो लजाय शिर झुकाय रही फिर उसने कुछ प्रेमसनी बातें कर स्नेहबढ़ाय निकट आय हाथपकड़ कण्ठलगाय इसके मनका भ्रम और सोच संकोच सब बिसराय दिया फिर तो परस्पर सोच सङ्कोच तज सेजपर बैठ हाव भाव कटाक्ष और आलिंगन चुम्बनकर सुख लैनेदैने लगे और प्रेममें मग्नहो प्रीतिकी बातें करतेकि इसमें कितनो एकबेर पीछे ऊषाने ज्यों प्यारकर चाहाकि पतिको एकबार, अङ्क भर कण्ठ लगाऊँ त्यों नयनोंकी नींदगई और जिस भाँति हाथ बढ़ाय मिलने को भई थी तिसी भाँति मुरझाय पछिताय रहगई ।

दो०-जागि परी सोचत खरी,भयो परम दुख ताहि। कहां गयो वह प्राणपति,देखत चहूँदिशि चाहि

सोचति ऊषा मिलिहौं काहि। फिर कैसे मैं देखौं ताहि॥
सोवत जो रहती हौं आज। प्रीतम कबहूँ न जातौ भाज॥
क्यों सुखमें गहिवे को भई। जो यह नींद नयन ते गई॥
जागतही यामिन यम भई। जैहै क्यों अब यह दुख दई॥
बिन प्रीतम चित निपट अचैन। देखे बिन तरसत हैं नैन॥
श्रवण सुन्यौ चाहत हैं बैन। कहाँ गये प्रीतम सुख दैन॥
जो अपने पिय पुनि लखि लेहूँ। प्राण साथ करि उनके देहूँ॥

इतनाकह ऊषा अतिउदासहो पियका ध्यानधर सेजपर जाय मुखलपेट पड़ रही,जब भोरहुआ और डेढ़पहर दिनचढ़ा तब सखियांकहनेलगींकि आज क्या है जो ऊषा इतनादिन चढ़ा और अबतक सोतीहैं यहबातसुन चित्ररेखा बाणासुरके प्रधान कूष्मांडककी बेटी चित्रशालामेंजाय क्यादेखतीहैकि ऊषा छपरखट के बीच मनमारे जीहारे निढालपड़ी रो रहीहै,उसकी यह दशा देख ऊषा से—

चित्ररेखा बोली अकुलाय। कहि सखि तू मोसौं समझाय॥
आज कहा सोचत है खरी। परम वियोग सिन्धु में परी॥
रो रो अधिक उसासें लेत। तन मन व्याकुल है किहि हेत॥
तेरे मनको दुख परि हरौं। मन चीतौ कारज सब करौं॥
मोसी सखी और न धनी। है परतीत मोहि आपनी॥
सकल लोकमें हौं फिर आऊं। जहाँ जाउं कारज कर लाऊं॥
मोकों वर ब्रह्मा ने दीन्हों। बस मेरे सबही को कीन्हों॥
मेरे सङ्ग शारदा रहै। ताके बल करि हों जो कहै॥
ऐसी महा मोहनी जानों। ब्रह्म रुद्र इन्द्र छलि आनों॥
मेरो कोऊ भेद न जाने। अपने गुणको आप बखाने॥
ऐसे और न कहि हैं कोऊ। भला बुरा कोऊ किन होऊ॥
अब तू कह सब अपनी बात। कैसे कटी आजकी रात॥
मोसों कपट करौ जिन प्यारी। पुरवोंगी सब आस तिहारी॥

महाराज इतनी बातके सुनतेही ऊषा अतिसकुचाय शिरनाय चित्ररेखा के निकट आय मधुर वचनसे बोलीकि मैं तुझे अपनी हितूजान रातकीबात सब कह सुनाती हूँ तूनिज मनमें रख और कुछउपाय करसकेतो कर आज रात को एक पुरुष मेघवर्ण,चन्द्रबदन, कमल नयन, पीताम्बर पहरे, पीतपट ओढ़े, मेरे पास आय बैठा और उसने अतिहितकर मेरामन हाथमेंले लिया

मैंभी सोच सङ्कोच तज उससे बात करनेलगी निदान बतरातेजो मझे प्यार आयातो मैंने उसे पकड़ने को हाथबढ़ाया इसबीच मेरीनींद गई और उसकी मोहनी मूर्ति मेरे ध्यानमें रही ।

देख्यौ सुन्यौ और नहिं ऐसो । मैं कह कहा बताऊं जैसो ॥
वाकी छवि वरणी नहिं जाय । मेरो चित लेगयौ चुराय ॥

जबमैं कैलाशमें श्रीमहादेवजी के पास विद्या पढ़तीथी तब श्रीपार्वतीजी ने मुझसे कहा था कि तेरा पति तुझे स्वप्नमें आय मिलेगा तू उसे ढुंढ़वाय लीजो सो वर आज रात मुझे स्वप्न में मिला मैं उसे कहाँ पाऊं औरअपने बिरहकी पीर किसे सुनाऊं कहाँ जाऊं उसे किस भाँति ढुंढ़वाऊं न उसका नामजानूं न गाम महाराज इतनाकह जब ऊषा लम्बी श्वाँसले मुरझाय रह गई तब चित्ररेखाबोली कि सखी अबतू किसी बातकी चित्तमें चिंता मतकर मैं तेरे कंत को तुझे जहाँ होगा तहाँसे ढूंढ़लामिलाऊंगी मुझे तीनों लोक में जाने की सामर्थ्य है जहाँ होगा तहाँ जाय जैसे बनेगा वैसेही ले आऊंगी तू मुझे उसकानाम बता और जाने की आज्ञादे ऊषाबोली वीर तेरी कहा वत है कि मरी और साँस न आई जो मैं उसका नाम गामही जानती होतीतो दुःख काहेकाथा कुछ नकुछ उपाय करती यह बात सुन चित्रलेखा बोली सखी तू इसबात का भी सोच न कर मैं तुझे त्रिलोकीके पुरुष लिख२ दिखाती हूँ तू उनमेंसे अपने चितचोरको देख बतादीजो फिर ला मिलाना मेरा काम है तबतो हँसकर ऊषा बोली अच्छा महाराज यह बचन ऊषा के मुखसे निकलतेही चित्ररेखाने लिखने का सब सामान मंगवाया आसनमार बैठी और गणेश शारिदा को मनाय गुरु का ध्यानकर लिखने लगी पहले तो उसने तीन लोक चौदहभुवन सातद्वीप नौ खण्ड पृथ्वी आकाश सातों समुद्र आठोंलोक वैकुण्ठ सहित लिख दिखाये पीछेसब देव दानव धगन्र्वकिन्नर यक्ष मुनि ऋषिमुनि लोकपाल और सब देशों के भूपाल लिख२एक२ कर चित्ररेखाने दिखायेपर ऊषाने अपना चाहता उनमेंा न पाया फिरवह यदुवंशियों की शक्ल एक२कर लिख दिखाने लगी इसमें अनिरुद्धका चित्र लखतेही ऊषाबोली

अबमन चोर सखी मैं पायो। रात यही मेरे ढिग आयौ ॥
कर अब सखि तू कछू उपाय। याको ढूंढ कहूँते ल्याव ॥
सुन के चित्ररेखा यह कहै। अब यह मोते किम बच रहै ॥

योंसुनाय चित्ररेखा पुनि बोली की सखी इसे तू नहीं जानती मैं पहचनती हूँ यह यदुवंशी श्रीकृष्णजी का पोता प्रद्युम्न का बेटा अनिरुद्ध इसका नाम है समुद्र के तीर नीर में द्वारिका नाम एक पुरी है तहाँ यह रहता है हरि आज्ञा से उस पुरी का पहरा आठ पहर सुदर्शनचक्र देता है इसलिये कि कोई दुष्ट दैत्य दानव आय यदुवंशियों को न सतावै और कोई पुरी में आवे सो बिना राजा उग्रसेन शूरसेन की आज्ञा न आने पावै महाराज इस बात को सुनतेही ऊषा अति उदास हो बोली कि सखी जो वह ऐसी बिकट ठौर है तो तू किस भाँति वहाँ जाय मेरे कन्थ को लावेगी चित्ररेखा ने कहा आली तू इस बात से निश्चिन्त रह मैं हरि प्रताप से तेरे प्राणपति को ला मिलाती हूँ इतना कह चित्ररेखा रामनामी कपड़े पहनगोपी चन्दन का उर्द्ध पुण्ड तिलक काढ़ छापे उरमूल भुज और कंठ में लगाय बहुत सी तुलसी की माला गले में डाल हाथ में बड़े तुलसी के हीरों की सुमिरनी ले ऊपरसे हिरावल ओढ़ काँख में आसन लपेट भगवत्गीता की पोथी दबाय परम भक्त वैष्णव का वेष बनाय ऊषाको यों सुनाय बिदाहो द्वारिका को चली

दो०—पैठे अब आकाश के, अन्तरिच्छ हो जाउं। ल्याऊं तेरे कन्थको, चित्ररेख तो नाउं ॥

इतनी कथासुनाय श्रीशुकदेवजीबोलेकि महाराज चित्ररेखा अपनी माया कर पवनके तुरङ्ग पर चढ़ अन्धेरी रात में श्याम घटा के साथ बातकीबात में द्वारिका पुरी में जाय बिजुली सी चमकी और श्रीकृष्णचन्द्रजीके मन्दिर में बढ़गई ऐसेकि इसकाआना किसीने न जाना आगे यह ढूंढती२ वहाँगई जहां पलंग परसोये अनिरुद्ध जी अकेले सपने में ऊषा के साथ बिहार कर रहे थे इसनेदेखते ही उस मोते को पलङ्ग समेत उठाय झट अपनी बाटली।

सोवतही परयंक समेत। लिये जात ऊषा के हेत।
अनिरुद्ध कौ ले आई वहां। ऊषा चिंतित बैठी जहां ॥

महाराज, पलंग समेत अनिरुद्ध को देखते ही ऊषा पहले तो हक बकाय

चित्ररेखा के पावों पर जाय गिरी पीछे यों कहने लगी धन्य है सखी तेरे साहस और पराक्रम को. जो कठिन ठौर जाय बात की बात में पलंग समेत उठा लाई और अपनी प्रतिज्ञा पूरी की मेरे लिये तैंने इतना कष्ट किया इसका पलटा मैं तुझे नहीं दे सकती तेरे गुण की ऋणियां रही चित्ररेखा बोली सखी संसार में बड़ा सुख यही है. जो पर को सुख दीजै, और कारज भी भला यही है, कि पर उपकार कीजै यह शरीर किसी काम का नहीं इससे किसी का काम होसके तो यही बड़ा काम है इसमें स्वारथ परमार्थ दोनों होते हैं महाराज इतना बचनसुनाय चित्ररेखा पुनि यों कहबिदा हो अपने घर गई कि सखी भगवान के प्रताप से तेराकन्थ मुझे ला मिलाया उषा,अति,प्रसन्नहो,लाजकिये,प्रथम मिलनका भय लियेमनहीमनयोंकहनेलगी

कहा बात कह पियहि जगाऊं । कैसे भुजभर कण्ठ लगाऊं ॥

निदान बीणा मिलाय मीठे२ स्वरों से बजाने लगी बीणा की ध्वनि सुनतेही अनिरुद्धजी जाग पड़े और चारों ओर देख२ मन ही मन यों कहने लगे यह कौन ठौर किसका मन्दिर मैं यहाँ कैसे आया और मुझे सोते को पलङ्ग समेत कौन उठा लाया महाराज उसकाल अनिरुद्धजी तो अनेक२ प्रकार की बातें कह कह अचरज करतेथे और उषा संकोच लिये प्रथम मिलन का भय किये एक कौने में खड़ी पिया का चन्द्रमुख देख निरख अपने लोचन चकोरों को सुख देती थी, इस बीच—

अनिरुद्ध देखि कहै अकुलाय । कहै सुन्दरि अपने मन भाय ॥
है तू को मोपै क्यों आई । कै तू आप मोहि ले आई ॥
सांच झूठ एक नहिं जानों । सपनों सो देखते हों मानों ॥

महाराज अनिरुद्धजी ने इतनी बात कही और उषा ने कुछ उत्तर न दिया वह और भी लजाकर कौने में सट रही तब तो उन्होंने झट उसे हाथ पकड़ पलंग पर ला बिठाया और प्रीति सनीं प्यार की बातें कह उसके मन का सोच संकोच और सब भय मिटाया, आगे वे दोनों परस्पर सेजपर बैठ हाव भाव कटाक्ष कर सुख लेने देने लगे और प्रेम कहानी कहने इस

बीच बातों ही बातों अनिरुद्धजी ने उषा से पूछा कि हे सुन्दरी तूने पहले मुझे कैसे देखा और पीछे किस भांति यहाँ मंगवाया इसका भेद समझाकर कह जो मेरे मन का भ्रम जाय इतनी बात के सुनते ही ऊषा पति का मुख निरख हर्ष के बोली ।

मोहि मिले तुम सपने आय । मेरो चित लेगये चुराय ॥
जागी मन भागी दुख लह्यो । तब मैं चि॰ खा से कह्यो ॥
सोई प्रभु तुमको यहाँ लाई । ताकी गति जानी नहिंजाई ॥

इतनी कह पुनि ऊषाने कहा महाराज मैंने तो जिस भांति तुम्हेंदेखा और पाया तैसे सब कह सुनाया, अब आप कहिये अपनीबात समझाय, जैसे तुमने मुझे देखा यादवराय, यह वचनसुन अनिरुद्ध अति आनन्दकर मुसकरायके बोलेकि सुन्दरी मैं भी आजरातको स्वप्नमें तुझे देख रहा थाकि नींदमें कोई मुझे उठाय यहाँ लेआया इसकाभेद अबतक मैंने नहीं पाया कि मुझे कौनलाया जागा तो मैंने तुझेही देखा इतनी कथा कह शुकदेवजी बोलेकि महाराज! ऐसे वे दोनों आपस में पियप्यारी बतराय पुनि २प्रीति बढाय अनेक२ प्रकारसे काम कलोल करनेलगे और विरह की पीर हरने, आगे पानकीमिठाई मोतीमालकी शीतलताई और दीपज्योति की मंदताई निरख ज्यों २ ऊषा बाहर जाय देखेतौ ऊषाकाल हुआ चन्द्र की ज्योतिघटी तारे द्युतिहीन भये आकाश में अरुणाई छाई चारों ओर चिड़िया चुहचुहाईं, सरोवर में कुमदिनी कुम्हलाई और कमल फूले, चकवा चकईका संयोगहुआ महाराज ! ऐसा समय देख एकबारतो सब द्वार मून्द ऊषा बहुत घबराय घरमें आय अतिप्यारकर पिया को कंठ लगाय लेटी पीछे पियको दुराय सखी सहेलियोंसे छिपाय छिप२ कंतकी सेवा करने लगी, निदान अनिरुद्ध का आना सखी सहेलियों ने जाना, फिरतो वह दिनरात पति के साथ सुखभोग किया करै एकदिन ऊषाकी माता बेटीको सुधलेने आई तो उसने छुपकर देखा कि वह एक महासुन्दर तरुणपुरुष के साथ कोठे में बैठी आनन्द से चौपड़ खेल रही है यह देखते ही बिन बोलेचाले दबे पाँव फिर मनही मन प्रसन्न हो अशीष देती सुद मारे वह अपने घर चलीगई आगे कितने एक

रोज पीछे एकरोज ऊषा पतिको सोते देख जीमें यह विचार कर सकुचतीर घरसे बाहर निकली कि कहीं ऐसा न हो जो कोई मुझे न देख अपने मनमें जानेकि ऊषा पतिके लिये घरसे नहींनिकलती महाराज ऊषाकन्तको अकेला छोड़तेतो छोड़गई, पर उससे रहानगया, फिर घरमेंआय किंवाड़लगाय विहार करने लगी, यह चरित्र देख पौरियों ने आपस में कहाकि भाई ! आज क्या है जो राजकन्या अनेक दिन पीछे घरसे निकली और फिर उलटे पांवों चली गई इतनी बातके सुनतेही उसमेंसे एक बोलाकि, भाई मैं कई दिनसे देखताहूँ ऊषाके मन्दिरका द्वार दिनरात लगा रहता है और घरके भीतर कोई पुरुष हँस२ के बात करताहै और कभी चौपड़ खेलताहै, दूसरेने कहा जो यहबात सच है; तो चलो बाणासुरसे जाय कहें, समझ बूझ यहां क्यों बैठे रहें ।

एक कहै कछू कहो न जाय । तुम सब बैठ रहो अरगाय ॥
भली बुरी होवै सो होय । होनहार मेटै नहिं कोय ॥
कछू न बात कुँवरि की कहिये । चुपहै देख बैठही रहिये ॥

महाराज द्वारपाल आपसमें ये बात करतेही थे कि कईएक योधा साथ लिए फिरता२ बाणासुर वहांभ आ निकला और मन्दिर के ऊपर दृष्टि कर शिवजीकी दीहुई ध्वजा न देख बोला कि यहाँभ ध्वजा क्या हुई द्वारपालोंने उत्तर दियाकि महाराज वहतो बहुतदिन हुए टूटकर गिरपड़ी इसबात के सुनतेही शिवजीका वचन स्मरणकर भावित हो बाणासुर बोला—

कबकी ध्वजा पताका गिरी । बैरी कहूं अवतरौ हरी ॥

इतना वचन बाणासुर के मुखमें निकलते ही एक द्वारपाल सम्मुखजा खड़ा हो हाथ जोड़ शिरनाय बोलाकि महाराज एक बात है पर मैं कह नहीं सकता जो आपकी आज्ञा पाऊं तो ज्यों की त्यों कह सुनाऊं बाणासुर ने आज्ञाकीअच्छा कह तब पौरिया बोला महाराज अपराध क्षमा हो कई रोज से हम देखतेहैं कि राजकन्या के महलमें कोई पुरुष आयाहै वह दिन रात बात किया करता है इसका भेद हम नहीं जानते कि वह कौन पुरुष है और कहां से आया है और क्या करता है इतनी बातके सुनतेही बाणासुर

अति क्रोधकर अस्त्र शस्त्र उठाय दबे पांव अकेला ऊषा के महलों में जाय छिपकर क्या देखता है कि एक पुरुष श्यामवर्ण अतिसुन्दर पीतपट ओढे निद्रामें अचेत ऊषा के सङ्ग सोया पड़ा है ।

सोचत बाणासुर यों हिये । होय पाप सोवत बध किये ॥

महाराज यों मनही मन विचार बाणासुरने कई एक रखवाले वहां रख उनसे कहाकि तुम इसके जगते ही हमें आय कहियो फिर अपने घर जाय सभाकर सब राक्षसों को बुलाय कहने लगाकि मेराबैरी आन पहुँचा है तुम सब दलले ऊषाका महल जाय घेरो पीछेसे मैंभी आताहूँ आगे इधरतो बाणासुरकीआज्ञापाय सबराक्षसोंनेपहुँच ऊषाका घर घेरा और इधरअनिरुद्ध जी और राजकन्या निद्रामेंचौंक पंसासार खेलनेलगे इसमें चौपड़खेलते२ऊषा क्या देखतीहैकि चहुँतरफसेघटा घिरआई बिजुलीचमकनेलगी दादुर मोरपपीहे बोलने लगे पपीहाकीबोली सुन राजकन्या इतनी कह पियके कण्ठ लगी ।

तुम पपिहा पिय पिय मत कहौ । यह विरोग भाषा परि हरौ ॥

इतनेमें किसीने जाय बाणासुरसे कहा महाराज बैरी जागा बैरी का नाम सुनतेही बाणासुर अतिकोपकरके उठा और हथियार ले ऊषा की पँवरिमें आय खड़ा हुआ और लगा छिपकर देखने निदान देखते देखते

बाणासुर यों कहै हंकार । को है रे तू गेह मंझार ।

घनतन बरण मदन मनहारी । कमल नयन पीताम्बर धारी ॥

अरे चोर बाहर किन आवै । जान कहां अब मोसों पावै ॥

जब बाणासुर ने टेरके यों कहे बैन, तब ऊषा अनिरुध सुन देख भये निपट अचैन,पुनि राजकन्याने अतिचिंताकर भयमानहो लम्बीस्वांसलेले पतिसेकहाकि मेरापिता असुरदललेचढ़आया,अब आपइसकेहाथसे कैसेबचोगे

दो०-तबहि कोप अनिरुद्ध कह्यो,मति डरपै तू नारि । स्यार सुण्ड राक्षस असुर,पलमें डारों मारि ॥

ऐसाकह अनिरुद्धजीने वेद मंत्रपढ़ एकसौआठ हाथकी शिला बुलाय हाथमें ले बाहर निकल दलमें जाय बाणासुरको ललकारा,इनकेनिकलतेही बाणासुर धनुष चढ़ाय सब कटकले अनिरुधजीपर यों टूटाकि मधुमक्खियोंका

भुगड किसी पै टूटे जब राक्षस अनेक२प्रकारके अस्त्र चलानेलगे तबक्रोधकर अनिरुद्धजीने शिलाके हाथ कईएक ऐसे मारे कि सब असुरदल काईसा फट गया कुछमरे कुछ घायलहुए बचे सो भागगये, पुनि बाणासुरजाय उनको घेर लाया और युद्ध करने लगा, महाराज जितने अस्त्र शस्त्र असुर चलाते तितने इधर उधर होजातेथे और अनिरुद्धजीके अंगमें एक शस्त्र न लगताथा

जे अनिरुध पर परैं हथ्यार। अधवर कटैं शिला की धार॥
शिला प्रहार सहा नहिं परैं। वज्र चोट ज्यों सुरपति करै॥
लागत शीश बीचते फटैं। टूटहिं टाँग भुजा धरकटैं॥

निदान लड़ते२ जब बाणासुर अकेला रहगया और सब कटक कटगया तब उसने मनहीमन अचरज कर इतना कह नाग फांस से अनिरुद्धजी को पकड़ बांधा कि इस अजीतको कैसे जीतूंगा इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेव जी ने राजा परीक्षित से कहाकि महाराज! जिस समय अनिरुद्ध जी को बाणासुर नागफाँस से बांध अपनी सभा में ले गया उसकाल अनिरुद्धजी मनही मन विचारते थे मुझे कष्टहोय तो होय पर ब्रह्माका वचन झूठा करना उचित नहीं क्योंकि जोमैं नागफांससे बचकर निकलूंगा तो उसकीअमर्यादा होगी इससे बंधा रहनाही भला है और बाणासुर यह कह रहा था अरे लड़के मैं तुझे अब मारता हूँ जो कोई तेरा सहायक हो तो तू बुला इस बीच ऊषाने पियाकी यह दशा सुन चित्ररेखा से कहा कि सखी धिक्कार है मेरे जीवनको जो पति मेरा दुखमें रहे और मैं सुखसे खाऊं पीऊं और सोऊं चित्ररेखा बोली सखी कुछ चिंता मत करै तेरे पतिका कोई कुछ न कर सकेगा निश्चिंत रह अभी श्रीकृष्णचन्द्रजी और बलराम सब यदुवंशियों को साथ ले चढ़ि आवेंगे और दलको संहार तुझ समेत अनिरुद्धजीको छुड़ाय ले जावेंगे उनकी यह रीति है कि जिसकी सुन्दरी कन्या सुनते हैं तहांसे छलबलकर जैसे बने तैसे लेजातेहैं उन्हींका यह पोताहै जोकुन्दनपुर के राजा भीष्मक की बेटी रुक्मिणीजी को महाबली बड़े प्रतापी राजा शिशुपाल और जरासंधसे संग्राम कर ले गयेथे तैसेही अब तुझे लेजायेंगे तू

किसीबातकी भावनामतकर ऊषा बोली सखी यहदुख मुझसे सहानहीं जाता-

नाग फाँस बाँधे पिय हरी। दहे गात ज्वाला विष भरी॥
हौं कैसे पौढ़ौं सुख चैन। पिय दुख क्यों कर देखों नैन॥
प्रीतम बिपति परे क्यों जीवों। भोजन करों न पानी पीवों॥
बरु बध अब बाणासुर कीजो। मोकों शरण कन्तकी दीजो॥
होनहार होनी है होय। तासों कहा कहैगो कोय॥
लोक वेदकी लाज न मानों। पिय सङ्ग दुख सुखही जानों॥

महाराज! चित्ररेखासे ऐसेकह जब ऊषा कंतकनिकटजाय निडरनिःशंक हो बैठी तब किसीने बाणासुरको जा सुनाया कि महाराज! राजकन्या घर से निकल उस पुरुष के पास गई इतनी बात के सुनते ही बाणासुर ने पुत्र स्कन्द को बुलाय के कहाकि बेटा तू अपनी बहिनको सभामेंसे उठाय घरले जाय पकड़ रख और निकलने न दे पिताकी आज्ञा पाते ही स्कन्द बहन के पास जाय अतिक्रोध कर बोलाकि तैने यह क्या किया,पापिनी छोड़ी लोक लाज औरकान आपनी हैनीच मैं तुझे क्या बध करूं होगापाप और अपयश से भी हूँ डरूं, ऊषा बोलीकि जो तुम्हें भावे सो कहो और करो,मुझे पार्वतीजीने जो वरदिया सो वर मैंने पाया, अब इसे छोड़ और को धाऊं, तो अपने को गाली चढ़ाऊं, तजती है पति को अकुलनी नारी यह रीतिपरम्परा से चली आतीहै, बीच संसार जिससे विधनाने सम्बन्ध किया उसीके साथ जगतमें अपयशलिया तो लिया, महाराज इतनीबातके सुनतेही स्कन्द क्रोधकर हाथपकड़ ऊषाको तहांसे मन्दिर में उठालाया और फिरनजानेदिया पुनि अनिरुद्ध जी को भी वहांसे उठाय कहीं अन्त ले जाय बन्दकिया उस काल इधर अनिरुद्धजी प्रियाके वियोग में महाशोक करतेथे और उधर राजकन्या कन्त के बिरहमें अन्नपानी तज कठिन योग करने लगी इसबीच कितने एकदिन पीछे एकदिन नारद मुनिने पहले तो अनिरुद्धजीको जाय समझायाकि तुम किसी बातकी चिंता मतकरो अभी आनन्दकन्द श्रीकृष्णचंद्र बलराम सुखधाम राक्षसों के साथ संग्राम कर तुम्हें छुड़ाय ले जायंगे, पुनि बाणासुरको जाय सुनायाकि राजा जिसे तुमने नागफाँससे पकड़बाँधा

है वह श्रीकृष्णका पोता और प्रद्युम्नका बेटा अनिरुद्ध उसका नाम है तुम यदुवंशियोंको भलीभाँतिसे जानतेहो, जोचाहो सोकरो मैंइसबातसे तुम्हें सावधान करने आयाथा सो करचला. यहबात सुन इतनाकह बाणासुरने नारदजीको बिदा किया कि नारदजी मैं सब जानता हूँ।

अध्याय ६४

(बाणासुर संग्राम)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज! अब अनिरुद्धको बँधे२ चारमहीने हो गए तब नारदजी द्वारिका पुरीमें गये तो वहाँक्या देखतेहैंकि सब यादव महा उदास मनमलीन तनछीन होरहे हैं कि बालकको उठाय यहाँसे कौनलेगया इस प्रकारकी बातें हो रही थीं और महलमें रोना पीटना होरहाथा ऐसाकि कोई किसीकी बात नसुनताथा नारदजीके जाते सबलोग स्त्री व पुरुष उठि धाए और अतिव्याकुल तनछीन मनमलीन रोते बिलखाते सन्मुख खड़े हुए आगे अति बिनती कर हाथ जोड़ शिर नाय हाहाखाय नारद जी से सब पूछने लगे—

सांची बात कहो ऋषिराय। जामे जिय राखें यदुराय॥
कैसे सुधि अनिरुद्धकी लहैं। कहो साधु ताके बल रहै॥

इतनी बातके सुनतेही नारदजीबोलेकि आप किसी बातकी चिन्ता मत करो और अपने मनका शोकहरो अनिरुद्धजी जीते जागते शोणितपुरमें हैं

वहाँउन्होंनेजाय बाणासुरकीकन्यासेभोगकिया,इसीलिये उसनेउन्हें नागपाश से पकड़ बाँधा है बिन संग्राम किये वह किसी भाँति अनिरुद्धजी को न छोड़ेगा, यह भेद मैंने आपको कह सुनाया यों कह नारद मुनि तो चले गए पीछे सब यदुवंशियों ने आय राजा उग्रसेन से कहा कि महाराज हम ने ठीक समाचार पाया कि अनिरुद्धजी शोणितपुर में बाणासुर के यहाँ हैं उन्होंने उसकी कन्या रमी इससे उसने इन्हें नाग पाश से बांध रक्खा है अब हमें क्या आज्ञा होती है इतनी बात के सुनते ही राजा उग्रसेन ने कहाकि तुम हमारी सब सेना ले जाओ और जैसेबने तैसे अनिरुद्धजी को छुड़ालाओ ऐसा वचन उग्रसेन के मुख से निकलतेही महाराज सब यादव तो राजा उग्रसेन का कटक ले बलरामजी के साथ हुए और श्रीकृष्ण और प्रद्युम्नजी गरुड़ के कन्धे पर चढ़ सबसे पहले शोणितपुरको गये। इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज जिस काल बलरामजी राजा उग्रसेन की सब सेना ले द्वारिकापुरी से धौंसा दे शोणितपुर को चले उस समय की कुछ शोभा वर्णी नहीं जाती कि सबसे आगे तो बड़े दन्त वाले मतवाले हाथियों की पाँति उनपर धौंसा बजता जाता था और ध्वजा पताका फहरातीं थीं उनके पीछे एक तरफ़ गजों की अवली हौदा समेत उनपर बड़े२ रावत योधा शूरबीर यादव झिलम टोप पहने सब हथियारों को लगाए बैठे थे उनके पीछे रथों के ताँतों के तांते नजर पड़ते उनकी पीठ पर घुड़ चढ़ों के यूथ के यूथ बर्ण बर्ण के घोड़े गोटे पट्ठे वाले गजगाह पाखरडाले जमाते ठहराते कुदाते फँदाते चले जाते थे और उनके बीच२ में चारण यश गाते थे और कड़खेत कड़खा तिस पीछे फरी खांड़े, छुरी, कटारी, जमधर बरछा, बरछे, भाले बल्लम बानपटे धनुष बान गदा चक्र, फरशे, गड़ासी,लुहंगी, गुप्ती, बांके, बिछुए समेत अनेक२ प्रकार के हथियार लिये पैदलों की सेना टीडी दल सा चला जाता था उनके मध्य धौंसा ढोल डफ बाँसुरी भेरे रणसिंहों का जो शब्द होता था सो अतिही सुहावना लगता था।

उठी रेणु आकाश लों छाई । छिप्यो भानु तम फैल्यौ भाई ॥
चकई चकवा भयो वियोग । सुन्दरि करैं कन्त सों भोग ॥
फूले कमल कुमुद कुम्हिलाने । निश्चर फिरहिंनिशा जियजाने ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महराज! जिस समय बलराम जी बारह अक्षौहिणी सेना ले अति धूमधाम से उसके गढ़ गढ़ी कोट तोड़ते और देश उजाड़ते ज्यों शोणितपुर में पहुँचे और श्रीकृष्णचन्द्र व प्रद्युम्नजीभी आय मिले तिसी समय किसी ने अति भय खाय, घबराय जाय, हाथ जोड़ शिर नाय, बाणासुरसे कहाकि महाराज कृष्ण बलराम अपनी सब सेना ले चढ़ आए और उन्होंने हमारे देश के गढ़ गढ़ी कोट ढहाय गिराये और नगर को चारों ओर से आय घेरा अब क्या आज्ञा होती है इतनी बात के सुनते ही बाणासुर महा क्रोध कर अपने बड़े२ राक्षसों को बुलाय बोला तुम सब दल,अपना ले जाय नगर के बाहर जाय श्रीकृष्ण बलरामके सन्मुख खड़े हो पीछे से मैंभी आताहूँ महाराज! आज्ञा पाते ही वह असुर बातकी बात में बारह अक्षौहिणी सेना ले श्रीकृष्ण बलरामजी के सोंहीं लड़ने को अस्त्रशस्त्र लिए आ खड़े भये उनके पीछे श्रीमहादेवजी का भजन स्मरण कर ध्यान कर बाणासुर आ उपस्थित हुआ श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! ध्यान करते ही शिवजी का आसन डोला और ध्यान धर जाना कि मेरे भक्त पर भीड़ पड़ी है, इस समय चलकर उसकी चिन्ता मेटना चाहिए यह मन ही मन विचार कर पार्वतीजी को अर्द्धाङ्गधर जटाजूट बाँध भस्म चढ़ाय बहुत सी भांग आक धतूरा खाय श्वेत नागों का जनेऊ पहन व्याघ्रचर्म ओढ़ मुण्डमाल सर्प पहन त्रिशूल डमरू पिनाक खप्पर ले नन्दी पर बैठ भूत प्रेत, पिशाचिनी, डाकिनी, शाकिनी आदि सेना ले भोलेनाथ चले उस समय की कुछ शोभा वर्णी नहीं जाती कि कान में गज मणियों की मुद्रा ललाट में चन्द्रमा. शिर पर गङ्गा धरे लाल२ लोचन करे अति भयङ्कर वेष महाकाल की मूर्ति बनाये इस रीति से बजाते गाते सेना को नचाते जाते थे कि वह रूप देखते ही बनि आवे कहने में न आवे निदान कितनी एक बेर में

शिवजी अपनी सेना ले वहाँ पहुँचे कि, जहाँ सब असुर दल लिए बाणा सुर खड़ाथा हर को देखतेही बाणासुर हर्ष के बोला कि कृपासिन्धो आप बिन कौन इस समय सुध ले।

तेज तुम्हारा इनको दहै। यादव कुल अब कैसे रहै॥

योंसुनाय फिर कहनेलगाकि, महाराज इससमय धर्मयुद्धकरो और एक एकके सन्मुख लड़ो, महाराज इतनी बातजो बाणासुरके मुखसे निकली तो इधर असुरदल लड़नेको तुलकरखड़ा हुआ, और उधर यदुवंशी आ उपस्थित हुए दोनोंओर जुझाऊबाजा बाजनेलगे शूरवीर रावतयोधा अस्त्रशस्त्रसाजने और अधीरनपुंसककायर खेत छोड़२ जीलेके भागनेलगेउसकाल महाकाल स्वरूपशिवजी श्रीकृष्णचन्द्रजीके सन्मुख, बाणासुर. बलरामजी सौंही हुआ स्कन्द प्रद्युम्नजीसे आयभिड़ा और इस तरह एकसेएक जुटगया व दोनों तरफमें शस्त्र चलनेलगे, धनुष, पिनाक महादेवजी के हाथ, इधरशार्ङ्ग धनुष लिये यदुनाथ शिवजीने ब्रह्मबाण चलाया, श्रीकृष्णजीने ब्रह्मशस्त्र काट गिराया, फिररुद्रने चलाई, महाबयार सोहरिने तेजसे दीनी टार, पुनिमहा-देवजीने अग्निउपजाई, वह मुरारीने मेह वर्षाय बुझाई और एकमहाज्वाला उपजाई सो सदाशिवके दलमेंधाई, उसने डाढ़ी मूँछ और जलाय के केश कीने अब असुर भयानकवेष, जब असुरदल जलनेलगा औरबड़ा हाहाकार हुआ तब भोलानाथने जले अधजले राक्षसों और भूत प्रेतोंको जल वर्षाय ठण्डा किया और खुद अतिक्रोधकर नारायणबाण चलानेको लिया. पुनि मनहीमन कुछसमझ नहीं चलाया, रखदिया फिरतो श्रीकृष्ण आलस्यबाण चलाय सबको अचेत कर, लगे असुरदल काटने ऐसेकि, किसान खेतीकाटे, यह हाल देख जो महादेवजीने अपनेमनमें सोचकरकहाकि, अब प्रलय युद्ध बिनकिए नहीं बनता त्योंही स्कन्द मोर पर चढ़ आया, और अन्तरिक्ष हो उसने श्रीकृष्णजी की सेना पर बाण चलाया।

तब हरिसौं प्रद्युम्न उच्चरे। मोर ऊपर आकाश-में लरे॥
आज्ञा देहु युद्ध अति करे। मारों अबहि भूमि गिर परे॥

इतनीबातके सुनतेही प्रभुने आज्ञादी प्रद्युम्नजी ने एकबाण मारा सो

जा मोरकोलगा तबस्कन्द नीचेगिरा स्कन्दकेगिरतेही बाणासुर महाकोपकर पाँचसौ धनुष चढ़ाय एक२ धनुष पर दो दो बाण धर लगा मेहसा बरषाने और श्रीकृष्णचन्द्रभी बीचही लगे काटने उसकाल महाराज! इधर उधरके मारूढोल ढपसेबाजतेथे. कड़खेत धमारसी गातेथे, घावोंसे लोहूकीधार पिच-कारियाँसी चलतीं थीं जिधर तिधर लाल २ लोहू गुलाल सा दृष्टि आता था बीच२ भूत प्रेत पिशाच जो भाँति२ के वेष भयावने बनाये फिरते थे सो भगतसी खेल रहे थे, और खूनकीनदी रङ्गकीसी बह निकलीथी, लड़ाईक्या दोनों ओर होली सी होरहीथी इसमें लड़ते२ कितनी एकबेर पीछे श्रीकृष्ण चन्द्रजीने एकबाण ऐसा माराकि उसकेरथका सारथी उड़गया और घोड़े भड़के निदान रथबानके मरतेही बाणासुरभी रथछोड़ भागा, श्रीकृष्णजीने उसका पीछाकिया, इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले महाराज बाणा सुरके भागने का समाचारपाय उसकी माँ जिसकानाम,कोटरा सो उसीसमय भयानक वेष छुटेकेश नङ्गी मुनङ्गी आ श्रीकृष्णजी के सन्मुख खड़ी हुई और लगी पुकारने।

देखत ही प्रभु मूँदे नैन। पीठ दई ताके सुन बैन॥
तौलों बाणासुर भज गयो। फिर अपनो दल जोरत भयो॥

महाराज जबतक बाणासुर एकअक्षौहिणीदलसाज वहाँआया तबतक कोटरा श्रीकृष्णजीके आगेसे न हटी पुत्रसेनादेख अपने घरगई, आगे बाणा-सुरने आय घोरसंग्राम किया, पर प्रभुके सन्मुख न डटा फिरभाग महादेव जीके पासगया बाणासुरको भयातुरदेख शिवजीने अतिक्रोधकर महाविषम ज्वरको बुलाय श्रीकृष्णजीकीसेना पर चलाया वह महाबली बड़ातेजस्वी जिसका तेज सूर्यके समान ३मुण्ड९पग ६करवाला,त्रिलोचन भयानक वेष ने श्रीहरिके दलको आ घाला उसतेजसे यदुवंशी जलनेलगे और थर२काँपने निदान अतिदुखपाय घबराय यादवोंने आय श्रीहरिसे कहा महाराज! शिव जीके ज्वरने जाय सारेकटकको जलामारा अब इसके दावसे बचाइये नहींतो एकभी यादव जीता न बचेगा,महाराज। इतनीबातसुन और सबको कातर

देख हरिने शीतज्वर चलाया, वह महादेव के ज्वर पर धाया इसे देखतेही वह डरकर पलाया और चला सदाशिवजी के पास आया।

तव ज्वर महादेव सों कहै। राखहु शरण कृष्ण ज्वर दहै॥

यह वचन सुन महादेवजी बोलेकि, श्रीकृष्णचन्द्रजीके ज्वरको बिन श्री हरि ऐसा त्रिभुवनमें कोई नहीं जो हरै, इससे उत्तम यही है कि तू भक्त हितकारी श्रीमुरारी के पास जा शिव वचन सुन सोच विचार विषमज्वर श्रीहरि आनन्दकन्दजी के सन्मुख जा हाथजोड़ अतिविनतीकर गिड़गिड़ाय बोला हे कृपासिन्धु पतित पावन दीन दयालु मेरा अपराध क्षमा कीजो अपने ज्वर से बचाय लीजो।

प्रभु तुम हो ब्रह्मादिक ईश। तुम्हरी शक्ति अगम जगदीश॥
तुमही रचकर सृष्टि सम्हारी। सब माया जग कृष्ण तुम्हारी॥
कृपा आपकी यह मैं बूझौं। ज्ञान भये जग कर्ता सूझौं॥

इतनी स्तुति सुनतेही हरि दयालुहो बोलेकि तू मेरी शरण आया इससे बचा नहीं तो जीता न बचता, मैंने तेरा अब का अपराध माफकिया पर फिर मेरे भक्त और दासोंको मत व्यापियो तुझे मेरीही आन है ज्वर बोला कृपासिन्धु जो इस कथा को सुनेगा उसे शीतज्वर एकांतरा और तिजारी कभी न व्यापेगी पुनि श्रीहरि बोलेकि तू अब महादेव के पास जा यहाँ मत रह, नहीं तो मेराज्वर तुझे दुख देगा आज्ञा पाते ही बिदा हो दण्डवत कर विषमज्वर सीधा महादेव के पास गया और ज्वरकी बाधा सब मिट गई इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज!

यह सम्वाद सुने जो कोय। ज्वरको डर ताको नहिं होय॥

अग्रे बाणासुर अति कोप कर सब हाथों में धनुष बाण ले प्रभु के सन्मुख आ ललकार के बोला।

तुमते युद्ध कियो मैं भारी। तो हूं साध न पुरी हमारी॥

जब यह कहा लगा सब हाथोंसे बानचलाने तब भक्तहितकारी श्रीहरि ने सुदर्शन चक्र से उसके चार हाथ छोड़ सब हाथ काट डाले ऐसेकि जैसे कोई बात के कहते पेड़ के गुद्दे छांट डाले हाथों के कटतेही बाणासुर शिथिल हो गिरा घावों से खून की नदी बहनिकलीं जिसमें भुजायें मगर

मच्छी सी जनातींथीं कटे हुए हाथियों के मस्तक घड़ियालसे डूबते उछलते जाते थे बीच २ में रथ नगाड़े से बहे जाते थे और जिधर तिधर रणभूमि में श्वान, स्यार, गीध आदि पशु पत्ती लोथें खैंच२ आपस में लड़२ झगड़२ फाड़२ खातेथे कौवे शीशों से आँखें ले उड़ जाते थे श्रीशुकदेवजी बोले महाराज रणभूमि की यह गति देख बाणासुर अति उदास हो पछिताने लगा निदान निर्बल हो सदाशिवजी के निकट गया।

कहते शिव मन माँहि विचारी। अब हरिकी कीजै मनुहारी॥

इतना कह श्रीमहादेवजी बाणासुरको साथले वेद पाठ करते, वहाँ आये कि जहाँ रणभूमि में श्रीकृष्णचन्द्र खड़ेथे, तहाँ बाणासुर को पांवों पर डाल शिवजी हाथजोड़ बोलेकि हेशरणागतवत्सल! अबयह बाणासुर आपकी शरण है इसपर कृपादृष्टि कीजे और इसका अपराध मन में न लीजे तुमतो बारम्बार अवतार लेते हो भूमिका भार उतारने को और दुष्ट हनन और संसार के तारने को, तुमहो प्रभु अलख अभेद, अनन्त, भक्तों के हेतु संसारमें आय प्रगट होतेहो भगवन्त, नहीं तो सदा रहतेहो विराट स्वरूप, जिसका है यहरूप, स्वर्गशिर, नाभि आकाश, पृथ्वी पाँव, समुद्रपेट, पर्वत नख, बादलकेश, रोमवृक्ष, लोचनशशि और भानु, मन रुद्र अहंकार, पवन श्वास, पलक लगना रात दिन, गर्जन शब्द।

ऐसो रूप सदा अनुसरौ। काहू पै नहिं जाने परौ॥

और यह संसार दुःख का समुद्रहै इसमें चिंता और मोहरूपी जल भरा है प्रभुनाम नाव के सहारे बिनकोई इस महा कठिन समुद्र के पार नहीं जा सकता और यों तो बहुतेरे डूबते उछलते हैं जो नर देह पाकर तुम्हारा स्मरण और जप न करेगा सो भूलेगा धर्म और बढ़ावेगा पाप, जिसने संसार में आय तुम्हारा नाम न लिया तिसने अमृत छोड़ विष पिया।

जिसके हृदय बसौ तुम आय। भक्ति मुक्ति तिहि मिलै गुणाय॥

इतना कह पुनि महादेवजी बोलेकि, हेकृपासिंधो! दीनबन्धो!! तुम्हारी महिमा अपारहै किसे इतना सामर्थ्यहै जो उसे बखाने और तुम्हारे चरित्रों को जाने, अब मुझपर कृपा करके इस बाणासुर का अपराध क्षमा कीजे

और इसे अपनी भक्ति दीजे, यह भी तुम्हारी भक्ति का अधिकारी है क्योंकि भक्त प्रह्लाद का वंश अंश है श्री हरिजी बोलेकि शिवजी हम तुम में कुछभेद नहीं और जो भेद समझेगा वह महानरकमें पड़ेगा और कभी न पावेगा पार जिसने आपको ध्याया उसने अन्त समय मुझे पाया जिस ने निष्कपट आपका नाम लिया तिससे मैंनेइसे चतुर्भुजकिया जिसेआपने वरदिया औरदोगे तिसकानिर्वाहमैंनेकिया औरकरूंगा महराज! इतनावचन प्रभुके मुखसे निकलतेही शिवजी दण्डवतकर बिदाहो अपनीसेनाले कैलाश कोगए और श्रीकृष्णचन्द्र वहांहीखड़ेरहे तब बाणासुर हाथजोड़ शिरनाय बिनती कर बोलाकि दीनानाथ! जैसेकि आपने कृपाकर मुझे तारा तैसा अब चलकर दासकाघर पवित्र कीजै अनिरुद्धजी और ऊषाको अपने साथ लीजे, इसबातके सुनतेही श्रीबिहारी भक्त हितकारी प्रद्युम्नजीको साथले बाणासुरके धाम पधारे महाराज! उसकाल बाणासुर अति प्रसन्न हो प्रभु को बड़ी भाव भक्ति से पाटम्बर पाँवड़े डालता लिवा ले गया, आगे—

चरण धोय चरणोदक लियौ। आचमन कर माथे पर दियौ॥

पुनि कहने लगाकि, जो चरणोदक सबको दुर्लभहै सो मैंने हरि की कृपासे पाया और जन्म२ का पाप गँवाया, यही चरणोदक त्रिभुवन को पवित्र करताहै इसीकानाम गङ्गाहै इसे ब्रह्मा ने कमण्डलुमें भरा शिवजी ने शीश पर धरा, पुनि सुर मुनि ऋषि ने माना और भगीरथ ने तीनों देवताओं की तपस्या कर संसारमें आना तब से इसका नाम भागीरथी हुआ, यह पाप मल हारिणी पवित्र कारिणी साधु सन्तोंको सुखदायिनी वैकुण्ठ की निसैनीहै और जो इसमें न्हाया उसने जन्म२ का पाप गँवाया जिसने गङ्गाजल पिया उसने निस्सन्देह परम पदलिया, जिसने भागीरथी जी का दर्शन किया उसने सारे संसार को जीतलिया महाराज! इतना कह बाणासुर अनिरुद्धजी और ऊषा को ले आया और प्रभुके सन्मुख हाथ जोड़कर बोला।

छमिये दोष भावई भई। यह मैं ऊषा दासी दई॥

यों कह वेद की रीति से बाणासुर ने कन्यादान किया और तिसके

यौतुक में बहुत कुछ दिया कि जिसका पारावार नहीं इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ब्याह के होते ही श्रीहरि वाणासुर ; आशा भरोसा दे राज गद्दी पर बैठाय पोते बहू को साथ ले बिदा हो धौंसा बजाय सब यादवों समेत वहाँ से द्वारकापुरी को पधारे इनके आने का समाचार पाय सब द्वारकावासी नगरके बाहर आय प्रभु को बाजे गाजे से लिवा लाये उसकाल पुरवासी हाट बाट चौबारा कोठों से गाय बजाय मङ्गलाचार करते थे और राज महल में रुक्मिणी आदि सब सुन्दरी बधाये गाय२रीतिभाँति करतीथीं और देवता अपने२विमानों पर बैठ ऊपरसे फूलबरषाय जय२कार करतेथे और घर बाहर सारे नगरमें आनन्द हो रहाथा कि उसीसमय सुखधाम बलराम और आनन्दकन्द श्रीहरि सबयादवों को बिदा दे अनिरुद्ध ऊषा को साथले राजमहल में जाय बिराजे।

आनी ऊषा गेह मझारी। हरषहिं देख कृष्ण की नारी॥
देय अशीष सासु उर लावें। निरख हरषि भूषण पहरावें॥

अध्याय ६५

(नृगोपाख्यान)

श्रीशुकदेवजी बाले कि महाराज इक्ष्वाकुवंशी राजा नृग बड़ा दानी धर्मात्मा और साहसी था, उसने अनगिनत गोदान किये गङ्गा के बालू

कण भादों के मेह की बूंदें, और आकाश के तारे गिने जांय पर राजा नृग के दान की गायें गिनी न जांय जो ऐसा ज्ञानी महादानी राजा जो थोड़े अधर्म से गिर गिट हो अन्धे कूए में रहा उसे श्रीकृष्ण चन्द्रजी ने मोक्ष दी इतनी कथा सुन श्रीशुकदेवजी से राजा परीक्षितने पूछा महाराज ऐसा धर्मात्मा राजा किस पापसे गिरगिट हो अन्धेकूएमें रहा और श्रीकृष्ण चन्द्रजीने कैसे उसे तारा, यहकथा तुम मुझे समझा कर कहो जो मेरे मनका सन्देह जाय श्रीशुकदेवजी बोले महाराज आप चित दे मन लगाय सुनिए मैं ज्यों की त्यों सब कथा सुनाता हूँ कि राजा नृगतो नित्यप्रति गोदान किया करतेहीथे, पर रोज प्रातः ही न्हाय सन्ध्यापूजा करके सहस धौली, घूमरी, काली, पीली, भूरी कबरी गौ मंगाय रूपे के खुर सोने के सींग तांबे की पीठ समेत पाटम्बर ओढ़ाय संकल्पी और उनके ऊपर बहुतसा अन्न, धन ब्राह्मणों को दिया वे ले अपने घर गये फिर राजा उसीतरह गोदान करने लगा, तो एक गाय पहले दिन की सङ्कल्पी अनजान आन मिली सो भी राजाने उन गायों के साथ दान करदी ब्राह्मण ले अपने घरको चला आगे दूसरे ब्राह्मण ने अपनी गौ पहिचान बाट में रोकी और कहा कि यह गाय मेरी है मुझे कल राजा के यहां से मिली है भाई तू इसे क्यों लिये जाता है। वह ब्राह्मण बोला कि इसे तो मैं अभी राजा के यहां से लेकर चला आता हूँ तेरी कहां से हुई, महाराज वे दोनों ब्राह्मण मेरी२ कर झगड़ने लगे, अन्त में झगड़ते झगड़ते वे दोनों राजा के पास गये राजा ने दोनों की बात सुन हाथ जोड़ अति विनती कर कहा ।

कोऊ लाख रुपैया लेउ । गैया यह काहू को देउ ॥

इतनीबातके सुनतेही झगड़ालू ब्राह्मण भारी क्रोधकर बोलेकि महाराज जो गाय हमने स्वस्तिबोलके ली सो करोड़ रुपये पाने सेभी हम न देंगे, वहतो हमारे प्राणके साथ है महाराज पुनि राजाने उन ब्राह्मणों के पांवोंपड़ अनेक तरह फुसलाया समझाया पर उन तामसी ब्राह्मणोंने राजाका कहना नमाना निदान महा क्रोधकर इतनी कह दोनों ब्राह्मण गाय छोड़ चले गये, कि

महाराज जो गाय आपने हमें संकल्पकर दी और हमने स्वस्तिबोल हाथ पसारली, वहगाय रुपये लेकर नहीं दी जाती, अच्छा जो तुम्हारे यहां रहीतो कुछ चिन्ता नहीं महाराज ब्राह्मणोंके जाते राजानृग पहलेतो अति उदास मनही मन कहने लगा कि यह अधर्म मुझसे अनजाने हुआ सो कैसे छूटेगा, पीछे अति दान पुण्य करनेलगा कितने एक दिन बीते राजा नृग कालवश हो मर गया, उसे यमकेगण धर्मराजके पास ले गये, धर्मराज राजाको देखते ही सिंहासनसे उठ खड़ाहुआ पुनि भावभक्तिकर आसन पर बैठाय अतिहित कर बोला महाराज तुम्हारापुण्यहैबहुत औरपापहै थोड़ा कहो पहलेक्याभुगतोगे

सुनि नृग कहत जोरि कर हाथ । मेरो धर्म टरे जगनाथ ॥
पहले हौं भुगतौंगो पाप । तन धरिके सहिहौं सन्ताप ॥

इतनी बातके सुनतेही धर्मराजने कहाकि महाराज तुमने अनजान जो दानकीहुई गाय फिर दानकी, उसी पापसे आप को गिरगिट हो बन बीच गोमतीतीर अन्धे कूएमें रहना होगा जब द्वापर के अन्त में श्रीकृष्णचन्द्र अवतार लेंगे तब तुम्हें वह मोक्ष देंगे महाराज! इतना कह धर्मराज चुपरहा और राजानृग उसी समय गिरगट हो अन्धेकूए में जा गिरा और जीव भक्षणकर वहां रहने लगा आगे कोई युग बीते द्वापर के अन्तमें श्रीकृष्ण ने अवतार लिया और ब्रजलीला कर जब द्वारिका को गये और उनके बेटे पोते भये, तब एकदिन कितने एक श्रीकृष्णजी के बेटे पोते मिल अहेरको गये और बन में अहेर करते२ प्यासे भये, तब वे बन में जल ढूँढ़ते२ उसी अन्धे कुएपर गए, जहाँ राजा नृग गिरगिट का जन्म ले रहाथा कुएमें झाँकते ही एकने पुकार के सबसे कहा, अरे भाई देखो इस कुएमें कितना बड़ा एक गिरगिट है, इतनी बातके सुनतेही सब दौड़ आये और कुँएके पनघट पर खड़े हो लगे फेंट पगड़ी मिलाय लटकाय२ उसे काढ़ने आपसमें यों कहने लगे कि भाई इसे बिन कुएंसे निकाले हमयहाँसे न जांयगे महाराज जब वह पगड़ी फेंटों की रस्सीसे न निकला, तब उन्होंने गाँवसे सनसूत मूंज चामकी मोटी२ भारी बरतें मँगवाईं और कुएमें फाँस गिरगिटको बाँध बलकर

खेंचनेलगे पर वह वहां से टकसाभी नहीं तब किसीने द्वारिका में जाय श्री हरिसे कहा महाराज बनमें अन्धे कुएके भीतर एक बड़ा भारीमोटा गिरगिट है उसे कुँवर काढ़हारे पर वहनहीं निकलता इतनी बातके सुनतेही हरिउठि धाये और चले२ वहां आये जहां सब लड़के गिरगिट निकाल रहे थे प्रभु को देखतेही सब लड़के बोलेकि पिताजी देखो यह कितना बड़ागिरगिट है यह निकलता नहीं,महाराज इस वचनको सुन श्रीकृष्णजीने कुएमें उतर उसके शरीरमें चरण लगाया तो वह देह छोड़ अति सुन्दर पुरुष हुआ।

भूपति रूप रह्यौ गहि पाय। हाथजोड़ विनवै शिरनाय।

कृपासिन्धु आपने बड़ीकृपाकी जो इस महाविपतिमें आय मेरीसुध ली श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा जब वह मनुष्य रूपहो प्रभु से इस भाँति की बातें करने लगा, तब यादवोंके बालक और हरिके बेटे पोते अचरज कर श्रीकृष्णचन्द्रसे पूछने लगे कि महाराज यह कौनहै और किस पाप से गिर-गिट हो यहां रहा था सो कृपाकर कहो तो हमारे मन का सन्देह जाय उसकाल प्रभु आप कुछ न कह, राजा से बोले—

अपनो भेद कहौ समुझाय। जैसे सबै सुनें मन लाय॥
कोहौ आप कहां ते आये। कौन पाप यह काया पाये॥
सुनि नृग कह जोरि दोऊहाथ। तुम सब जानतहौ यदुनाथ॥

उसपर आप पूछते हो तो कहता हूँ मेरा नाम है राजा नृग मैंने अनगिनत गौ ब्राह्मणों को आप के निमित्त दीं एकदिन की बात है कि मैंने कितनी एक गाय संकल्प कर ब्राह्मणों को दीं दूसरे दिन उन गायों में से एक गाय फिर आई सो मैंने और गायों के साथ अनजाने दूसरे दिन द्विज को दान करदी, जो वह लेकर निकला तो पहले ब्राह्मण ने गौ पहचान उससे कहा यह गाय मेरी है मुझे कल राजा के यहां से मिली है,तू क्यों लिये जाता है, वह बोला मैं अभी राजा के यहां से लिये चला आता हूँ, तेरी कैसे हुई, वे दोनों विप्र इसी बात पर झगड़ते२ मेरे पास आये मैंने उन्हें समझाया और कहा कि एक गाय के पलटे मुझसे लाख

गौ लो और तुम में से कोई यह छोड़ दो महाराज मेरा कहा हठ कर दोनों ने न माना निदान गौछोड़ क्रोधकर दोनों चले गये मैं पछताय२ मन मार बैठ रहा अन्त समय यमके दूत मुझे धर्मराज के पास लेगए धर्मराजने मुझ से पूछा कि राजा तेरा धर्म है बहुत पापहै थोड़ा कहो पहले क्या भुगतोगे मैंनेकहा पाप इसबातके सुनतेही महाराज धर्मराज बोलेकि राजा तैंने ब्राह्मण की दीनी हुई गाय फिर दानकी इस अधर्मसे तू गिरगिट ह्वै पृथ्वी पर जाय गोमती तीर बनके बीच अन्धे कूपमें रह जब द्वापरके अन्तमें श्रीकृष्ण अवतार ले तेरे पास आवेंगे तब तेरा उद्धार होगा महाराज तभीसे मैं सरटरूप इस अन्ध कूप में पड़ा आपके चरण कमलों का ध्यान करताथा अब आय आपने मुझे महा कष्ट मे उद्धारा और भव सागर से पार उतारा,इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज इतना कह राजा नृग तो बिदा हो विमान में बैठ वैकुण्ठ को गया और श्रीकृष्णचन्द्रजी सब बाल गोपालों को समझाय के कहने लगे कि—

विप्र दोष जनि कोऊ करौ। मत कोऊ अंश विप्र को हरौ॥
मन सङ्कल्प कियो जिन राखौं। सत्य वचन विप्रनसों भाखौं॥
विप्रहिं दियौ फेर जो लेहीं। ताकौ दण्ड इतो यम देहीं॥
विप्रन के सेवक हो रहियो। सब अपराध विप्र के सहियो॥
विप्रहिं माने सो मोहि माने। विप्रन अरुमोहि भिन्न न जाने॥

जो मुझ में और ब्राह्मण में भेद जानेगा सो नरक में पड़ेगा और जो विप्र को मानेगा वह मुझे पावेगा और निस्सन्देह परम धाम में जावेगा महाराज यह बात कह श्रीकृष्णजी सबको वहांसे ले द्वारिकापुरी पधारे।

अध्याय ६६

(बलराम वृन्दावन गमन)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज एक समय आनन्दकन्दश्रीकृष्णचन्द्र और बलराम सुखधाम मणिमय मन्दिर में बैठे थे कि बलदेवजीने प्रभु से कहा भाई जब वृन्दावन में कंस ने बुला भेजाथा और हम मथुरा को चले गये थे तब गोपियों और नन्द यशोदा से हमने तुमने उनसे यह

वचन दिया था कि हम शीघ्र ही आय मिलेंगे सो वहां न जाय द्वारिका में आय बसे वे हमारी सुरत करते होंगे जो आप आज्ञा करें तो हम जन्म भूमि देख आवें और उनका समाधान कर आवें प्रभु बोले कि अच्छा इतनी बातके सुनतेही बलरामजी सबसे बिदा हो हल मूसल ले रथ पर चढ़ सिधारे, महाराज बलरामजी जिस पुर नगर गाँव में जाते थे वहां के राजा आगे बढ़ अतिआदरकर इन्हें ले जातेथे और ये एक२ का समाधान करते जाते थे कितने एक रोजमें चलते२बलरामजी अवन्तिकापुरी पहुँचे।

विद्यागुरु को कियो प्रणाम । दिन दश तहां रहे बलराम॥

आगे गुरुसे बिदा हो बलदेवजी चले२ गोकुलमें पधारे तोदेखते क्या हैं कि बनमें चारोंओर गायें मुँह बाये बिन तृण खाये श्रीकृष्णचन्द्रजी की सुरति किये बांसुरीकी तानमें मन दिये रँभाती हाँफती फिरती हैं तिनके पीछे २ ग्वालबाल भी यश गाते प्रेमरंगराते चले जाते हैं और जिधर तिधर नगर निवासी लोग प्रभु के चरित्र और लीला बखान रहे हैं महाराज जन्म भूमि में जाय ब्रजवासियों और गायों की यह अवस्था देख बलरामजी करुणाकर नयनों में नीर भरलाये आगे रथकी ध्वजा पताका देख श्रीकृष्ण चन्द्र और बलरामजी का आना जान सब ग्वालबाल दौड़ आए बल्देवजी आतेही लगे एक२के गले लग बड़े प्रेमसे, कुशलक्षेम पूछने, किसी ने जा

नन्द यशोदा से कहा कि बलदेवजी आये, यह समाचार पातेही नन्द यशोदा और बड़े बड़े गोप और ग्वाल उठ धाये उन्हें दूरसे आते देख बलरामजी दौड़कर नन्दराय के पांवों पर जाय गिरे तब नन्दजी ने अति आनन्दकर नयनों में जलभर बड़े प्यारसे बलरामजी को उठाय कण्ठ से लगाया और वियोग का दुख गमाया पुनि प्रभु ने—

गहे चरण यशुमति के जाय। अतिहितकर उर लिये लगाय ॥
भुज भरि भेट कण्ठ गहि रही। लोचन ते जल सरिता बही ॥

इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजीने राजासे कहाकि महाराज ऐसे मिलजुल नन्दरायजी बलरामजी को घरमें लेजाय कुशलक्षेम पूछने लगे कि कहो उग्रसेन बसुदेव आदि यादव और श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द से हैं हमारी भी सुरत करते हैं, बलरामजी बोले आपकी कृपासे सब आनन्द मङ्गल सेहैं और सदा सर्वदा आपका गुण गाते रहते हैं इतना वचन सुन नन्दराय चुप रहे पुनि यशोदा रानी श्रीकृष्णजीकी यादकर लोचनों में नीरभर अतिव्याकुल हो बोलीं कि बलदेवजी हमारे प्यारे नयनों के तारे श्रीकृष्णजी अच्छे हैं! बलरामजी ने कहा बहुत अच्छे हैं पुनि नंदरानी कहनेलगीं बलदेव जब से हरि यहां से सिधारे तब से हमारी आंखोंके सामने अँधेरा हो रहाहै हम आठ पहर उन्हीं का ध्यान किये रहती हैं और वे हमारी सुरत भुलाय द्वारिका में जाय रहे और देखो बहन देवकी रोहिणी हमारी प्रीति छोड़ कर वहां ही बैठी हैं

मथुरा ते गोकुल ढिग जान्यौ। बसीं दूर तबही मन मान्यौ ॥
भेटत मिलत न आवत हरी। फिर न मिले ऐसी उन करी ॥

महाराज इतना कह जब यशोदारानी अतिव्याकुल हो रोने लगीं तब बलरामजी ने समझाय बहुत आशा भरोसा दे उनको धीरज बँधाय पुनि आप भोजन कर पान खाय घरसे बाहर निकले तो देखते हैं कि सब ब्रज, युवतियां तनछीन मनमलीन छूटेकेश मैले वेश जीहारे घरबार की सुरत बिसारे प्रेमरङ्ग राती, योवन मद माती हरिगुण गाती, विरह में ब्याकुल जिधर तिधर मत्तवत चली जाती हैं महाराज बलराम जी को देखते ही

अति प्रसन्न हो सब दौड़ी आईं और दण्डवत कर हाथ जोड़ चारों ओर खड़ी हो लगीं पूछने और कहने कि कहो बलराम सुखधाम अब कहाँ विराजते हैं हमारे प्राण सुन्दर श्याम कभी हमारी याद करते हैं बिहारी कै राजपाट पाय पिछली प्रीति सब बिसारी, जबसे यहांसे हरि गये हैं तब से एक बार उद्धव के हाथ योग का सन्देसा कह पठाया फिर किसीकी सुध न ली अब जाय समुद्रमांहि बसे तो काहे को किसी की सुध लेंगे इतनी बातके सुनतेही एक गोपी बोल उठी कि सखी हरिकी प्रीति का कौन कौन करे परेखा उनका तो देखा सब से यही लेखा ।

ये काहू को नाहिंन ईठ। मात पिता को जिन दई पीठ॥
राधाबिन रहते नहिं घरी। सोऊ है बरसाने परी॥

पुनि हम तुमने घरबार छोड़, कुलकान लोकलाज तज, सुतपति त्याग हरिसे नेह लगाय क्या फलपाया! निदान स्नेह की नाव चढ़ा विरह समुद्र माँझ छोड़गये, अब सुनती हैं कि द्वारिकामें जाय प्रभुने बहुत ब्याह किये. और सोलह सहस्र एकसौ राजकन्या भौमासुर ने घेर रक्खी थीं तिन्हें भी कृष्ण ने लाय ब्याहीं अब उनसेभी बेटे पोते नाती भये उन्हेंछोड़ यहां क्यों आवेंगे यह बात सुन एक और गोपी बोली कि सखी तुम हरिकी बातोंका कुछ पछितावाही मतकरो क्योंकि उनके सबगुण उद्धवजी ने आपही बताये थे इतनी कह पुनि बोली कि आली मेरी बात मानो तो अब—

हलधरजी के परसो पाय। रहिहैं इनहीं के गुण गाय॥
ये है गौर श्याम नहिं गात। करिहैं नाहिं कपट की बात॥
पुनि सङ्कर्षण उत्तर दियो। तुम्हरे हेतु गवन हम कियो॥
आवन हम तुमसों कहिगये। ताते कृष्ण पठै ब्रज दये॥
रहि द्वै मास करेंगे रास। पुरवेंगे सब तुम्हरी आस॥

महाराज बलरामजीने इतनाकह सब ब्रज युवतियोंको आज्ञादी कि,आज मधुमासकी रातहै तुमशृङ्गारकर बनमें आओ तुम्हारे साथ रास करेंगे यह कह बलरामजी सांझसमय बनको सिधारे.तिनके पीछे सब ब्रज युवतियाँ भी सुथरे वस्त्र आभूषण पहन नखशिखसे शृंगारकर बलदेवजी के पास पहुँचीं।

ठाढ़ी भईं सबै शिरनाय। हलधर छवि बरणी नहिंजाय॥
कनक बरण,नीलाम्बर धारै। शशिमुख कमल नयनमनहारै॥
कुण्डल एकश्रवण छविछाजै। मनो भानु शशि संग विराजै॥
एक श्रवण हरि यश रसपान। दूजो कुण्डल धरत न कान॥
अंग अंग प्रति भूषण घने। तिनकी शोभा कहत न बने॥
योंकह पांयन परीं सुन्दरी। लीला रास करो रस भरी॥

महाराज इतनी बातके सुनतेही बलरामजीने हूँ किया, हूँकार करते ही रासकी सब वस्तु आय उपस्थितहुई तबतो सब गोपियाँ सोचसंकोच तज अनुराग कर बीणा, मृदंग करताल, उपंग, मुरली आदि सबयन्त्र लेले लगीं बजानेगाने और थेई२ कर नाच२ भाव बताय२प्रभु को रिझाने उनका बजाना गाना नाचनोसुन देख मग्नहो वारुणी पानकर बलदेवजी सबके साथमिल गाने नाचने और अनेक२ भाँतिके कुतहलकर सुखदेने लेने लगे उसकाल देवता गन्धर्व, यक्ष किन्नर अपनी२ स्त्रियों समेत आय२ विमान पर बैठ प्रभुगुण गाय२ अधरसे फूल बरसातेथे चन्द्रमा तारा मंडल समेत रास-मंडलीका सुख देख२किरणोंसे अमृत बरसाताथा और पवन भी थमरहा था इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज इसभाँति बलराम जीने ब्रजमेंरह चैत्रवैशाख दोमहिने रात्रिको तो ब्रजयुवतियों के साथ रास विलासकिया और दिनको हरिकथासुनाय नंद यसोदाको सुखदिया उसी में एकदिन रात्रिसमय रास करते२ बलरामजी ने जो–

नदी तीर करके विश्राम। बोले तहां कोपके राम॥
यमुनातू इतही बहि आव। सहस धार करमोहि अन्हाव॥
जो नमानिहौ कहौ हमारौ। खण्ड खण्ड जल करोंतिहारौ॥

महाराज जब बलरामजी की बातें अभिमानकर यमुनाने अनसुनी कीं तबतो इन्होंने कोधकरउसे हलसेखींचली और स्नान किया, उसी दिनसे वहाँ यमुना अबतक टेढ़ीहै आगे न्हाय श्रम मिटाय बलरामजी सब गोपियों को सुखदे साथले बनसे चले और नगरमें आये तहाँ।

गोपी कहैं सुनौ ब्रज नाथ। हमहूको लेचलियो साथ॥

यह बातसुन बलरामजी गोपियों को आशाभरोसादे धीरज बँधाय बिदा कर बिदाहो नंदयशोदा के पास गये पुनि उन्हेंभी समझाय बुझाय धीरज बँधाय कई दिनरह बिदा हो द्वारिका को चले और कई दिनों में जापहुंचे।

अध्याय ६७

(पौण्ड्रक वध)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज काशीपुरीमें एक पौंड्रकनाम राजा सो महाबली प्रतापीथा तिसने विष्णुका वेषकिया और छलबलकर सबका मन हरलिया सदा पीतवसन, बैजन्तीमाल, मुक्तमाल, मणिमाल, पहने रहै और शंख, गदा, पद्म, लिये दोहाथ काष्ठके किये एक घोड़ेपर काष्ठही का गरुड़ धरे उसपर चढ़ा डोले वह वासुदेव पौंड्रक कहावै और सबसे आपको पुजावै जो राजा उसकी आज्ञानमाने उसपर चढ़जाय फिर मार उजाड़ उसे अपने वशमें रक्खे इतनी कथाकहश्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा उसका यह आचरण देख सुन देश२ नगर२ गाँव२ घर२ में लोग चर्चा करने लगेकि वासुदेव तो व्रजभूमिके बीच यदुकुलमें प्रकट हुएथे, सो द्वारिकापुरी में बिराजते हैं. अब काशीमें हुआहै,दोनोंमें हम किसेसच्चाजानें और मानें, देश२में यहचर्चा होरहीथीकि, कुछ संधान पाय वासुदेव पौंड्रक एकदिन सभामें आय बोला-

कोहै कृष्ण द्वारिका रहै । वाको वासुदेव जग कहै ॥
भक्त हेतु भू हौं औतरौ । मेरो वेष तहाँ तिन धरौ ॥

इतनी बात कह एक दूत को बुलाय उसने ऊँच नीच की बातें सब समझाय बुझाय पुरी द्वारिका में श्रीकृष्णचन्द्रजी के पास भेज दिया कि या तो जो मेरा भेष बनाये फिरते हो सो छोड़ दो नहीं तो लड़ने का विचार करो. आज्ञा पाते ही दूत बिदा हो काशी से चला२ द्वारिकापुरी में पहुँचा और श्रीकृष्णजी की सभा में जा उपस्थित हुआ प्रभु ने उससे पूछा कि तू कौन और कहां से आया है वह बोला मैं वासुदेव पौण्ड्रकका दूत हूँ काशीपुरी से स्वामी का पठाया कुछ सन्देशा कहने आपके पास आया हूँ सो कहता हूँ श्रीकृष्णचन्द्र बोले अच्छा कह प्रभु के मुख से यह वचन

निकलते ही दूत खड़ा हो हाथ जोड़ कहने लगा कि महाराज ! वासुदेव पौंड्रक ने कहा है कि त्रिभुवनपति जगतका कर्ता मैंहूं तू कौनहै जो मेरा वेष बनाये जरासंध के डर से भाग द्वारिका में आय रहा है कैतो मेरा बाना छोड़ शीघ्र मेरी शरणागत हो नहीं तो तेरे सब यदुबंशियों समेत तुझे मारूंगा औ भूमिका भार उतार अपने भक्तों को पालूंगा, मैं हूं अलख अगोचर निराकार, मेरा जप, तपयज्ञ दान करते हैं सुरनर मुनि ऋषि बार बार मैं ही ब्रह्मा हो बनाता हूं विष्णु हो पालता हूं शिव हो संहारता हूं मैंने ही मच्छ रूप हो वेद डूबते निकाले कच्छरूप हो गिरधारण किया, बाराह बन भूमि को रखलिया, नृसिंह अवतारले हिरण्यकश्यप का बध किया,

वामन अवतारले बलिको छला, रामअवतारले दुष्ट रावण को मारा, मेरा यही काम है कि जब २ असुर मेरे भक्तोंको आय सताते हैं तब तब म अवतारले भूमिका भार उतारता हूं।

इतनी कथा कह श्री शुकदेवजी ने राजापरीक्षितसे कहाकि महाराज ! बासुदेव पौंड्रक का दूततो इस ढबकी बात करता और श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द रत्नसिंहासन पर बैठे यादवों की सभा में हँस हँस कर सुनते थे कि इस बीच कोई यदुवंशी बोल उठा—

तोय कहा यम आयौ लैन। भाषत तू जोऐमे बैन॥
मरैं कहा तोय हम नीच। आयो है कपटी के बीच॥

जोतू वसीठ न होता तो बिन मारे न छोड़ते दूत को मारना उचित नहीं महाराज जब यदुवंशी ने यह बात कही, तब श्रीकृष्णजी ने उस दूत को निकट बुलाय समझाय बुझाय के कहाकि, तूजाय अपने बासुदेवसेकह कि कृष्ण ने कहा है कि, मैं तेरा बाना छोड़ शरण आता हूँ सावधान हो इतनी बात के सुनतेही दूत दण्डवत कर बिदा हुआ और श्रीकृष्णजीभी अपनी सेनाले काशीपुरी को सिधारे दूतनेजाय बासुदेव पौंड्रक से कहा कि महाराज मैंने द्वारिका में जाय आपका कहा सन्देश सब कृष्णको सुनाया उन्होंने सुनकर कहाकि तू अपने स्वामी से जाय कहै कि सावधान रहै मैं उसका बाना छोड़ शरण लेने आता हूँ, बसीठ यह बात कहता ही था कि किसीने आय कहा महाराज! आप निश्चिन्त क्या बैठे हो श्रीकृष्णजी अपनी सेना ले चढ़ आये इतनी बातके सुनते ही बासुदेव पौण्ड्रक उसी वेष से अपना सब कटक ले चढ़ आया और चला२ श्रीकृष्णचन्द्रजी के सम्मुख आयातिस के साथ एक और भी काशीका राजा चढ़ दौड़ा दोनों ओर दल तुलकर खड़े हुये, जुझाऊ बाजे बजने लगे शूरवीर रावत लड़ने और कायर खेत छोड़२ अपना जीवले ले भागने, उसकाल युद्ध करता २ काल बसहो बासुदेव पौंड्रक इस भाँति श्रीकृष्णजी के सन्मुख जाकर ललकारा, उसे विष्णु वेष से देख सब यदुबंशियों ने श्रीकृष्णचन्द्र से पूछा कि, महाराज! इस वेष से कैसे मारोगे, प्रभु ने कहा कपटी के मारने का कुछ दोष नहीं, इतना कह हरि ने सुदर्शन चक्र को आज्ञादी उसनेजातेही जोदो भुजा काष्ठकी थीं सोउखाड़लीं उसकेसाथ गरुड़ भी टूटा और तुरंग भागा, जब वासुदेव पौंड्रक नीचे गिरा तबसुदर्शन ने उसकाशिर काट फेंका।

कटत शीश नृप पौंड्रक मरौ। शीश जाय काशी में परौ॥
जहाँ हतो ताको रनिवासु। देखत शीश सुन्दरी तासु॥
रोवें यों कह खेंचें स्वास। यह गति कहा भई करतार॥
तुम तो अजर अमर है गये। कैसे प्राण पलक में गये॥

महाराज! रानियोंका रोना सुन सुदक्षिणनाम उसका बेटा था सो वहाँ आय बाप का शिर कटा देख अतिक्रोधकर कहने लगाकिजिसने मेरेपिताको

मारा है उससे बिना पलटा लिये न रहूँगा इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजीबोले कि महाराज ! वासुदेव पौण्ड्रकको मार श्रीकृष्णचन्द्रजी अपना सब कटकले द्वारिकापुरी को सिधारे और उसकाबेटा अपने बापका बैर लेनेको महादेव जीकी अति कठिन तपस्या करने लगा, इसमें कितने एक दिनमें प्रसन्नहो महादेवजी भोलानाथने आय कहाकि वर माँग यह बोला महाराज ! मुझे यह वर दीजै कि श्रीकृष्णसे अपने पिताका बैरलूं शिवजी बोलेकि अच्छा जो तू बैर लिया चाहताहै तो यह काम कर वहबोला क्या ? कहा उलटेवेद मन्त्रोंसे यज्ञकर इससे एकराक्षसी अग्निसे निकलेगी उससे जो तू कहैगासो करेगी इतना वचन शिवजी के मुख से सुन महाराज वह जाय ब्राह्मणोंको बुलाय वेदी रच तिल यव घी चीनी आदि सामानले शाकल्य बनाय लगा उलटे वेद मन्त्र पढ़२ होम करने निदान यज्ञकरते २ अग्निकुण्डसे कृत्या नाम राक्षसी निकली सोश्रीकृष्णजीके पीछे ही पीछे नगर देश गांव जलाती द्वारिका पुरी पहुंची और लगी पुरीको जलाने नगरको जलतादेख सब यदुवंशी भय खाय श्रीकृष्णचन्द्रजीके पास जा पुकारेकि महाराज इस आग से कैसे बचेंगे यहता सारे नगर को जलाती चली आती है प्रभु बोलेकि तुम किसी बातकी चिंता मत करो यह कृत्या नाम राक्षसी काशी से आई है मैं अभी इसका उपाय करता हूँ महाराज इतनाकह श्रीकृष्णजीने सुदर्शन चक्रको आज्ञा दी कि इसे मार भगाव और इसी समय जाय काशीपुरी को जलाय आव हरिकी आज्ञा पाते ही सुदर्शन चक्र ने कृत्या को मार भगाया और बातके कहतेही काशीको जलाया ।

परजा भागी फिरै दुखारी । गारी देहि सुदक्षिहि भारी ॥
फिरो चक्र शिव पुरी जलाय । सोई कही कृष्ण सों जाय ॥

अध्याय ६८

(द्विविदकपि वध)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज जैसेबलरामसुखधाम रूपनिधानने द्विविद कपि को मारा तैसेही मैं कथा कहताहूँ तुम चित्तदेसुनो एकदिन द्विविद जो

सुग्रीवका मन्त्री और मयन्द कपिका भाई व भौमासुरका सखाथा सोकहने लगाकिएक शूल मेरे मनमेंहै सो अबतक खटकताहै, यहबात सुन किसीने पूछाकि महाराज सो क्या वह बोलाकि जिसने मेरे मित्र भौमासुर को मारा तिसे मारूं तो मेरे मनका दुःख जाय महाराज इतना कह उसी समय अति

क्रोध कर द्वारिकापुरी को चला श्रीकृष्णचन्द्र का देश उजाड़ता, और लोगों को दुःख देता किसी को पानी बरसाय बहाया किसी को आग बरसाय जलाया, किसी को पहाड़ पर पटका, किसी पर पहाड़ दे पटका, किसी को समुद्र में डुबाया, किसी को पकड़ बांध गुफा में छिपाया. किसी का पेट फाड़ डाला, किसी पर वृक्ष उखाड़ मारा इसी रीति से लोगों को सताता जाता था, और जहाँ ऋषि मुनि देवताओं को बैठे पाता था तहाँ गू मूत, रुधिर बरसाता था निदान इसी भाँति लोगों को दुख देता और उपाधि करता द्वारिकापुरी में जा पहुँचा और अल्प तनुधार श्रीकृष्ण के मन्दिर पर जा बैठा उसको देख सब सुन्दरी मन्दिर के भीतर किवाड़ दे दे जाय छिपीं तब तो वह मन ही मन विचार कर बलरामजी के समाचार पाय रेवती गिरि पर गया।

पहले हलधर को बध करों। पीछे प्राण कृष्ण के हरों॥

जहाँ बलदेव जी स्त्रियों के साथ बिहार करते थे महाराज छिपकर वह यहाँ क्या देखता है बलरामजी सब स्त्रियों को साथ ले एक सरोवर के

बीच अनेक२ भाँति की लीला कर गाय२ न्हाय न्हिलाय रहे हैं, यह चरित्र देख द्विविद एक पेड़ पर जाय चढ़ा और किलकारियां मार२ घुरक२ लगा डाल२ कूद२ फिर२ चरित्र करने और जहां मदिराका भरा कलश और सब के चीर धरे थे तिन पर लगा हगने मूतने. बन्दर को सब सुन्दरी देखते ही डरकर पुकारीं कि महाराज यह कपि कहां से आया जो हमें डरपा२ हमारे वस्त्रों पर हग मूत रहा है इतनी बात के सुनते ही बलदेव जी सरोवर से निकले जो हँस के ढेल चलाया तो वह इनको मतवाला जान महा क्रोध कर किलकारी मार नीचे आया आते ही उसने मद का भरा घड़ा जो तीर पर धरा था सो लुढ़ाय दिया और सारे चीर फाड़ टूक२ कर डाले तबतो क्रोधकर बलरामजी ने हल मूसल सँभाला और वह भी पर्वत सम हो प्रभु के सोंही युद्ध करने को जाय उपस्थित हुआ इधर से वह मूसल चलाते थे और उधर से वह पेड़ पर्वत।

महायुद्ध दोऊ मिल करैं। नेक न दोऊ ठौर ते टरैं॥

महाराज ये दोनों बली अनेक२ प्रकार घातकर निधड़क लड़ते थे पर देखने वालों का मारे भय के प्राण ही निकलता था, निदान प्रभु ने सब को दुखित जान द्विविद को मार गिराया उसके मरतेही सुर नर मुनि सबके जी को आनन्द हुआ और दुख छूट गया.

फूले देव पुष्प बरसावें। जय जय कार हलधरहिं सुनावें

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज त्रेतायुग से यह बन्दर ही था तिसे बलदेव जीने मार उद्धार किया, आगे बलराम सुखधाम सबको साथ ले वहां से सुख पूवक श्री द्वारिकापुरी में आये और द्विविद के मारने के समाचार सब यदु वंशियों को कह सुनाये।

अध्याय ६६

(साम्बविवाह).

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा अब मैं दुर्योधनकी बेटी लक्ष्मणा के

विवाहकी कथा कहता हूँ कि जैसे शांब हस्तिनापुर जाय उसे ब्याह लाये, महाराज राजा दुर्योधनकी पुत्री लक्ष्मणा जब ब्याहने योग्य हुई तब उसके पिता ने सब देश के नरेशों को पत्र लिख२ कर बुलाया और स्वयम्बर किया, स्वयम्बर के समाचार पाय श्रीकृष्णचन्द्र का पुत्र जो जाम्बवती से सांब नाम था वह भी वहां पहुँचा, वहां जाय सांब क्या देखता है कि देश देश के नरेश बलवान गुणवान रूप निधान महा सुजान

सुथरे वस्त्र आभूषण रत्न जटित पहने अस्त्र शस्त्र बांधे, मौन साधे, स्वयम्वर के बीच पांति२ खड़े हैं और उनके पीछे उसी भांति सब कौरव भी, जहां तहां बाहर बाजने बाज रहे हैं भीतर मङ्गली लोग मङ्गलाचार कर रहे हैं सबके बीच राजकुमारी माता पिताकी प्यारी मन ही मन यों कहती हारलिये आँखों की पुतलीसी फिरती है कि मैं किसे वरूं महाराज जब यह सुन्दरी शीलवंती रूपवती माला लिये लाज किये फिरती२ सांब के सन्मुख आई तब इन्होंने शोच संकोच तज निर्भय हो उसे हाथ पकड़ रथमें बैठाय अपनी बाट ली, सब राजा खड़े मुँह देखते रह गये और कर्ण, द्रोण, शल्य भूरि-श्रवा, दुर्योधन आदि सारे कौरव भी उस समय कुछ न बोले पुनि अतिक्रोध कर आपस में कहने लगे कि देखो उसने क्या काम कियाकि जो रस में आय के अनरस किया, कर्ण बोला यदुवंशियों की सदा की टेवहै कि जहां कहीं शुभ काजमें जाते हैं तहां उपाधि ही करते हैं ।

अति हीन अब ही ये बढ़े। राज्य पाय माथे पर चढ़े ॥

इतनी बातके सुनते ही सब कौरव महाक्रोध कर अपने२ अस्त्र ले यों कह चढ़ दौड़े कि देखें वह कैसा बली है, जो हमारे आगे से कन्या लेनिकल जायगा और बीच बाट के साँब को जाघेरा आगे दोनों ओर से अस्त्र शस्त्र चलने लगे, निदान कितनी एक बेर के लड़ने में साँब का सारथी मारा गया और वह नीचे उतरा तब ये उसे धरपकड़कर बाँधके लाये व सभा के बीचों बीच खड़ा कर यों इन्होंने इससे पूछा कि अब तेरा पराक्रम कहाँ गया यहबात सुन वह लजाय रहा इसमें नारदजी ने आय राजा दुर्योधन समेत सब कौरवोंसे कहाकि, यह साँब नामका श्रीकृष्णचन्द्र का पुत्र है तुम इसे कुछ मत कहोजो होना था सोहुआ अभी इसका समाचार पाय दल साज आवेंगे कृष्ण बलराम जो कहना सुननाहो उनसे कहसुन लीजो लड़केसे बात कहना तुम्हें किसी भाँति उचित नहीं, इसने लड़कबुद्धिकी तो की महाराज इतना वचन कह नारद जी वहाँ से बिदा हो द्वारिकापुरी को गये और राजा उग्रसेन की सभा में जा खडे भये।

देखत सबै उठे शिर नाय। आसन दियौ ततक्षण लाय ॥

बैठतेही नारदजी बोलेकि, महाराज! कौरवोंने साँबको बाँध महा दुख दिया और देते हैं जो इस समय जाय इसकी शीघ्र सुधलो तो ठीक नहीं तो फिर साँब का बचना कठिन है।

गर्व भयौ कौरव को भारी। लाज सकुच नहीं करी तुम्हारी ॥
बालक को उन बांध्यौ ऐसे। शत्रु को बाँधे कोऊ जैसे ॥

इस बातके सुनतेही राजा उग्रसेनने अतिकोपकर यदुबंशियोंको बुलायके कहा कि तुम अभी हमारा कटक ले हस्तिनापुर चढ़ जावो और कौरवों को मार साँबको छुड़ा लेआवो, राजाकी आज्ञा पातेही ज्यों सब दल चलनेको उपस्थित हुआ त्यों बलरामजीने जाय राजा उग्रसेन से समझायकर कहाकि महाराज! आप उनपर सेना न पठाइये मुझे आज्ञा कीजे मैं जाय उन्हें उलाहनादे, साँब को छुड़ालाऊँ देखूं उन्होंने किसलिये साँब को पकड़ बाँधा इस बात का भेद बिन मेरे गये न खुलेगा इतनी बातके सुनते ही राजा उग्रसेन

ने बलरामजीको हस्तिनापुर जानेकि आज्ञादी और बलदेव कितने एकबड़े बड़े पण्डित ब्राह्मण और नारद मुनि को साथ ले द्वारिका से चले चले हस्तिनापुर पहुँचे उस समय प्रभु ने नगर के बाहर बाड़ी में डेराकर नारदजी से कहाकि, महाराज हम यहां उतरे हैं आप जाय कौरवों से हमारे आने का समाचार कहियो प्रभु की आज्ञा पाय नारद जी ने नगरमें जाय बलरामजी के आने का समाचार सुनाया ।

सुनिके सावधान सब भये । आगे होय लैन तहं गये ॥
भीष्म द्रोण कर्ण मिल चले । लीन्हे बसन पटम्बर भले ॥
दुर्योधन यों कहकर धायौ । मेरो गुरु संकर्षण आयो ॥

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा से कहा कि, महाराज ! सब कौरवोंने उसबाड़ी में जाय बलरामजी से भेंटकर भेंटदी और पाँवोंपड़हाथजोड़ बहुत स्तुतिकी आगे चोवाचन्दनलगाय फूलमाला पहिराय पाटम्बरके पांवड़ेबिछाय बाजेगाजेसे नगरमें लिवायलाये पुनि षटरसभोजनकरवाय पास बैठायसबकी कुशल क्षेमपूछपूंछाकिमहाराज आपकाआनाकहो कैसेहुआ! ऐसीउनके मुखसे यहबात निकलतेहीबलरामजीबोलेकिमहाराज उग्रसेनके पठाये सन्देशा कहने तुम्हारे पास आये हैं कौरव बोले कहो,बलदेवजीने कहाकि राजाजीनेकहा है कि तुम्हें हमसे विरोध करना उचित न था ।

तुमहो बहुत सो बालक एक । कियो युद्ध तज ज्ञान विवेक ॥
महा अधर्म जानि के कियौ । लोक लाज तज सुत गहलियौ ॥
ऐसो गर्व तुम्हें अब भयौ । समझ बूझि ताको दुख दयौ ॥

महाराज इतनी बातके सुनतेही कौरव महाकोपकरबोलेकि बलरामजी बसकरो बसकरो अधिक बड़ाई उग्रसेनकी मत करो हमसे यहबात सुनीनहीं जाती चार दिन की बात हैकि उग्रसेनको कोई जानता मानता न था जब से हमारे यहाँ सगाई की तभी से प्रभुता पाई अब हमीसे अभिमानकी बात करपठाई, उसे लाज नहीं आती जो द्वारिकापुरीमें बैठाराज्य पाय पिछली सब बात गंवाय जो मन मानता है सोकहताहै वहदिन भूलगयाकि मथुरामें ग्वालगूजरोंके साथ रहता खाताथा जैसा हमने साथ खिलाय सम्बन्धकर राज्यदिलवाया तिसकाफल हाथों हाथ पाया जोकिसी पूरेपर गुणकरते तो

वह जन्म भर हमारा गुण मानता किसी ने सच कहा है कि, ओछों की प्रीति, बालूकी भीति समानहै,इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ऐसे अनेक२ प्रकारकी बातेंकह, कर्ण,द्रोण,भीष्म, दुर्योधन,शल्यआदि सब कौरव गर्वकर उठ२ अपने घर गये और बलरामजी उनकी बातसुन२ हंसि२ वहीं बैठे मनहीमन योंकहतेरहे कि इनको राज्यऔर बलका गर्व भयाहै जो ऐसी२ बात करते हैं नहीं तो ब्रह्मा, रुद्र,इन्द्र ईश जिसे नबावेंशीश तिस उग्रसेनकी ये निन्दा करें तो मेरानाम बलदेव,जो सबकौरवोंको नगर समेत गङ्गामें डुबाऊं नहींतो नहीं महाराज इतना कह बलदेवजी अति क्रोधकर सब कौरवों को नगर, समेत हलसे खेंच गङ्गातीर पर लेगये और चाहें कि डुबायें त्योंही अति घबराय भयपाय सबकौरव आय हाथ जोड़ शिरनाय गिड़गिड़ाय बिनतीकर बोलेकि महाराज हमारा अपराध क्षमाकीजै हम आपकी शरण आए,अब बचाय लीजै जो कहोगे सो करेंगे सदा राजाउग्रसेन की आज्ञामें रहेंगे, राजा इतनी बातकेसुनतेही बलरामजीकाक्रोध शांतहुआ औरजो हलसेखेंच नगर गङ्गातीर पर लायेथे सो वहीं रक्खा तिसी दिन से हस्तिनापुर गङ्गातीर परहै पहले वहां न था आगे उन्होंने सांबको छोड़ दिया और राजा दुर्योधननेबिधि से साँब को कन्यादान किया और उसके यौतुक में बहुत कुछ संकल्प किया इतनी कथा कह श्रीशुकदेव ने कहा महाराज ऐसे बलराम जी हस्तिनापुरी जाय, कौरवों का गर्व गँवाय भतीजे को छुड़ाय ब्याह लाये, उसकाल सारी द्वारिकापुरी में आनन्द होगया और बलदेवजी ने हस्तिनापुरका सर्व समाचार ब्यौरा समेत समझाय राजा उग्रसेन के पास जा कहा।

अध्याय ७०

नारदमायादर्शन

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज एकसमय नारदजी के मन में आई कि श्रीकृष्णचन्द्र सोलह सहस्र एकसौआठ स्त्री ले कैसे गृहस्थाश्रम करतेहैं सो चल कर देखना चाहिये, इतना विचार चले२ द्वारिकापुरी में आये तो नगर के बाहर क्या देखते हैंकि कहीं बाड़ियोंसे नानाभांतिके बड़े२ऊंचे वृक्ष हरे फल

फूलोंसे भरे खड़े झूमरहेहैं तिनपर कपोत, कीर, चातक मयूरआदिपक्षीमनभावन बोलियाँ बैठे बोलरहेहैं कहीं सुन्दर सरोवरमें कमल खिले हुए तिनपर भौरोंके झुंडकेझुंड गूंजरहे तीरमें हंससारस कोलाहल कररहेहैं कहीं फुलवाड़ियोंमें माली मीठे२ स्वरों से गाय२ ऊंच नीच नीर चढ़ाय क्यारियों में जल सींच रहे हैं कहीं इन्दारों बाडियों पर रहंट परोहे चल रहे हैं और पनघट पर पनहारियों के ठट के ठट लगे हैं तिनकी शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती, वह देखते ही बन आये महाराज ! यह शोभा बन उपवन की निरख

हरष नारदजी पुरी में जाय देखे तो अति सुन्दर कञ्चन मणिमय मन्दिर जग मगाय रहे हैं, तिन पर ध्वजा, पताका फहराय रही हैं दरवाजे २ तोरण बन्दनवार बंधी है दरवाजे२पर केले के खम्भ और कंचन के कुम्भ सपल्लव भरे धरे हैं घर२ की जाली झरोखे मोखों से धूप का धूआँ निकल श्याम घटासा मँडराय रहा है उसके बीच सोने के कलश कलशियाँ बिजली सी चमक रही हैं घर२ पूजा पाठ होम यज्ञ दान होरहे हैं ठौर ठौर भजन; सुमिरण; गान कथा, पुराण की चर्चा है जहां तहां यदुवंशी इन्द्र की सी सभा किये बैठे हैं और सारे नगर में सुख छाय रहा है।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी राजा परीक्षित से कहने लगे कि महाराज ! नारदजी पुरी में जाते ही मग्न हो कहने लगे कि प्रथम किस

मन्दिर में जाऊं जो श्रीकृष्णचन्द्र को पाऊं महाराज ! मन ही मन इतना कह नारदजी पहले रुक्मिणीके मन्दिर में गये वहाँ श्रीकृष्णचन्द्र बिराजतेथे इन्हें देख खड़े भये रुक्मिणीजी जलकी झारी भर लाईं प्रभुने पाँवधोय आसन पर बैठाय धूप दीप नैवेद्य धर हाथजोड़ नारदजी से कहा—

जा घर चरण साधु के परें। ते नर सुख सम्पत अनुसरें॥
हमसे कुटमी तारण हेतु। घर ही आय दरश तुम देतु॥

महाराज ! प्रभु के मुख से इतना वचन निकलते ही कि जगदीश तुमचिरजीव रहो यह आशीष दे नारदजी जाम्बवती के मन्दिर में गये और श्रीजाम्बवती के समीप देखा कि हरि पासासार खेल रहे हैं नारदजी को देखते ही जो उठे तो, नारदजी आशीर्वाद दे उलटे फिरे पुनि सत्यभामा के यहां गये तो देखा कि श्रीकृष्ण जी बैठे तेल लगवाय रहे हैं वहाँ से चुपचाप नारदमुनिजी फिर आये इसलिये कि शास्त्रों में लिखाहै तेल लगाने के समय न राजा प्रणाम करे न ब्राह्मण आशीष दे आगे नारद जी कालिन्दी के घर गये कि हरि सो रहे हैं महाराज ! कालिन्दीने नारदजीको देखते ही हरि को पाँव दबाय जगाया प्रभु जागते ही ऋषि के निकट जाय दंडवत् कर हाथ जोड़ बोले कि साधुओं के चरण तीर्थ जल के समान हैं जहाँ पड़े वहाँ पवित्र करतेहैं यह सुन वहाँसे भी आशीष दे नारदजी खड़े हुए और मित्रबिंदा के धाम गये तहाँ देखा कि ब्रह्म भोज होरहा है और श्रीकृष्ण परोसते हैं नारद जी को देख प्रभु ने कहा महाराज जो कृपा कर आये हो तो आप भी प्रसाद ले हमें उच्छिष्ट दीजै और घर पवित्र कीजे नारद जी ने कहा, महाराज मैं थोड़ा फिर आऊं फेर आऊंगा ब्राह्मणों को जिमालीजै पुनि ब्रह्म शेष आय मैं पाऊंगा यों सुनाय नारदजी बिदा हो सत्या के गेह पधारे, वहाँ क्या देखते कि श्रीबिहारी भक्त हितकारी आनन्द से बैठे बिहार कर रहे हैं यह चरित्र देख नारद मुनि उलटे पाँव फिरे पुनि भद्रा के स्थान पर गये तो देखा कि हरि भोजन कर रहे हैं वहाँ से फिरे तो लक्ष्मणाके गेह पधारे तहां

देखा कि प्रभु स्नान कर रहे हैं इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीनें कहा कि महारज! इसी भांति नारदमुनिजी सोलह सहस्र एक सौ आठ घर फिरे पर बिन श्रीकृष्णजी कोई घर न देखा जहाँ देखा तहां हरि को गृहस्थाश्रम का काम ही करते देखा यह चरित्र लखि—

नारद के मन अचरज ऐह। कृष्ण बिना नहिं कोई गेह॥
जाघर जाउं तहां हरि प्यारी। ऐसो प्रभु लीला बिस्तारी॥
सोलह सहस अठोतर सौघर। तहांर सुन्दरि संग गिरधर॥
मगनहोय ऋषिकहतविचारी। यह माया यदुनाथतिहारी॥
काहू सों नहि जानि परै। कौन तिहारी माया तरै॥

महाराज जब नारदजी ने अचम्भा कर कहे येबैन तब बोले प्रभु श्रीकृष्णचन्द्र सुख दैन कि नारद तू अपने मन में कुछ खेद मतकर मेरी माया अति प्रबल है और सारे संसार में फैल रही है यह मुझे ही मोहती है तो दूसरेकी क्या सामर्थ है जो इसके हाथसे बचे और जगत में न रचे

नारद मुनि विनवैं शिर नाय। मोपर कृपा करो यदुराय॥

जो आपकी भक्ति सदा मेरे चित में रहे और मेरा मन माया के वश न होय विषय की वासना न चहे, राजा! इतनी कह नारदजी प्रभु से विदा हो दण्डवत कर बीणा बजाते हरि गुण गाते अपने स्थान को गये और श्रीकृष्णचन्द्रजी द्वारिका में लीला करते रहे।

अध्याय ७१

राजायुधिष्ठिर संदेश

श्रीशुकदेवजीबोले कि, महाराज एकदिन श्रीकृष्णचन्द्र रात समय श्री रुक्मिणीजीके साथ बिहार करतेथे और रुक्मिणीजी आनन्दमग्नबैठी प्रीतम का चन्द्रमुख निरखर अपने नयन चकोरों को सुखदेतींथींकि इसबीच रात व्यतीत भई चिड़ियाँ चुहचुहाई, अम्बर में अरुणाई छाई चकोरों को बियोग हुआ, और चकवा चकईयोंका संयोग,कमलबिकसे कुमुदिनी कुम्हलाईचन्द्रमा छविछीण भया और सूर्यका तेज बढ़ा सब लोग जागे और अपनागृहकाज करने लगे उसकाल रुक्मिणीजी तो हरिके समीपसे उठ सोच संकोचलियेघर

की टहलटकोर करने लगीं और श्रीकृष्णचन्द्रजी देहशुद्धकर हाथमुंह धोय स्नानकर जप ध्यान पूजातर्पणसे निश्चिन्तहोय ब्राह्मणों को नाना प्रकारके दानदे नित्य कमसे सुचित्तहो बालभोग पाय, पान. लौंग इलायची, जाबित्री, जायफलकेसाथखाय सुथरे वस्त्र आभूषण मँगवाय पहन शस्त्रलगाय उग्रसेन के पास गये पुनि जुहारकर यदुवंशियों की सभाके बीच आय रत्न सिंहासन पर बिराजे।

महाराज उसीसमय एकब्राह्मणने जाय द्वारपालसे कहाकितुम श्रीकृष्ण-चन्द्रजी से जाकर कहोकि एकब्राह्मण आपके दर्शन की अभिलाषा किये द्वारपर खड़ाहै जोप्रभुकी आज्ञा पावैंतो भीतर आवै ब्राह्मण की बात सुन द्वारपालों ने भगवान से जाकर कहा कि महाराज एक ब्राह्मण आपके

दर्शन की अभिलाषा किये पंवरि पर खड़ा है आज्ञा पावै तो आव हरि बोले अभी लाव प्रभु के मुख से बात निकलते ही द्वारपाल हाथों हाथ ब्राह्मण को सन्मुख लेगये, विप्र को देख श्रीकृष्णचन्द्र सिंहासन से उतर दण्डवत कर आगे बढ़ हाथ पकड़ उसे मन्दिर में ले गये और रत्न सिंहासन पर अपने पास बिठाय पूछने लगे कि कहो देवता आपका आना कहाँ से हुआ और किसकार्य के हेतुपधारे ब्राह्मण बोला कृपा-सिन्धु दीनबन्धु मैं मगध देश से आयाहूँ और बीससहस्र राजाओं का सन्देश लायाहूँ प्रभु बोले सो क्या ब्राह्मणने कहा महाराज जिन बीससहस्र राजाओं

को जरासिन्धुने पकड़ हथकड़ियां बेड़ियाँ दे रक्खी हैं तिन्होंने मेरे हाथ यह सन्देशा कहला भेजाहै दीनानाथ तुम्हारी सर्वदा की यह रीति है कि जब असुर तुम्हारे भक्तों को सताते हैं तब२ तुम अवतार ले भक्तों की रक्षाकरते हो हेनाथ हिरण्यकशिपु से प्रह्लाद को छुड़वाया और गज को ग्राह से, तसेही दयाकर अब हमें इस महादुष्ट से छुड़वाइये हम महाकष्ट में हैं तुमबिन और किसीकी सामर्थ नहीं जो इस महाविपत्तिसे निकाले और हमारा उद्धारकरे।

महाराज इतनी बातके सुनतेही प्रभु दयालुहो बोलेकि हेदेवता, तुमअब चिन्ता मतकरो उनकी चिन्ता मुझेहै इतनी बातके सुनते ही ब्राह्मण संतोष कर श्रीकृष्णचन्द्रजीको आशीष देने लगा इस बीच नारदजी आ उपस्थित हुये प्रणामकर श्रीकृष्णचन्द्र ने उनसे पूछाकि नारदजी तुम सबठौर जाते आतेहो कहो हमारे भाई युधिष्ठिर आदि पाँचों पांडव इनदिनों में कैसे हैं और क्या करते हैं बहुत दिनसे हमने उनके कुछ समाचार नहीं पाये इससे हमारा चित्त उन्ही में लगा है नारदजी बोले कि महाराज मैं उन्हीं के पाससे आताहूँ हैंतो कुशलक्षेमसे पर इनदिनों में राजसूय यज्ञकरने के लिये निपट भावित होरहे हैं और घड़ी२ यही कहते हैं कि बिना श्रीकृष्ण की सहायके हमारायज्ञ पूरा न होगा इससे महाराज मेरा कहा मानिये तो—

पहले उनको यज्ञ संवारो। पीछे अनत कहूँ पग धारो॥

महाराज इतनीबातनारदजीकेमुखसे सुनतेहीप्रभुनेउद्धवजीकोबुलायकेकहाकि

उद्धव तुमही सखा हमारे। मन आंखहु ते कबहु न न्यारे॥
दुहुँ ओर की भारी भीर। पहले कहां चलैं कहौ वीर॥
उतें राजा संकट में भारी। दुख पावत किये आश हमारी॥
इत पाँडव मिलि यज्ञरचायौ। ऐसे कह प्रभु बचन सुनायो॥

अध्याय ७२

(श्रीकृष्ण हस्तिनापुर गमन)

श्रीशुकदेवजीबोलेकि, महाराजपहिले तो श्रीकृष्णचन्द्रजीने उस ब्राह्मण को इतना कह बिदा किया, जो राजाओंका सन्देश लाया था कि देवता तुम

हमारी ओरसे सब राजाओंसे कहोकि तुम किसीबातकी चिन्ता मतकरो हम बेगही आय तुम्हें छुड़ाते हैं, महाराज यह बातकह श्रीकृष्ण ब्राह्मणको बिदा कर उद्धवजीको साथले राजा उग्रसेन शूरसेन की सभा में गए और उन्होंने सब समाचार उनके आगे कहे वे सुन चुप होरहे इस में उद्धवजी बोलेकि महाराज ये दोनों काज कीजे, पहले राजाओंको जरासन्धसे छुड़ाय लीजे पीछे चलकर यज्ञ संवारिये क्योंकि राजसूय यज्ञका काम बिना राजा और कोई नहीं कर सकता और वहां बीस सहस्र नृप इकट्ठे हैं उन्हें छुड़ाओगेतो वे सब गुणवान यज्ञका काज बिना बुलाए जाकर करेंगे महाराज! और कोई दशोंदिशाजीत आवेगा तो भी इतने राजा इकट्ठे न पावेगा इससे अब

उत्तम यही है कि हस्तिनापुर को चलिए पांडवों से मिल मताकर जो काम करना हो सो करिये, महाराज इतना कह पुनि उद्धवजी बोले कि महाराज राजा जरासन्ध बड़ा दाता और गौ ब्राह्मणों का मानने और पूजनेवाला है, जो कोई उससेजाकर जो माँगताहै सो पाताहै याचक उसकेयहां से विमुख नहीं आता है और झूंठ नहीं बोलता जिससे वचन बद्ध होता है उसको निभाताहै और दशसहस्र हाथीका बल रखताहै उसके बलके समान भीमसेन का बल है, हेनाथ जोतुम चलौतो भीमसेनको साथ लेचलौ मेरीबुद्धिमें आता है कि उसकी मृत्यु भीमसेन के हाथहै इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा

परीक्षितसे कहाकि राजा जब उद्धवजीने ये बातेंकहीं तब श्रीकृष्णचन्द्रजीने राजा उग्रसेन शूरसेन से बिदा हो सब यदुवंशियों से कहा कि कटक साजो हम हस्तिनापुरको चलेंगे बातके सुनतेही सबयदुवंशी सेनासाज लेआये और प्रभुजी आठों पटरानियों समेत कटक के साथ हो लिए, महाराज जिसकाल श्रीकृष्णचन्द्र कुटुम्बसहित सब सेना ले धौंसादे द्वारिकापुरीसे हस्तिनापुरीको चले उस समय की शोभा कुछ वर्णी नहीं जाती, आगे हाथियोंका कोट बांये दाहिने रथ घोड़ों की ओट, बीचमें रनिवास और पीछे सबसेना साथ लिये सबकी रक्षा किए श्रीकृष्णचन्द्रजी चले जाते जहां डेरा होताथा तहाँ कई योजन के बीच एक सुन्दर सुहावना नगर बन जाता था, देश२ के नरेश भय खाय आय समाधान करते थे, निदान इसी धूमधाम से चले२ हरि सब समेत हस्तिनापुरके निकट पहुँचे, इसमें किसीने राजा युधिष्ठिरसे जाकर कहाकि महाराज कोई नृपति अति सेना ले बड़ी भीड़ भारसे आपके देश पर चढ़ आया है आप बेग ही उसे देखिये नहीं तो उसे यहां पहुंचा जानिये महाराज इस बातके सुनते ही, राजायुधिष्ठिरने अतिभय खाय अपने नकुल सहदेव दोनों छोटे भाइयों को यह कह प्रभु के सन्मुख भेजा कि तुम देख आवो कि कौन राजा चढ़ आया है राजा की आज्ञा पाते ही—

सहदेव नकुल देख फिर आये। राजा को यह वचन सुनाये॥
प्राणनाथ आये हैं हरी। सुनि राजा चिन्ता परिहरी॥

आगे अति आनन्दकर राजा युधिष्ठिर ने भीम अर्जुन को बुलाय के कहाकि भाई तुम चारों भाई आगू जाय आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र को ले आवो, महाराज। राजा की आज्ञा पाय और प्रभु का आना सुन वे चारों भाई अति प्रसन्न हो भेट पूजाकी सामग्री और बड़े२ पण्डितों को साथ ले बाजे गाजे से प्रभु को लेने चले निदान अति आदर मान से मिल वेदकी विधिसे भेट पूजाकर ये चारों भाई श्रीकृष्णजी को सब समेत पाटम्बर के पाँवड़े डालते चोवा चन्दन गुलाबजल छिड़कते चाँदी सोनेके फूल बरसाते धूप दीप नैवेद्य करके बाजे गाजे से नगरमें ले आये राजा युधिष्ठिरने प्रभुसे मिल अति सुख माना और अपना जीवन सफल जाना आगे बाहर भीतर

सबने सबसे मिल यथायोग्यसन्मानकिया और नयनोंको सुखदियाघरबाहर सारे नगर में आनन्द हो गया श्रीकृष्णचन्द्र वहां रह सबोंको सुखदैनेलगे।

अध्याय ७३

(जरासन्ध बध)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि, महाराज एक दिन श्रीकृष्णचन्द्र करुणासिन्धु दीनबन्धु भक्तहितकारी ऋषि मुनि ब्राह्मण क्षत्रियों की सभा में बैठेथे कि राजा युधिष्ठिर ने आय अति गिड़गिड़ाय बिनतीकरहाथजोड़ शिरनायके

कहा कि हे शिवबिरञ्चिके ईश तुम्हारा ध्यानकरतेहैं सदा सुर,मुनि,ऋषि योगीश. तुमहो अलख अगोचर अभेद कोई नहीं जानता तुम्हारा भेद।

मुनि योगीश्वर इकचित ध्यावत। तिनके मनहिं नेक नहिं आवत॥
हमको ,घरही दर्शन देतु। मानत प्रेम भक्ति के हेतु॥
जैसी मोहन लीला करौ। कांहू पै नहिं जाने करौ॥
माया में भून्यो संसार। हमसों करत लोक व्यवहार॥
तो तुमको सुमिरत जगदीश। ताहि आपनो जानत ईश॥
अभिमानी ते हौ तुम दूर। सतवादी के जीवन मूर॥

महाराज इतनी कह पुनि राजा युधिष्ठिर बोलेकि हे दीनदयालु आपकी दयासे मेरे सब काम सिद्ध हुए पर एकही अभिलाषा रही; प्रभु बोले सो क्या राजाने कहाकि मेरा यही मनोरथहैकि राजसूय यज्ञ कर आपको अर्पण करूँ इतनी बातके सुनते ही श्रीकृष्णचन्द्र प्रसन्नहोकर बोलेकि राजा यहतुम

ने भला मनोरथ किया इससे सुर,नर,मुनि ऋषि सब सन्तुष्ट होंयगे यहसब को भावता है और इसका करना तुम्हें कुछ कठिन नहीं,क्योंकि तुम्हारेभाई अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव बड़े प्रतापी और अति बली हैं, संसारमें अब ऐसा कोईनहीं जो इनका सामना करे, पहले इन्हें भेजिए कि ये जाय दशों दिशाओं के राजाओंको जीत अपने बश कर आवें पीछे आप निश्चिन्ताई से यज्ञ कीजिए महाराज प्रभुके मुखसे जो इतनी बात निकली त्योंही राजा युधिष्ठिर ने अपने चारों भाइयों को बुलाय कटक दे चारों को चारों ओर भेजदिया, दक्षिण को सहदेव पधारे, पश्चिम को नकुल सिधारे, उत्तर को अर्जुन धाए पूर्व में भीमसेन आए,आगे कितने एक दिनके बीच,महाराज वे चारों हरि प्रतापसे सारे द्वीप नौखण्ड जीत दशों दिशा के राजाओं को बशकर अपने साथ ले आए, उसकाल युधिष्ठिर ने हाथ जोड़ श्रीकृष्णचन्द्र जी से कहाकि महाराज आपकी सहायतासे यह काम तो हुआ अब क्या आज्ञा होतीहै इसमें उद्धवजी बोले कि धर्मावतार सब देश के तो नरेश आये पर अब एक मगध देश का राजा जरासन्धही आपके बशका नहीं और जब तक वह बश में न होगा तबतक यज्ञभी करना सफल न होगा महाराज। जरासन्ध,राजावृहद्रथकाबेटा महाबली बड़ा प्रतापी और अतिदानी धर्मात्माहै हरकिसीकी सामर्थ्य नहीं जो उसका सामनाकरे इस बातको सुन जो राजा युधिष्ठिर उदास हुए तो श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि महाराज! आप किसीबातकी चिन्ता मत कीजे,भाईभीम,अर्जुन,समेत हमें आज्ञा दीजे,कैतो छलबलकरउसे पकड़लावें,कै मार आवें ,इसबातके सुनतेही राजा युधिष्ठिरने दोनों भाइयों को आज्ञादी तब हरिने उनदोनों को अपने साथले मगध देश की बाट ली, आगे पथ में श्रीकृष्णजी ने अर्जुन और भीमसेन से कहा कि—

विप्ररूपह्वै पुर पग धारिय। छल बलकर बैरी द्रुत मारिय॥

महाराज! इतनी बातकह श्रीकृष्णजीने ब्राह्मणका वेषकिया उनके साथ भीम अर्जुन ने भी विप्रवेष लिया त्रिपुण्ड किये पुस्तक काँखमें लिये,अति उज्वल स्वरूप, सुन्दर रूप, बनठनकर ऐसेचलेकि जैसे तीनोंगुण सत्व, रज,

तम,देहधरि जाते होंय कैतीनोंकाल निदान कितनेएक दिनोंमें चले२ वे मग धदेशमें पहुँचे औरदोपहरकेसमय राजाजरासंधकी पंवरिपर जाखड़ेहुए इनका वेषदेख पौरियोंने अपने राजासे जाकहा कि महाराज! तीन ब्राह्मण अतिथि बड़े तेजस्वी महापण्डित अति ज्ञानी कुछ बांछा किए द्वारपर खड़े हैं हमेंक्या आज्ञा होती है महराज बातके सुनतेही राजा जरासन्ध उठआया और इन को प्रणाम कर अतिसन्मान से घरमें ले गया आगे वह इन्हें सिंहासन पर बैठाय आप सन्मुख हाथ जोड़ खड़ा हो देख २ सोच बोला कि—

याचक जो पर द्वारे आवै। बड़ौ भूप सोउ अतिथि कहावै॥
विप्र नहीं तुम योधा बली। बात न कछू कपट की भली॥
जो ठग ठगिन रूप धरि आवै। ठगि सो जाय भलो न कहावै॥
छिपै न क्षत्रिय कांति तिहारी। दीखत शूरवीर बलधारी॥
तेजवन्त तुम तीनों भाई। शिव विरंचि हरिसे बरदाई॥
मैं जान्यो बिय बिच निर्मान। करो देव तुम आप बखान॥
तुम्हारी इच्छाहो सो करौं। अपवाचा ते नहिं मैं टरौं॥
दांनी मिथ्या कबहु न भाषै। धन तन सर्वस कछून राखै॥
माँगो सोही देहौं दान। सुत सुन्दरि सर्वस्व समान॥

महाराज! इसबातके सुनतेही श्रीकृष्णचन्द्रजीने कहाकि महाराजकिसी समय राजाहरिश्चन्द्र बड़ादानी होगयाहैकि जिसकी कीर्ति संसारमें अबतक छारहीहै, सुनिए एकसमय राजा हरिश्चन्द्रके देशमें अकाल पड़ा और अन्न बिन सब लोग मरने लगे तब राजाने अपना सर्वस्वबेच२ सबको खिलाया जबदेश नगर धन गया और निर्धन हो राजा रहा तब एकदिन साँझसमय यहतो कुटुम्बसमेत भूखा बैठाथाकि इतनेमें विश्वामित्रने आय इसका सत्य देखनेको यह वचन कहा महाराज! मुझे धन दीजे और कन्यादान का सा फल लीजे इस वचनको सुनतेही जोकुछ घरमेंथा सो लादिया मुनि ऋषिने कहा महाराज मेराकाम इतनेमेंन होगा फिर राजाने दास दासी बेचकर धन लादिया पुनि ऋषिने कहा धर्ममूर्ति इतने धनसे मेरा काम न सरा अब मैं किसके पास जाय मांगूं मुझेतो संसारमें तुझसे अधिक धनवान धर्मात्मा कोई नहीं दृष्टि आताहै एक(श्वपच)नाम चांडाल माया पात्रहै कहोतो जा

धनमागूं पर इसमें भी लाज आतीहै कि ऐसे दानी राजा को यांच उसको क्या याचूं, महाराज इतनी बातके सुनतेही राजा हरिश्चन्द्र विश्वामित्रको साथले उस चांडालके घरगए और उन्होंने उससे कहाकि भाई तू हमें एक वष के लिये गहने धर और मुनि का मनोरथ पूराकर श्वपच बोला-

कैसे टहल हमारी करिहो । राजस तामस मनते हरिहो ॥
तुम नृप महातेज बलधारी । नीच टहल है खरी हमारी ॥

महाराज हमारे यहाँतो यही कामहैकि श्मशानमें जाय चौकीदे औरजो मृतकआवै उनसे कर ले पुनि हमारे घरबारकी चौकसीकरे तुमसेयह होसके तो रुपयेदूं और तुम्हें बन्धक रक्खूं राजाने कहा अच्छा मैं वर्षभर तुम्हारी सेवा करूंगा तुम इन्हें रुपयेदो महाराज इतना वचन राजाके मुखसे निकलतेही श्वपचने विश्वामित्रको रुपयेगिनदिए वहले अपने घरगए और राजा वहाँ उसकी सेवाकरने लगा कितनेएकदिनपीछे कालवशहो राजा हरिश्चन्द्र का पुत्ररोहिताश्व मरगया उसमृतकको ले रानी मरघटमें गई और ज्यों चिता बनाय अग्नि संस्कार करने लगीं त्योंहीं राजाने आय कर मांगा।

रानी बिलख कहै दुख पाय। देखो समुझि हिये तुम राय॥

यह हमारा पुत्ररोहिताश्व है और कर देने को मेरे पास और तो कुछ नहीं यही एक चीर है, जो पहने खड़ी हूँ राजाने कहा इसमें मेरा कुछ बश नहीं मैं स्वामी के कार्य पर खड़ाहूं जो स्वामीका कार्य न करूंगा तो मेरा सत्य जाय महाराज इस बात के सुनतेही रानीने ज्यों चीर उतारने को आँचल पर हाथ डाला त्योंहीं तीनों लोक कांप उठे, यों ही भगवान ने राजा रानी का सत्य देख पहले एक विमान भेज दिया और पीछे से आय दोनों का उद्धार किया महाराज जब विधाता ने रोहिताश्व को जिलाय राजा रानी को पुत्र समेत विमान पर बैठाय बैकुण्ठ जाने की आज्ञाकी तब राजा हरिश्चन्द्रने हाथ जोड़ भगवान से कहाकि हे दीनबन्धो पतित पावन दीन दयालु मैं श्वपच बिना बैकुण्ठ धाममें कैसे जाय करूं विश्राम इतना वचन सुन और राजा के मनका अभिप्राय जान श्री भक्त

हितकारी करुणासिन्धु हरिने श्वपचकोभी राजारानी औरकुंवरके साथतारा।

वहाँ हरिश्चन्द्र अमर पद पायो। यहाँ युग युग यश चलि आयो॥

महाराज यह प्रसङ्ग जरासंध को सुनाय श्रीकृष्णचन्द्रजीने कहा कि महाराज और सुनिये कि, रन्तिदेवने, ऐसा तपकिया कि अड़तालिस दिन बिन पानी रहा और जिस समय जल पीने बैठा तिसी समय कोई प्यासा आया इसने वह नीर आप न पी उस तृषावन्त को पिलाया उस जलदान से उसने मुक्ति पाई पुनि राजा बलि ने अति दान किया तो पाताल का राज्य लिया और अब तक उसका यश चला आता है फिर देखिए कि उद्दालक मुनि छटे महीने अन्न खाते थे एक समय खाती बिरियाँ उनके यहाँ पर कोई अतिथि आया, उन्होंने अपना भोजन आप न खाया भूखेको खिलाया और क्षुधाहीमें मरे निदान अन्नदान करनेसे वैकुण्ठको गये चढ़ कर विमान, पुनि एक समय सब देवताओं को साथले राजा इन्द्र ने जाय दधीचिसे कहा कि महाराज हम वृत्रासुर के हाथसे अब बचनहीं सकते जो आप अपनी अस्थि हमें दीजै तो उसके हाथसे बचें नहींतो बचना कठिनहै क्योंकि बिन तुम्हारे हाड़ के आयुध के किसी भाँति न मारा जायगा, महाराज इतनी बात के सुनतेही दधीचि ने शरीर गाय से चटवाय जाँघ का हाड़ निकाल दिया, देवताओं ने ले उस अस्थि का वज्र बनाया और दधीचि ने प्राण गँवाया और वैकुण्ठ धाम पाया।

ऐसे दाता भये अपार। तिनको यश गावत संसार॥

राजा! यों कह श्रीकृष्णचन्द्रजी ने जरासन्धसे कहा कि महाराज जैसे आगे और युग में धर्मात्मा दानी राजा हो गये हैं तैसे अब इस काल में तुम हो आगे उन्होंने याचकों की अभिलाषा पूरी की, तो तुम हमारी आशा पुरावो कहा है—

याचक कहा न माँगई, दाता कहा न देय। गृह सुत सुन्दरि लोभ नहिं, तनु शिर दे यश लेय॥

इतना वचन प्रभुके मुखसे निकलतेही जरासन्ध बोला कि, याचकको दाता की पीर नहीं होती, तो भी दानी अपनी प्रकृति नहीं छोड़ता

इसमें सुख पावेकि दुःख हरिने कपटरूपधर वामन बन राजाबलिकेपास जाय तीनपगपृथ्वीमाँगी उससमयशुक्रने बलिकोचिताया तौभी राजानेप्रणनछोड़ा

देह समेत मही तिन दई। ताकी जग में कीरत भई॥
याचक विष्णु कहा यश लीन्हो। सर्वस लै तोऊ हठ कीन्हो॥

इससे तुम पहले अपना नाम भेद कहौ तब जो तुम मांगोगे सो मैं दूंगा मैं मिथ्या नहीं भाषता श्रीकृष्णचन्द्र बोलेकि हम क्षत्रिय हैं बासुदेव हमारा नामहै तुम भली भाँति हमें जानते हो और ये दोनों अर्जुन भीम हमारे फुफेरे भाई हैं हम युद्ध करनेको तुम्हारे पासआए हमसे युद्धकीजै हम यही तुमसे मांगने आये हैं और कुछनहीं मांगते, महाराज यहबात श्रीकृष्ण चन्द्र से सुन जरासन्ध हँसकर बोला कि मैं तुमसे क्या लड़ूं तू मेरे सों ही भाग चुकाहै और अर्जुन से भी न लड़ूंगा क्योंकि वह विदर्भ देश गया था तहां नारी का वेष करके रहा, भीमसेन से कहो तो लड़ूं यह मेरे समान का है इससे लड़ने में मुझे कुछ लाज नहीं।

पहले तुम सब भोजन करो। पीछे मल्ल अखाड़े लड़ो॥
भोजन दै नृप बाहर आयो। भीमसेन तहँ बोलि पठायो॥
अपनी गदा ताहि तिन दई। गदा दूसरी आपुन लई॥
दो०—जहाँ सभा मण्डप बन्यो, बैठे जाय मुरारि।
जरासन्ध अरु भीम तहँ, भये ठाढ़ इक बारि॥
टोपी शीश काछनी काछे। बने रूप नटुआ के आछे॥

महाराज! जिस समय दोनों वीर अखाड़ेमें खम ठोक गदा तान ध्वजा पलट झूमकर सन्मुख आये उसकाल ऐसें जनाये कि मानो दोमतङ्ग मतवाले उठ धाए, आगे जरासन्धने भीमसेनसे कहाकि पहले गदा तू चला क्योंकि तू ब्राह्मणका वेष ले मेरी पौरिमें आया था इससे पहले प्रहार न करूंगा,यहबात सुन भीमसेन बोलेकि, राजा! हमसे धर्मयुद्धहै इससे यहज्ञान न होना चाहिए, जिसका जी चाहे सो पहले शस्त्र करे, महाराज! उन वीरोंने परस्पर ये बात कर एक ही साथ गदा चलाई और युद्ध करने लगे।

ताकत घातैं अपनी अपनी। चोट करत बाईं अरु दहनी॥

अङ्ग बचाय उछिर पग धरैं । झपटहिं गदा गदा सों लरैं ॥
खटपट चोट गदा कटकारी । लागत शब्द कुलाहल भारी ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! इसी भाँति दोनों बली दिन भर तो युद्ध करते और सांझ को घर आय एक साथ भोजन कर विश्राम करते, ऐसे नित लड़ते२ सत्ताईस दिन भये तब एक दिन उन दोनों के लड़ने के समय श्रीकृष्णचन्द्रजीने मनहीं मन विचारा कि, यह यों न मारा जायगा, क्योंकि जब यह जन्मा था तब दो फाँक हो जन्मा था, उस समय जरा राक्षसीने आय जरासंध का मुँह और नाक मूंदा तब दोनों फाँक मिल गईं, यह समाचार सुन उसी समय उसके पिता बृहद्रथने ज्योतिषियों को बुलायके पूछा कि कहो? इस लड़के का नाम क्या होगा और कैसा होगा? ज्योतिषियों ने कहा कि, महाराज! इसका नाम जरासंध हुआ और यह बड़ा प्रतापी और अजर अमर होगा, जब तक इसकी संधि न फटेगी तब तक यह किसी से न मारा जायगा, इतना कह ज्योतिषी विदाहो चलेगए, महाराज! यहबात श्रीकृष्ण चन्द्रजी ने मनही मन सोच और अपना बल दे भीमसेन को तिनुका चीर सैन से जताया कि, इसे इस रीति से चीर डालो, प्रभु के चितातेही भीमसेन ने जरासंध को पकड़ कर दे मारा और एक जाँघ पर पाँव दे दूसरा पाँव हाथ से पकड़ यों चीर डाला जैसे कोई दातून चीर डाले, जरासंध के मरते ही सुर, किन्नर, गन्धर्व, ढोल, दमामे भेरी बजाय, फूल बरषाय, जय-जय कार करने लगे और दुःख द्वन्द जाय सारे नगर में आनन्द ही गया उसी बिरियाँ जरासंध की नारी रोती श्रीकृष्णचंद्रजी के सन्मुख खड़ी हो हाथ जोड़ बोली कि धन्य धन्य है नाथ! तुम्हें जो ऐसा काम किया कि जिसने सर्वस दिया तुमने उसका प्रान लिया, जो जन तुम्हें सुत, बित्त, समर्पे देह, उससे तुम करते हो ऐसा ही स्नेह।

कपट रूप कर छल, बल कियो । जगत आय तुम यह यश लियो ॥

महाराज ! जरासंध की रानी ने जब करुणाकर करुणा निधान के आगे हाथ जोड़ बिनती कर यों कहा, तब प्रभुने दयालु हो पहले जरासंध

की क्रिया की, पीछे उसके सुत सहदेव को बुलाय राजतिलक दे सिंहासन पर बिठाय के कहा, पुत्र! नीति सहित राज्य कीजो, और ऋषि, मुनि गौ, ब्राह्मण, प्रजा की रक्षा करो।

अध्याय ७८

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! राजपाट पर बैठाय समझाय श्री कृष्णचन्द्रजीने सहदेव से कहा कि राजा! अब तुम जाय उन राजाओं को ले आवो, जिन्हें तुम्हारे पिताने पहाड़ की कन्दरामें मूंद रक्खा है, इतना वचन प्रभु के मुख से सुनतेही जरासंध का पुत्र सहदेव बहुत अच्छा कह कर कन्दरा के निकट जाय उसके मुखसे शिला उठाय बीस सहस्र आठ सौ राजाओं को निकाल हरि के सन्मुख आया, हथकड़ियाँ बेड़ियाँ पहने, गले में साँकल लोहे की डाले नख केश बढ़ाये, तनछीन

मन मलीन, मैले वेष, सब राजा प्रभुके सन्मुख पाँति पाँति खड़े हो हाथ जोड़ बिनती कर बोले हे कृपासिन्धो! दीनबन्धो! आपने भले समय आय हमारी सुधली नहीं तो हम सब मर चुके थे तुम्हारा दर्शन पाया हमारे जीमेंजी आया पिछला दुख सब गँवाया महाराज इस बात के सुनतेही कृपासागर श्रीकृष्णचन्द्रजीने उनपर दृष्टि की तो बात की बात में सहदेव उनको लेजाय हथकड़ी बेड़ी कटवाय क्षौर करवाय न्हिलायधुलवाय

षटरस भोजन खिलवाय वस्त्र अराभूण पहराय अस्त्र शस्त्र बन्धवाय पुनि हरिके सोंही लिवाय लाया, उसकाल श्रीकृष्णजीने उन्हें चतुर्भुज हो शङ्ख चक्र, गदा, पद्म धारण कर दर्शन दिया प्रभूका स्वरूप भूप देखतेही हाथ जोड़ बोले हे नाथ ! तुम संसारके कठिन बन्धन से जीवको छुड़ाते हो तुम्हें जरासिन्धुकी बन्धसे हमें छुड़ाना क्या कठिन था ? जैसे आपने कृपाकर इस कठिन बन्धसे छुड़ाया तैसेही अब हमें गृहकूपसे निकाल काम, क्रोध, लोभ, मोह से छुटाइये जो हम एकांत बैठ आपका ध्यान करें और भवसागरकोतरें।

श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा ! जब सब राजाओंने ऐसे ज्ञान वैराग्य भरे वचन कहे, तब श्रीकृष्णचन्द्रजी प्रसन्न हो बोले कि सुनो जिनके मन में मेरी भक्ति है वे निस्सन्देह भक्ति पावेंगे, बंधमोक्ष मनहीका कारण है जिनका मन स्थिर है तिन्हें घर और बन समान है. तुम और किसी बात की चिंता मत करो आनन्द से घर में बैठ नीति सहित राज्य करो प्रजाको पालो, गौ ब्राह्मणकी सेवामें रहो झूठ मत भाषो . काम क्रोध लोभ अभिमान तजो भाव भक्तिसे हरिको भजो तुम निस्सन्देह परम पदको पावोगे,संसारमें आय जिसने अभिमान किया वह बहुत न जीया, देखो अभिमानने किसे न खो दिया।

सहसबाहु अति बली बखान्यो। परशुराम ताको बल भान्यो ॥
बैन रूप रावण हो भयो । गर्व आपने सों नशि गयो ॥
भौमासुर बाणासुर कंस । भये गर्वते ते विध्वंस ॥
श्रीमद् गर्व करौ जन कोय । त्यागैं सर्व सो निर्भय होय ॥

इतना कह श्रीकृष्णजीने सब राजाओं से कहा कि अब तुम अपने २ घर जावो, कुटुम्ब से मिल अपना राजपाट सँभाल हमारे न पहुँचते हस्तिनापुरमें राजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें शीघ्र आवो महाराज इतना वचन श्रीकृष्णजी के मुख से निकलतेही सहदेवने सब राजाओं को जाने का सामान जितना चाहिए उतना बात की बात में ला उपस्थित किया, वे प्रभू से बिदा हो अपने अपने देशों को गये और श्रीकृष्णचन्द्र

जी भी सहदेव को साथ ले भीम, अर्जुन सहित वहाँ से चले चले आनन्द मङ्गलसे हस्तिनापुर आये आगे प्रभु ने राजा युधिष्ठिर के पास जाय जरासंध के मारने का समाचार और सब राजाओं के छुड़ाने का ब्योरा समेत कह सुनाया।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहाकि महाराज! आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र जी के हस्तिनापुर पहुँचते ही वे सब राजा भी अपनी अपनी सेना ले भेंट सहित आन पहुँचे और राजा युधिष्ठिर से भेंट कर भेंट दे श्रीकृष्णचन्द्रजी की आज्ञाले हस्तिनापुर के चारों ओर जा उतरे और यज्ञ की टहल में आ उपस्थित हुए।

अध्याय ७५

(राजसूय यज्ञ, शिशुपाल मोक्ष)

श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा! जैसे यज्ञ राजा युधिष्ठिरने किया और शिशुपाल मारा गया तैसे मैं सब कथा कहता हूँ तुम चित्त दे सुनो बीस सहस्र आठ सौ राजाओं के जातेही चारों ओर के जितने राजाथे क्या सूर्य वंशी क्या चन्द्रवंशी जितने सब आय हस्तिनापुर में उपस्थित हुए उस समय श्रीकृष्णचन्द्र और राजा युधिष्ठिर ने मिलकर सब राजाओं का सब भाँति शिष्टाचार कर समाधान किया, और हरएक को एक२ काम यज्ञका

सौंपा, आगे श्रीकृष्णचन्द्रजी ने राजा युधिष्ठिर से कहा कि महाराज ! भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव सहित हम पाँचो भाई सब राजाओं को साथ ले ऊपर की टहल करें, और आप ऋषि मुनि ब्राह्मणोंको बुलाय यज्ञ आरम्भ कीजे. महाराज इतनी बात के सुनते ही राजा युधिष्ठिर ने सब मुनि ब्राह्मणों को बुलाकर पूछा कि महाराज ! जो २ वस्तु यज्ञ में चाहिए सो आज्ञा कीजै, महाराज इस बात के कहते ही ऋषि, मुनि, ब्राह्मणों ने ग्रन्थ देख २ यज्ञ की सामिग्री सब एक पत्रपर लिख दी और राजा ने वोही मँगवाय उनके आगे धरवा दी ऋषि, मुनि ब्राह्मणों ने मिल यज्ञ की वेदी बनाई चारों वेद के सब ऋषि, मुनि ब्राह्मण वेदी के बीच आसन बिछाय२ जा बैठे पुनि शुचि होय स्त्री सहित गाँठ जोड़ बांध राजा युधिष्ठिर भी जा बैठे और द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, धृतराष्ट्र दुर्योधन, शिशुपाल आदि जितने योद्धा और बड़े२ राजा थे वे भी आन बैठे ब्राह्मणों ने स्वस्तिवाचन गणेश पुजवाय कलश स्थापन कर ग्रहस्थापन किये, राजा ने भरद्वाज, गौतम, वशिष्ठ, विश्वामित्र, वामदेव, पाराशर, कश्यप, व्यास आदि बड़े२ ऋषि मुनि, ब्राह्मणोंको वरण किया और राजा से यज्ञ का संकल्य करवाय होम को आरम्भ किया महाराज ! मन्त्र पढ़ २ ऋषि मुनि ब्राह्मण आहुति देने लगे और देवता प्रत्यक्ष हाथ बढ़ाय लैंने, उस समय ब्राह्मण वेद पाठ करते थे और सब राजा होम की सामिग्री ला२ देते थे और राजा युधिष्ठिर होम करते, कि इस में निर्द्वन्द यज्ञ पूर्ण हुआ राजाने पूर्णाहुति दी उसकाल सुर, नर, मुनि सब राजा को धन्य२ कहने लगे और यक्ष गन्धर्व किन्नर बाजने बजाय २ यश गाय२ फूल बरसाने, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! यज्ञ से निश्चिन्त हो राजा युधिष्ठिर ने सहदेवजी को बुलाकर पूछा कि—

पहिले पूजा का की कीजै । अर्चौ तिलक कौन को दीजे ॥
कौन बड़ो देवन को ईश । ताहि पूज हम नावैं शीश ॥

सहदेवजी बोले कि महाराज ! सब देवों के देव हैं बासुदेव, कोई

नहीं जानता इनका भेद यह ब्रह्मा रुद्र इन्द्र के ईश इन्हीं को पहले पूजि नवाइये शीश, जैसे तरुवर की जड़ में जल देने से सब शाखा हरी होती हैं तैसे ही हरि की पूजा करने से सब देवता सन्तुष्ट होते हैं यही जगत के कर्ता हैं और यही उपजाते पालते मारने हैं, इनकी लीला है अनन्त कोई नहीं जानता इनका अन्त, यही हैं प्रभु अलख अगोचर अविनाशी इन्हीं के चरण कमल सदा सेवती है कमला भई दासी, भक्तों के हेतु बार बार लेते हैं अवतार तनुधर करते हैं लोक व्यवहार।

बन्धु कहत घर बैठे आवैं। अपनी माया मांहि भुलावैं॥
महा मोह हम प्रेम भुलाने। ईश्वर कूं भ्राता कर जाने॥
इनसे बड़ो न दीखे कोई। पूजा प्रथम इन्ही की होई॥

महाराज! इस बात के सुनते ही सब ऋषि मुनि और राजा बोल उठे कि राजा! सहदेवजीने सत्य कहा, प्रथम पूजन योग्य हरि ही हैं तब राजा युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णजी को सिंहासन पर बिठाय आठों पटरानियों समेत चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूपदीप नैवेद्य कर पूजा की पुनि सब देवताओं ऋषियों, मुनियों ब्राह्मणों और राजाओंकी पूजा की रुज़र के जोड़े पहिनाए, चन्दन केशरकी खौरेंकी, फूलोंकेहार पहराय सुगन्ध लगाय यथायोग्य राजाने सबकी मनुहार की, श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा!

हरि पूजत सबको सुख भयो। शिशुपाल को शीश धूनगो॥

कितनी एक बेर तक वह शिर झुकाए मनही मन कुछ सोच विचार करता रहा, निदान कालबश हो अति क्रोधकर सिंहासन से सभा के बीच निस्सङ्कोच निडर हो बोला कि इस सभा में धृतराष्ट्र, दुर्योधन, भीष्म, कर्ण द्रोणाचार्य आदि- सब बड़े२ ज्ञानी मानी हैं पर इस समय सबकी गति मति मारी गई, बड़े मुनीश बैठे२ रहे और नन्द- गोपके सुतकी पूजा भई और कोई कुछ न बोला, जिसने ब्रजमें जन्म ले ग्वाल बालों की झूंठी छाक खाई, तिसी की इस सभा में भई प्रभुताई बड़ाई—

ताहि बड़ो सब कहत अचेत। सुरपति को बलि कागहिं देत॥

जिसने गोपी और ग्वालोंसे स्नेहकिया इस सभा में तिसहीको सबसे

बड़ासाधु बनाय दिया, जिसने दुग्ध दही माखन घर२ चुराय खाया उसी का यश सबने मिल गाया, बाट घाट में जिसने लिया दान तिसीका यहाँ हुआ सन्मान परनारि से जिसने छलबल कर भोग किया सबने मताकर उसीको पहले तिलक दिया, ब्रजमें इन्द्रकी पूजा जिसने उठाई और परवत की पूजा ठहराई पुनि पूजा की सब सामिग्री गिरि के निकट लिवाय लेजाय मिसकर आपही खाई तो भी उसे लाज न आई, जिसकी जाति पाँति और माता पिता कुल धर्म का नहीं ठिकाना तिस को अलख अविनाशी कर सबने माना।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहाकि महाराज इसी भाँति से कालवश हो राजा शिशुपाल अनेक २ प्रकारकी बुरी बातें श्रीकृष्णचन्द्रजी को कहता था और श्रीकृष्ण सभाके बीच सिंहासन पर बैठे सुन एक२ बात पर एक २ लकीर खेंचते थे, इसी बीच भीष्म, कर्ण, द्रोण और बड़े२ राजा हरिकी निन्दा सुन अतिक्रोधकर बोलेकि अरे मूर्ख तू सभामें बैठा हमारे सन्मुख प्रभुकी निन्दा करताहै ? रे चांडाल ! चुप रह नहीं तो अभी पछार मार डालतेहैं महाराज ! यह कह शस्त्र लेले सब राजा शिशुपाल के मारने को उठ धाये उस समय आनन्दकन्द श्रीकृष्ण चन्द्रने सब को रोककर कहाकि तुम इसपर शस्त्रमत करो खड़े२ देखो, यह आपसे आपही मर जाता है मैं इसके सौ अपराध सहूँगा क्योंकि मैंने वचन हाराहै सौ से बढ़ती न सहूँगा, इसीलिये मैं रेखा काढ़ताहूँ महाराज ! इतनी बात के सुनते ही हाथ जोड़ श्रीकृष्णचन्द्रजी से पूछाकि, कृपानाथ ! इसका क्या भेद है ? जो आप इसके सौ अपराध क्षमा करियेगा, सो कृपाकर हमें समझाइये जो हमारे मनका सन्देह जाय प्रभु बोले कि जिस समय यह जन्मा था तिस समय इसके तीन नेत्र और चार भुजा थीं, यह समाचार इसके पिता दमघोष ने पाय ज्योतिषियों और बड़े२ पण्डितों को बुलायकर पूछा कि यह लड़का कैसा हुआ इसका विचार कर मुझे उत्तर दो राजा की बात सुनतेही पण्डित और ज्योतिषियों ने शास्त्र को विचार के कहा कि

महाराज यह बड़ा बली और प्रतापी होगा और यह भी हमारे विचार में आताहै, जिसके मिलने से इसकी एक आँख और दोबांह गिर पड़ेंगी यह उसीके हाथ माराजायगा इतनासुन इसकी मां महादेवी शूरसेनकी बेटी बासुदेव की बहन हमारी फूफी अतिउदास भई और आठ पहर पुत्रहीकी चिंता में रहने लगी, कितने एक दिन पीछे एक समय पुत्र को लिये पिता के घर मथुरा आई और इसे सब से मिलाया जब यह मुझसे मिला और इसकी एक आँख और दो बाहु गिर पड़ीं, तब फूफी ने मुझे वचन बद्ध कर के कहा कि इसकी मौत तुम्हारे हाथ है, तुम इसे मत मारियो, मैं यह भीख तुम से मांगती हूँ मैंने कहा अच्छा सौ अपराध हम इसके न गिनेंगे, इस उपरांत अपराध करेगातो हनेंगे हमसे यहवचन ले फूफी सबसेबिदाहो इतनी कह पुत्र सहित अपने घर गई कि सौ अपराध क्यों करेगा, जो कृष्ण के हाथ मरेगा।

महाराज! इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्णजी ने सब राजाओं के मन का भ्रम मिटाय उन लकीरों को गिना, जो एक२ अपराधपर खैंचीथींगिनते ही सौसे बढ़ती हुईं तभी प्रभुने सुदर्शन चक्रको आज्ञादी,उसनेझटशिशुपाल का शिर काट डाला उसके धड़से जो ज्योति निकली सो एक बार तो आकाशको धाई फिर आय सबके देखते ही श्रीकृष्णचन्द्र के मुख में समाई यह चरित्र देख सुर नर मुनि, जय जय कार करने लगे और लगे पुष्प बर्षावने उस काल श्री मुरारी भक्त हितकारी ने तीसरी मुक्तिदी और उसकी क्रिया की। इतनी कथा सुन राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेवजी से पूछा कि महाराज! तीसरी मुक्ति प्रभुने किस भाँति दी, सो मुझे समझाय कहिए, शुकदेवजी बोले कि राजा! एक बार यह हिरण्यकशिपु हुआ प्रभुने नृसिंह अवतार ले तारा, दूसरी बेर रावण भया तो हरि ने रामावतारले इसका उद्धार किया अब तीसरी बिरियाँ यह है इसीसे तीसरी मुक्ति भई इतनी सुन राजा ने मुनिसे कहा कि महाराज! अब आगे कथा कहिए श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा यज्ञ

के हो चुकते ही राजा युधिष्ठिर ने सब राजाओं को स्त्री सहित वस्त्र पहराय ब्राह्मणों को अनगिनती दान दिए देने का काम यज्ञ में दुर्योधन का था जिसने द्वेषकर एक की ठौर अनेक दिए इसमें उसका यश हुआ तो भी वह प्रसन्न न हुआ इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज यज्ञके पूर्ण होते ही श्रीकृष्णचन्द्रजी राजा युधिष्ठिर से विदा हो सर्व सेना ले कुटुम्ब सहित हस्तिनापुर से चले द्वारिका पधारे प्रभु के पहुँचतेही घर घर मङ्गलाचार होने लगे और सारे नगर में आनन्द हो गया।

अध्याय ७६

(दुर्योधन मान मर्दन)

राजा परीक्षित बोले कि महाराज राजसूय यज्ञ होने में सब कोई प्रसन्न हुए दुर्योधन अप्रसन्न हुआ इसका कारण क्या है सो तुम मुझे समझाय के कहो जो मेरे मनका भ्रम जाय श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा तुम्हारे पितामह बड़े ज्ञानीथे इन्होंने यज्ञ में जिन्हें जैसा देखा तैसा काम दिया, भीम को भोजन करवाने का अधिकार दिया पूजापर सहदेव को रक्खा धन लाने को नकुल रहे सेवा करने को अर्जुन ठहरे श्रीकृष्ण चन्द्रजीने पाँव धोना और जूठीपत्तल उठानेका काम लिया दुर्योधनको द्रव्य

बांटनेका काम दिया और जितने राजाथे तिन्होंने एक२ काज बांट लिया महाराज सब निष्कपट यज्ञकी टहल करते थे पर राजा दुर्योधन जो काम करता था इससे वह एक की ठौर अनेक उठाता था, निज मन में यह बात ठान के कि इनका भण्डार टूटे तो अप्रतिष्ठा होय,पर भगवत कृपा से अप्रतिष्ठा न होती बल्कि यश होताथा इसलिये वह अप्रसन्न होताथा और वह यह भी न जानता था कि मेरे हाथ में चक्र है एक रुपया दूंगा तो चार इकट्ठे होंयगे इतनी कथा कह शुकदेवजी बोलेकि, राजा अब आगे कथा सुनिए श्रीकृष्णजी के पधारते ही राजा युधिष्ठिर ने सब राजाओं को खिलाय पिलाय पहिराय अति शिष्टाचार कर बिदा किया वे दल साज२ अपने२ देश को सिधारे, आगे राजा युधिष्ठिर कौरव और पांडवों को ले गङ्गा स्नान कर बाजे गाजे से नीरमें बैठ उनके साथ सबने स्नान किया पुनि न्हाय न्हिलाय सन्ध्या पूजन से निश्चिन्त होय वस्त्र आभूषण पहन सबको साथ लिए युधिष्ठिर कहां आते हैं कि जहाँ मय दैत्य ने अति सुन्दर सुवर्ण रत्न जटित मन्दिर बनाए थे महाराज राजा युधिष्ठिर राज सिंहासन पर बिराजे उसकाल गन्धर्व गुण गाते थे चारण बन्दी जन यश बखान ते थे, सभाके बीच पातुर नृत्य करती थीं घर बाहर मङ्गली लोग मङ्गलाचार करते थे और राजा युधिष्ठिर की सभा इन्द्र की सी सभा हो रही थी इस बीच में राजा युधिष्ठिर के आने का समाचार पाय राजा दुर्योधन भी कपट स्नेह किए वहां मिलने को बड़ी धूम धाम से आया।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! जो वहाँ मय ने चौक बीच ऐसा काम किया था कि जो कोई जाता था तिसे थल में जल का भ्रम होता था और जलसे थल का, महाराज! जो राजा दुर्योधन मंदिर में बैठा तो उसे थल देख जल का भ्रम हुआ उस ने वस्त्र समेट उठाय लिए आगे बढ़ जल देख उसे थलका धोखा हुआ जो पाँव बढ़ाया तो उसके कपड़े

भीजे यह चरित्र देख सब सभा के लोग खिलखिला उठे राजा युधिष्ठिर ने हँसी को रोक रोक मुंह फेर लिया, महाराज सबके हँस पड़ते ही दुर्योधन अति लज्जित हो महा क्रोधकर उलटा फिर गया, सभा में बैठ कहने लगा कि कृष्ण का बल पाय युधिष्ठिर को अति अभिमान हुआहै आज सभा में बैठ मेरी हँसी की इसका पलटा मैं लूं और उसका गर्व तोड़ूं तो नाम दुर्योधन नहीं तो नहीं।

अध्याय ७७

(शाल्व दैत्य वध)

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! जिस समय श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजी हस्तिनापुर में थे तिसी समय शाल्व नाम दैत्य शिशुपाल का साथी जो रुक्मिणी के ब्याह में श्रीकृष्णजी के हाथकी मार खाय भागा था सो मनही मन इतनी कहने लगा और लगा महादेवजी की तपस्या करने कि अब मैं अपना वैर यदुवंशियों से लूंगा—

इन्द्रिय जीत सबै वश कीन्ही। भूख प्यास सब ऋतु सहलीनी॥
ऐसी विधि तप लाग्यो करन। सुमरे महादेव के चरन॥
नित उठ मुठी रेत लै खाय। करे कठिन तप शिव मन लाय॥
वर्ष एक ऐसी विधि गयौ। तवही महादेव वर दयौ॥

कि आज से तू अजर अमर हुआ और एक रथ माया का तुझे मय

दैत्य बना देगा तू जहाँ जाना चाहेगा वह तुझे वहाँ ले जायगा उस रथ को त्रिलोकी में मेरे बर से सब ठौर जाने की सामर्थ्य होगी, महाराज सदा शिव ने जो बर दिया तो एक रथ उसके सम्मुख आय खड़ा हुआ वह शिव जी को प्रणाम कर रथ पर चढ़ द्वारिकापुरी को धर धमका वहाँ जाय नगर बसियों को अनेक भाँति की पीड़ा उपजाने लगा उसके डर से सब नगर बासी अति भयभीत हो भाग राजा उग्रसेन के पास जा पुकारे कि महाराज की दुहाई दैत्यने आय नगर में अति धूम मचाई जो इसी भाँति उपाधि करेगा तो कोई जीता न रहेगा महाराज इतनी बात के सुनतेही राजा उग्रसेन ने प्रद्युम्न और शाम्बको बुलाय के कहा कि देखो हरि का पीछा ताक के यह असुर आया है प्रजा को दुख देने तुम इसका कुछ उपाय करो राजाकी आज्ञा पाय प्रद्युम्नजी सब कटक ले रथ पर बैठ नगरके बाहर लड़ने को जा उपस्थित हुए और शाम्ब को भयातुर देख बोले कि तुम किसी भाँति की चिंता मत करो, मैं हरि प्रताप से इस असुर को बात की बात में मार लेताहूँ इतना बचन कहकर प्रद्युम्नजी सेना ले शस्त्र पकड़ जो उसके सन्मुख खड़े हुए तो उसने ऐसी मायाकी कि दिन की रात हो गई प्रद्युम्न ने तेज बाण चलाय यों महा अन्धकार को दूर किया ज्यों सूर्य का तेज हो के दूर करे, पुनि कई एक बाण उन्होंने ऐसे मारे कि उसका रथ अस्तव्यस्त हो गया और वह खड़ा होकर कभी भाग जाता था कभी आय, अनेक राक्षसी माया उपजाय लड़ता था और प्रभु की प्रजाको अति दुःख देता था। इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षित से कहा महाराज दोनों तरफ से महायुद्ध होता था कि इसी बीच एकाएक आय शाल्वदैत्य के मन्त्री द्युमान ने प्रद्युम्न की छाती में एक गदा ऐसी मारी कि ये मूर्छा खाय गिरे इनके गिरतेही वह किलकारी मार के पुकारा मैंने श्री कृष्णजी के पुत्र प्रदूयुम्नजीको मारा महाराज यादव राक्षसों से महा युद्ध कर रहेथे उसी समय प्रदयुम्नजी को मूर्छित देख दारुक सारथी का बेटा उन्हें रथ में डाल रण से भागा और नगर में ले

आया चैतन्य होतेही प्रद्युम्नजीने अति क्रोधकर सूतसे कहा—

ऐसो नाहिं उचित रहि तोहि। जान अचेत भगायो मोहि॥
रथ तज के तू लायौ धाम। यह तो नाहिं शूरको काम॥
यदुकुल में ऐसा नहिं कोय। तजके खेतं जो भाग्यो होय॥

क्या तैंने कभीमुझे भागते देखा था, जो तू आज मुझे रथसे भगाय लाया यह बात जो सुनेगा सो मेरी हँसी और निंदा करेगा तैंने यह काम भला न किया, जो बिना काम कलंक का टीका लगा दिया महाराज। इतनी बात के सुनतेही सारथी रथसे उतर सन्मुख खड़ाहो हाथजोड़ शीश नवाय बोला, हे प्रभो! तुम सब नीति जानते हो, ऐसा संसार में कोई धर्म नहीं जिसे तुम नहीं जानते कहा है—

रथी शूर जो घायल परे। ताहि सारथी लै निकरे॥
जो सारथी परै खा घाव। ताहि बचाय रथी लै जाव॥
लागी प्रबल गदा अति भारी। मूर्छित है सुधि देह बिसारी॥
तब हौं रथ ते लै निसरी। स्वामि द्रोह अपयश ते डरी॥
घरी एक लेकर विश्राम। अब चल कर कीजै संग्राम॥
धर्मनीति तुम सकल जानिये। जग उपहास न मनै आनिये॥
अब तुम सबहीको बध करिहौ। माया सब दानव की हरिहौ॥

महाराज! ऐसे कह सूत प्रद्युम्नजी को जलके निकट ले गया वहाँ जाय उन्होंने मुख हाथ पाँव धोय सावधान हो कवच टोप पहन धनुषबाँण सँभाल सारथीसे कहा भला जो भया सो भया पर तू अब मुझे वहाँ लेचल जहाँ द्युमान यदुवंशियोंसे युद्ध कर रहा है, बातके सुनतेही सारथी बातकी बातमें रथ वहाँ लेगया, जहाँ वह लड़ रहाथा, जातेही इन्होंने ललकार कहा कि इधर उधर क्या लड़ताहै, आ मेरे सन्मुख हो जोतुझे शिशुपालकेपास भेजूं यहवचन सुनतेही वहतो प्रद्युम्नजीपर आयटूटा तो कईएकबाण मार इन्होंने उसे मार गिराया और शाम्बनेभी असुर दल काट२ समुद्रमें पाट-डुबाया।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! अब असुर दल से युद्ध करते२ द्वारिकापुरीमें सब यदुवंशियों को सत्ताईस दिन हुये तब अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्रजी ने हस्तिनापुर में बैठे२ द्वारका की दशा देख

देख२ राजा युधिष्ठिर से कहाकि, महाराज ! मैंने रात्रिमें स्वप्न देखा कि द्वारकामें महाउपद्रव हो रहाहै और सब यदुवंशी अति दुखित हैं इससे अब आप आज्ञा दो तो हम द्वारका को प्रस्थान करें यह बात सुन राजा युधिष्ठिरने हाथ जोड़ कहा कि जो प्रभुकी इच्छा, इतना वचन राजा युधिष्ठिरके मुखसे निकलतेही श्रीकृष्ण और बलराम सबसे विदाहो जो पुर के बाहर निकले तो क्या देखतेहैं कि, बांई ओर एक हरिणी दौड़ी जाती है और सोंही श्वान खड़ा शिर भाड़ताहै,यह अशकुन देख हरिने बलराम जी से कहाकि भाई तुम सबको साथ ले पीछे से आओ, मैं आगे चलताहूँ राजा भाई से यों कह श्रीकृष्णजी आगे जाय रणभूमिमें क्या देखतेहैंकि असुर यदुवंशियों को चारों ओर से बड़ी मार मार रहे हैं और वे निपट घबराय२ शस्त्र चला रहेहैं, यह चरित्र देख हरि जा वहाँ खड़े हो कुछ भावितहुयेतो बलरामजीभी आपहुँचे,उसकाल श्रीकृष्णचन्द्रजीने बलरामजी से कहा कि भाई ! तुम जाय नगर और प्रजाकी रक्षा करो मैं इन्हें मार चला आताहूँ प्रभुकी आज्ञा पाय बलदेवजीतो पुरीमें पधारे और आप हरि वहाँ रणमें गये जहाँ प्रद्युम्नजी शाल्वसे युद्ध कररहेथे, यदुपतिके आतेही शङ्खध्वनि हुई और सबने जाना कि श्रीकृष्णचन्द्र आये, महाराज ! प्रभुके आतेही शाल्व अपना रथउड़ाय आकाशमें ले गया और वहाँसे अग्नि सम बाण वर्षाने लगा उस समय श्रीकृष्णचन्द्रजीने सोलहबाण गिनकर ऐसे मारे कि, उसका रथ और सारथी उड़गया और वह तड़फड़ाय नीचे गिरा गिरतेही सँभल कर एक बाण उसने हरि की बामभुजा में मारा और यों पुकारा कि कृष्ण खड़ा रह. मैं युद्धकर तेरा बल देखताहूँ तैंने तो शङ्खासुर और शिशुपाल आदि बड़े२ बलवान योधा छलबल करके मारे हैं पर अब मेरे हाथ से तेरा बचना कठिन है।

मोसों तोहि परी अब काम। कपट छाँड़ि कीजो संग्राम ॥
कंसासुर भौमासुर अरी । तेरी मग देखत हैं हरी ॥
पठऊं तहाँ बहुर नहिं आवै । भेजे तुमहिं बड़ाई पावै ॥

यह बात सुन जो श्रीकृष्णजी ने इतना कहा रे मूर्ख अभिमानी

कायर क्रूर क्षत्रिय जो हैं गम्भीर शूरवीर, वे पहिले किसी से बड़ा बोल नहीं बोलते इतना सुन उसने दौड़कर हरि पर एक गदा क्रोध कर चलाई सो प्रभु ने सहज स्वभाव ही काट गिराई, पुनि श्रीकृष्णचन्द्रजी ने उसके एक गदा मारी वह खाय माया की ओट में जाय दो घड़ी मूर्छित हुआ फिर कपट रूप बनाय प्रभुके सन्मुख आय बोला।

दोहा—माय तिहारी देवकी, पठयौ मोहि अकुलाय।
शत्रु शाल्व बसुदेव को, पकरें लीन्हे जाय॥

महाराज! वह असुर इतना वचन सुनाय वहाँ से जाय माया का बसुदेव बनाय, बाँधलाया, श्रीकृष्णचन्द्र सोंही आय-बोला रे कृष्ण देख मैं तेरे पिताको बाँध लाया, और अब इसका शिर काट सब यदुवंशियों को मार समुद्र में डालूगा, पीछे तुझे मार एक छत्र राज करूंगा महाराज! ऐसे कह उसने माया के बसुदेव का शिर श्रीकृष्णजी के देखते२ काट डाला और बरछी के फल पर रख सबको दिखाया वह माया का चरित्र देख पहले तो प्रभु को मूर्छा आई पुनि देह संभाल मनही मन कहने लगे कि यह क्यों कर हुआ? जो यह बसुदेवजी को बलरामजी के रहते द्वारका से पकड़ लाया क्या वह उनसे भी बली है जो उनके सन्मुख से बसुदेवजी को ले निकल आया? महाराज! इसी भाँति की अनेक२ बातें कितनी एक बेर लग आसुरी माया में आय प्रभुने कीं और महा भावित रहे निदान ध्यान कर प्रभुने देखा तो आसुरी माया का भेद पाया तबतो श्रीकृष्णचन्द्रजीने उसे ललकारा, ये सुन वह आकाश को गया और लगा प्रभु पर शस्त्र चलाने, इसी बीच श्रीकृष्णचन्द्र जी ने कई एक बाण ऐसे मारे कि वह रथ समेत समुद्र में गिरा, गिरतेही सँभल गदा ले प्रभु पर झपटा तब तो हरिने उसे अतिक्रोध कर सुदर्शन चक्र से मार गिराया, ऐसे कि जैसे सुरपति ने वृत्रासुर को मार गिराया था, महाराज! उसके गिरते ही उसके शीशकी मणि निकल पृथ्वी पर गिरी और ज्योति श्रीकृष्णजी के मुख में समाई।

अध्याय ७८

(सूत बध)

श्रीशुकदेवजीबोले कि राजा ! अबमें शिशुपाल के भाई दन्तवक्र और विदूरथकी कथा कहता हूँ जैसे वे मारे गये-जबसे शिशुपाल मारागया तबसे वेदोनों श्रीकृष्णजीसे अपने भाईका पलटा लेने का बिचारकिया करते थे, निदान शाल्व और द्युमानके मरतेही अपना सब कटकले द्वारकापुरी पर चढ़ आये चारों ओरसे घेर लगे अनेक२ प्रकारके यन्त्र और शस्त्र चलाने—

परी नगर कोलाहल भारी । सुनि पुकार रथ चढ़े मुरारी ॥

आगे श्रीकृष्णचन्द्रजी नगरके बाहर जाय वहाँ खड़े हुए कि, जहाँ अति कोप किये शस्त्र लिये वे दोनों असुर लड़ने को उपस्थित थे प्रभु के देखते ही दन्तवक्र महा अभिमान कर बोला कि रे कृष्ण ! तू पहले अपना शस्त्र चलाय ले पीछे मैं तुझे मरूंगा, इतनी बात मैंने इसलिए कही कि, मरते समय तेरे मनमें अभिलाषा न रहैं कि मैंने दन्तवक्र पर शस्त्र न किया, तूने तो बड़े बड़े बली मारे हैं पर अब मेरे हाथसे जीता न बचेगा महाराज ! ऐसे कितने एक दुर्वचन कह दन्तवक्रने प्रभू पर गदा चलाई सो हरिने सहजही काट गिराई. पुनि दूसरी गदाले हरि से महायुद्ध करने लगा, तब तो भगवान ने उसे मार गिराया और उसका तेज

निकल प्रभु के मुखमें समाया, आगे दन्तवक्र का मरना देख विदूरथ ज्यों युद्ध करने को चढ़ आया, त्योंही श्रीकृष्णजी ने सुदर्शन चक्र चलाया, उसने विदूरथ का शिर मुकुट कुण्डल समेत काट गिराया पुनि सब असुर दल को मार भगाया, उसकाल-

फूले देव पुष्प बरसावें । किन्नर चारण हरि यश गावें ॥
सिद्धसाध्य विद्याधर सारे । जय जय चढ़े विमान पुकारे ॥

पुनि सब बोलेकि महाराज ! आपकी लीला अपरम्पार है कोई इसका भेद नहीं जानता, प्रथम हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष भये पीछे रावण और कुम्भकर्ण अब यह दन्तवक्र शिशुपालहो आए तुमने तीनों बेर इन्हें मारा और परम मुक्तिदी इससे तुम्हारी गति कुछ किसीसे जानी नहीं जाती महाराज ! इतनी कह देवता तो प्रभूको प्रणाम कर चले गए और हरि बलरामजी से कहने लगे कि, भाई कौरव पाण्डवों से हुई लड़ाई अब क्या करें ! बलदेवजी बोले कृपाकर आप हस्तिनापुर को पधारिए, तीरथ यात्रा कर पीछे से मैं भी आता हूँ इतनी कथा कह श्रीशुकदेव जी बोले कि, महाराज ! यह वचन सुन श्रीकृष्णचन्द्रजी तबही कुरुक्षेत्र को पधारे जहाँ कौरव और पाण्डव महाभारत युद्ध करतेथे, और बलरामजो तीर्थयात्रा को निकले आगे सब तीर्थ करते करते बलदेवजी नैमिषारण्य पहुँचे तो वहाँ क्या देखते हैं कि एक ओर ऋषि मुनि यज्ञ रचा रहे हैं और एक ओर ऋषि मुनि की सभामें सिंहासन पर बैठे सूतजी कथा बाँच रहे हैं इनको देखतेही शौनकादिक सब मुनि ऋषियों ने उठकर प्रणाम किया और सूत सिंहासन पर गद्दी लगाय बैठा देखता रहा महाराज सूत के न उठते ही बलरामजी ने शौनकादिक सब ऋषि मुनियों से कहा कि इस मूर्ख को किसने वक्ता किया और व्यास आसन दिया ? वक्ता चाहिए भक्तिमान बिवेकी और ज्ञानी यह है गुणहीन कृपण और अति अभिमानी, पुनि चाहिए निर्लोभी और परमार्थी यह है महा लोभी और अपस्वार्थी, ज्ञान हीन अविवेकी को यह व्यास गद्दी फबती नहीं इसे मारें तो क्या पर यहाँ से निकाल देना चाहिए, इस बात के सुनते ही शौनकादिक बड़े बड़े ऋषि

आय विनती कर बोले कि, महाराज ! तुम हो वीर धीर सकल धर्मनीति के जानने वाले यह कायर और अविवेकी अभिमानी अज्ञान, इसका अपराध क्षमा कीजे, क्यों कि यह व्यास गद्दी पर बैठा है ब्रह्मा के यज्ञ के धर्म के लिये इसे यहां स्थापित किया है।

आसन गर्व मूढ़ मन धरौ। उठ प्रणाम तुमको नहिं करौ॥
यही नाथ याको अपराध। परी चूक है तो यह साध॥
सूतहिं मारे पातक होय। जग में भलो कहै नहिं कोय॥
निष्फल वचन न जाय हमारो। यह तुम निज मन माहिं विचारो॥

महाराज ! इतनी बात सुनतेही बलरामजीने एक कुश उठाय सहज स्वभाव सूतको मारा, उसके लगतेही वह मर गया, यह चरित्र देख शौनकादिक मुनि ऋषि हाहाकार कर उदास हो बोले कि महाराज जो बात होनीथी सो तो हुई पर आप कृपा कर हमारी चिन्ता मेटिये प्रभु बोले तुम्हें किस बात की इच्छा है, सो तुम कहो हम पूरी करें मुनियोंने कहा महाराज! हमारे यज्ञ करने में किसी बात का विघ्न न हो, यही हमारी वासना है सो आप पूरी कीजे और जगत में यश लीजे इतना वचन मुनियों के मुखसे निकलतेही अन्तर्यामी बलरामजीने सूतके पुत्र को बुलाय व्यास गद्दी पर बैठायके कहाकि यह अपने पितासे अधिक वक्ता होगा और मैंने इसे अमर पद दे चिरञ्जीव किया, अब तुम निश्चिन्ताई से यज्ञ करो।

अध्याय ७९

(बलराम तीर्थ यात्रा गमन)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! बलरामजीकी आज्ञापाय शौनकादिक सब ऋषि मुनि अतिप्रसन्न हो यज्ञ करने लगे तो इल्वलका बेटा आय महाक्रोध कर बादल सम गर्जा, बड़ीभयङ्कर अति काली आँधी चलाय लगा आकाश से रुधिर और मल मूत्र वर्षाने अनेक उपद्रव मचने महाराज ! राक्षस की यह अनीति देख बलदेवजी ने हल मूसल का आवाहन किया, वे आय उपस्थित हुवे, पुनि महाक्रोध कर प्रभूजी ने

इल्वल को हल से खैंच एक मूसल उसके शिर पर ऐसा मारा कि—

फूट्यौ मस्तक छूटे प्राण। रुधिर प्रवाहि भयो तिहि थान ॥
कर भुज डार परो विकरार। निकरे लोचन राते पार ॥

इल्वलके मरतेही सब मुनियोंने आनि सन्तुष्ट हो बलदेवजीकी पूजाकी और बहुतसी वस्तु भेंट दी, फिर बलराम सुखधाम वहाँ से विदा हो तीर्थ यात्रा को निकले तो महाराज! सब तीर्थ कर पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करते२ वहाँपहुंचेकि कुरुक्षेत्रमें दुर्योधन और भीमसेन महायुद्ध करतेथे और पांडवों समेत श्रीकृष्णचन्द्र और बड़े२ राजा खड़े देखते थे बलरामजी के जातेही दोनों वीरोंने प्रणाम किया एकने गुरु जान दूसरेने बन्धुमान महाराज! दोनों को लड़ता देख बलरामजी बोले।

सुभट समान प्रबल दोउ वीर। अब संग्राम तजहु तुम धीर ॥
कुरु पाण्डव के राखहु वंश। बन्धु मित्र सब भये विध्वंस ॥
दोऊ सुनि बोले शिर नाय। अब रणते उतरी नहिं जाय ॥

पुनि दुर्योधन बोलाकि गुरुदेव! मैं आपके सन्मुख झूठ नहीं भाषता आप मेरी बात तनक सुनिए, यह जो महाभारत युद्ध होता है और लोग मारेगए और जातेहैं और जांयगे सो तुम्हारे भाई श्रीकृष्णचन्द्रजीके मतसे, पाण्डव केवल श्रीकृष्णजीके बलसे लड़ते हैं नहींतो इनकी क्या सामर्थ्यथी जो ये कौरवों से लड़ते, ये बापुरे तो हरिके वश ऐसे होरहे हैं कि जैसे काठकी पुतली नटुए के बश होय जिधर वह चलावें तिधर चलें उनको यह उचित न था जो पाण्डवोंकी सहायता करें हमसे इतना द्वेषकरें, दुःशासन

की भीमसेन से भुजा उखड़वाई और मेरी जांघ में गदा लगवाई तुमसे अधिक हम क्या कहेंगे ! इस समय—

जो हरि करें सोई अब होय । ये बातें जाने सबकोय ॥

यह वचन दुर्योधनके मुखसे निकलतेही इतनी कह बलरामजी श्रीकृष्णचन्द्रजीके निकटआएकि तुमसी उपाधि करने में कुछ घाट नहीं और बोले कि भाई ! तुमने क्या किया,जो युद्ध करवाय दुःशासनकी भुजा उखड़वाई और दुर्योधन की जाँघ कटवाई यह धर्मयुद्ध की रीति नहीं है कि कोई बलवान हो और किसी की भुजा उखाड़ के कटिके नीचे शस्त्र चलावे,हां धर्मयुद्ध यह है कि एकको ललकार सन्मुख शस्त्र करे श्रीकृष्णचन्द्र बोले भाई तुम नहीं जानते ये कौरव बडे अधर्मी अन्यायी हैं इनकी अनीति कुछ कही नहीं जाती पहिले,इन्होंने दुःशासन शकुनी भगदत्त के कहे से जुआ कपट कर राजा युधिष्ठिर का सर्वस्व जीत लिया, दुःशासन द्रौपदी का हाथ पकड़ लाया इससेउसके हाथ भीमसेन ने उखाड़े दुर्योधन ने सभा के बीच द्रौपदी को जाँघ पर बैठनेको कहा, इससे उसकी जाँघ काटी गई इतना कह पुनि श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि, भाई ! तुम नहीं जानते इसी भाँति की जो अनीति कौरवों ने पाण्डवों के साथ की हैं सो हम कहां तक कहेंगे इससे यह भारतकी आग किसी रीतिसे न बुझेगी तुम इसका कुछ उपाय मतकरो महाराज ! इतना वचन प्रभु के मुखसे निकलतेही बलरामजी कुरुक्षेत्रसे चले द्वारकापुरी में आए और राजा उग्रसेन व शूरसेन भेटकर हाथ जोड़ कहने लगेकि महाराज ! आपके पुण्य प्रतापसे हम सब तीर्थ यात्रा तो कर आये पर एक अपराध हमसे हुआ राजा उग्रसेन बोला सो क्या ? बलरामजी ने कहा महाराज ! नैमिषारण्यमें जाय हमने सूतकोमारा जिसकी हत्या लगी अब आपकी आज्ञा होय तो पुनि नैमिषारण्यमें जाय यज्ञके दर्शन कर फिर तीर्थ न्हाय हत्या का पाप मिटाय आवें पीछे ब्राह्मण भोजन करवाय जाति को जिमावें, जिससे जगमें यश पावें राजा उग्रसेन बोले अच्छा आप हो आइये, महाराज ! राजाकी आज्ञा पाय बलरामजी कितने एक यदुवंशियों

को साथ ले नैमिषक्षेत्रजाय स्नान दानकर शुद्धहो आए पुनि पुरोहितको बुलाय होम करवाय ब्राह्मण जिमाय जातिको खिला लोक रीति कर पवित्र हुए इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि हे महाराज !

जो यह चरित सुने मन लाय । ताको सबही पाप नशाय ॥

अध्याय ८०

(सुदामा द्वारका गमन)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि हेमहाराज ! अबमैं सुदामाकी कथा कहताहूँकि, जैसे प्रभुके पास गया और उसका दरिद्र कटा, सो तुम मन दे सुनो दक्षिण दिशा की ओर है एक द्रविड़ देश तहाँ विप्र और वणिक वसते थे नरेश जिनके राज्यमें घर२ होताथा भजन स्मरण और हरिका ध्यान पुनि सब करते थे तप यज्ञ धर्म और साधु सन्त गौ ब्राह्मण का सन्मान।

ऐसे बसें सबै तिहि ठौर । हरि बिन कछु न जाने और ॥

तिसी दिशा में सुदामा नाम ब्राह्मण श्रीकृष्णचन्द्रका गुरु भाई अति दीन धनहीन, तनछीन, महा दरिद्र, ऐसाकि, जिसके घरमें घास, नखाने को कुछ पास रहताथा, एक दिन सुदामाकी स्त्री दरिद्र से अति घबड़ाय महा दुख पाय पतिके निकट जाय, अति भय खाय, डरती काँपती बोलीकि महाराज ! अब इस दरिद्रके हाथसे महादुख पाती हूँ जो अब इसे खोया चाहिए, तो मैं एक उपाय बताऊं ब्राह्मण बोला सो क्या ! उसने कहा

तुम्हारे परम मित्र त्रिलोकीनाथ द्वारिकावासी आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्रहैं जो उनके पास जाओ तो यह दरिद्र जाय क्योंकि वे अर्थ धर्म काम मोक्ष के दाता हैं महाराज! जब ब्राह्मणीने ऐसे समझायकर कहा तब सुदामा बोलाकि हे प्रिये! बिना दिये श्रीकृष्णचन्द्र भी किसीको कुछ नहीं देते, मैं भली भाँतिसे जानता हूँ कि जन्म भर मैंने किसी को कभी कुछ नहीं दिया, बिना दिए कहाँ पाऊंगा हाँ तेरे कहनेसे जाऊंगा तो श्रीकृष्णके दर्शन कर आऊंगा, इस बात के सुनतेही ब्राह्मणी एक अति पुराने धोले वस्त्र में थोड़े से चावल बाँध ला दिए, प्रभु की भेंट के लिये और डोर लोटा और लाठी ला आगे धरी, तब तो सुदामा डोर लोटा काँधे पर डाल चावल की पोटली कांख में दबाय लाठी हाथ में ले श्रीगणेश को मनाय श्रीकृष्णचन्द्रजी का ध्यानधर द्वारिकापुरी को पधारे महाराज! बाट में चलते२ सुदामा मन ही मन कहने लगा कि भला धन तो मेरी प्रारब्ध में नहीं पर द्वारिका जानेसे आनन्दकन्द श्रीकृष्ण-चन्द्र का दर्शन तो करूंगा इसी भांतिसे सोच विचार करता करता सुदामा तीन पहर के बीच द्वारिका पुरी में पहुँचा तो क्या देखता है कि नगर के चारोंओर समुद्र है और बीचमें पुरी, वह पुरी कैसी है कि, जिसके चहुँओर बन उपबन फूल फल रहे हैं तड़ाग वापी इंदारों पर रहेंट परोहे चल रहे हैं. ठौर ठौर गायों के यूथ के यूथ चर रहे हैं तिनके साथ ग्वालबाल न्यारे ही ठकौतूहल करते हैं।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज! सुदामा उपवन की शोभा निरख पुरी के भीतर जाय देखे तो कञ्चनके मणिमय मन्दिर महा सुन्दर जगमगा रहे हैं ठांव ठांव अथाइयों में यदुवंशी इन्द्र की सी सभा किये बैठे हैं हाट बाट चौहाटों पर नाना प्रकार की वस्तु बिक रही हैं घर२ जिधर तिधर गौदान हरि भजन और प्रभु का यश हो रहा है और सारे नगर निवासी महाआनन्दमें हैं, महाराज! यह चरित्र देखता देखता और श्रीकृष्णचन्द्रजी को पूछता पूछता सुदामा प्रभुकी सिंह पौरि पर खड़ा हुआ

इसने किसीसे डरतेडरते पूछाकि श्रीकृष्णचन्द्रजी कहाँ विराजते हैं, उसनेकहा कि देवता आप मन्दिर के भीतर जावो सन्मुख श्रीकृष्णजी रत्न सिंहासन पर बैठे हैं, महाराज! इतना वचन सुन सुदामा जो भीतर गया, तो देखतेही श्रीकृष्णजी सिंहासन से उतर आगे बढ़ भेंटकर अति प्यार से हाथ पकड़ उसे ले गए पुनि सिंहासनपर बिठाय पाँव धोय चरणामृत लिया आगे चन्दन अक्षत लगाय, पुष्पचढ़ाय, धूपदीप कर प्रभुने सुदामाकी पूजाकी।

इतना करि हरि जोरे हाथ। कुशल क्षेम पूछत यदुनाथ॥

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा से कहा कि महाराज यह चरित्र देख रुक्मिणी समेत आठों पटरानियाँ और सब यदुवंशी जो उस समय वहाँ थे मन ही मन यों कहने लगेकि, इस दरिद्री दुर्बल मलीन वस्त्र हीन ब्राह्मणने ऐसा क्या अगले जन्म पुण्य कियाथा जो त्रिलोकीनाथ ने इसे इतना मान दिया महाराज अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्र उस काल सबके मनकी बात समझ कर उनका सन्देह मिटानेको सुदामासे गुरु के घरकी बात करने लगे कि, भाई! तुम्हें वह सुधहै, जो एकदिन गुरु पत्नीने हमें ईन्धन लेनेको भेजाथा और जब बनमें ईन्धनले गठरिया बाँध शिर पर धर घरको चले, तब आँधी और मेह आया और लगा मूसलधार बर्षने जल थल चारों ओर भर गए हम तुम भीगकर महादुख पाय जाड़ा खाय रात भर एक वृक्ष के नीचे रहे भोरही गुरुदेव ढूंढ़ते२ बन में आये और अति करुणाकर आशीष दे हमें तुम्हें अपने साथ घर लिवाय लिये।

इतनी कथा कह श्रीकृष्णचन्द्र बोलेकि भाई जबसे तुम गुरुदेवके यहाँ से बिछुड़े तबसे हमने तुम्हारा समाचार न पाया कि कहाँ थे और क्या करते थे अब आय दर्शन दिखाय तुम ने हमें महासुख दिया और घर पवित्र किया सुदामा बोला हे कृपा सिन्धु दीनबन्धु स्वामी अन्तर्यामी तुम सब जानों हो, कोई बात संसार में ऐसी नहीं जो तुमसे छिपी है।

❀❀❀

अध्याय ८१

(सुदामा दरिद्र संहार)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि राजा अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्रजीने सुदामा की बात सुन और उसके अनेक मनोरथ समझ हँसकर कहाकि भाई भाभी ने हमारे लिये क्या भेंट भेजी है सो देते क्यों नहीं, कांख में किस लिये दबाय रहे हो, महाराज यह वचन सुन सुदामा तो सकुचाय शिर झुकाय रहा और प्रभुने उठ चावलकी पोटली उसकी कांखसे निकालली पुनि खोल उसमें से अति रुचिकर दो मुट्ठी चावल खाए और ज्यों तीसरी मुट्ठीभरी त्यों रुक्मिणी ने हरि का हाथ पकड़ा और कहा कि महाराज आपने दो लोक तो इसे दे दिए अब अपने रहने को कोई ठौर रक्खोगे कि नहीं ब्राह्मण तो सुशील, कुलीन, अति वैरागी महा त्यागी सा दृष्टि आता है क्योंकि इसे विभव पानेसे कुछ हर्ष न हुआ इससे मैंने जानाकि, येलाभ हानि समान जानते हैं, न इन्हें पाने का हर्ष न इन्हें जाने का सोच-इतनी बात रुक्मिणी के मुख से निकलते ही श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा कि हे प्रिये ये मेरा परम मित्र है इसके गुण मैं कहां तक बखानूं यह सर्वदा मेरे स्नेह में मगन रहता है और उसके आगे संसार के सुख को तृणवत समझता है, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज

ऐसे अनेक प्रकार की बातें कर प्रभू रुक्मिणी को समझाय सुदामा को मन्दिर में लिवाय ले गये और षटरस भोजन करवाय पान खिलाय हरि ने सुदामा को फैन्सी सेज पर ले जाय बैठाया वह पथ का हारा थका तो था ही सेज पर सुख पाय सो गया।

प्रभु ने विश्वकर्मा को बुलाय समझाय के कहा कि तुम अभी जाय सुदामा के मन्दिर अति सुन्दर कंचन रत्न के बनाय तिनमें अष्ट सिद्ध नवनिधि धर आओ जो इसे किसी बात की कांक्षा न रहे इतना वचन प्रभु के मुख से निकलते ही विश्वकर्मा वहां जाय बात की बात में बनाय आया और हरि से कह अपने स्थान को गया भोर होते ही सुदामा उठ स्नान ध्यान भजन पूजा से निश्चिन्त हो हरि के पास बिदा होने गया उस समय श्रीकृष्णाचन्द्रजी मुख से तो कुछ न बोल सके पर प्रेम में मग्नहो आंखें डबडबाय शिथिल हो देख रहे, सुदामा बिदा हो प्रणाम कर अपने घर को चला और पथ में जाय मन ही मन विचार करने लगा भला भया जो मैंने हरि से कुछ न माँगा जो उनसे कुछ माँगता तो वे देते तो सही, पर मुझे लोभी लालची समझते कुछ चिंता नहीं, ब्राह्मणी को मैं समझा दूंगा श्रीकृष्णाचन्द्रजी ने मेरा अति मान सन्मान किया और मुझे निर्लोभी जाना यही मुझे लाख है महाराज ! ऐसे सोच विचार करता करता सुदामा अपने गाँव के निकट आया तो क्या देखता है कि न गाँव है न वह टूटी मढ़ैया वहाँ तो एक इन्द्रपुरी सी बसी है, देखते ही सुदामा अति दुखित हो कहने लगा कि हे नाथ ! तुमने यह क्या किया एक दुख तो था ही दूसरा और दिया यहाँ से मेरी झोंपड़ी क्या हुई और ब्राह्मणी कहाँ गई किससे पूछूं और कहाँ ढूंढूं ! इतना कह द्वार पर जाय सुदामा ने द्वारपालों से पूछा कि यह मन्दिर अति सुन्दर किसका है तब द्वारपालों ने कहा कि श्रीकृष्णजी के मित्र सुदामाजी का, यह बात सुन जो सुदामा कुछ कहने को हुआ तो भीतर से देख उसकी ब्राह्मणी अच्छे वस्त्र आभूषण पहन

नख शिख से शृङ्गार किये पान खाय सुगन्ध लगाय सखियों को साथ लिये पतिके निकट आई।

पाँयन परि आटम्बर डारे। हाथ जोर ये वचन उचारे॥
ठाढ़े क्यों मन्दिर पग धारो। मन सों सोच करो तुम न्यारो॥
तुम पीछे बिश्वकर्मा आये। तिन मन्दिर पल माँझ बनाये॥

महाराज इतनीबात ब्राह्मणीके मुखसेसुन सुदामाजी मन्दिरमेंगए और अति विभवदेख महाउदासभये ब्राह्मणी बोली स्वामी धनपाय लोग प्रसन्न होते हैं,तुम उदासहुये इसका क्याकारणहै,सोकृपाकर कहिए जोमेरे मनका सन्देह जाय सुदामाबोलाकिहेप्रिये! यहमायाबड़ीठगिनीहै इसने सारेसंसारको ठगाहै,ठगतीहै और ठगेगी सोप्रभुनेमुझेदी औरमेरेप्रेमकीप्रतीतनकीमैंने उनसे कबमाँगीथी जो उन्होंने मुझेदी इसीसे मेरा चित्त उदासहै ब्राह्मणीबोली स्वामी तुमनेतो श्रीकृष्णजीसे कुछ न माँगा था, पर अन्तर्यामी घट२ की जानतेहैं मेरे मनमें धनकी वासनाथी, सो प्रभुने पूरी की, तुम अपने मनमें और कुछ मत समझो।

इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजापरीक्षितसे कहाकि महाराज! इस प्रसङ्ग को जो सदा सुने सुनावेगा, सो जन जगतमें आय दुख कभी न पावेगा और अन्तकाल वैकुण्ठ धाम जावेगा।

अध्याय ८२

(श्रीकृष्णबलराम कुरुक्षेत्र गमन)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि,राजा!अबमैं प्रभुके कुरुक्षेत्र जानेकी कथा कहताहूँ तुम चित्तदे सुनोकि जैसे द्वारिकासे सब यदुवंशियोंको साथले श्रीकृष्णचन्द्र और बलराम सूर्यग्रहण न्हाने कुरुक्षेत्रगए राजाने कहा महाराज आप कहिए मैं मनदे सुनताहूँ।पुनि शुकदेवजी बोले कि महाराज एक समय सूर्य ग्रहणका समाचारपाय श्रीकृष्णचन्द्र और बलदेवजीने राजाउग्रसेनके पास जायके कहाकि महाराज बहुत दिन पीछे सूर्यग्रहण आया है जो इस पर्व को कुरुक्षेत्रचलकर स्नानकरें तो बड़ापुण्य होय क्योंकि शास्त्रमें लिखाहैकि कुरुक्षेत्रमें जो दान पुण्य करिये सहस्र गुण होय, इतनी बातके सुनतेही यदु

वंशियोंने श्रीकृष्णजी से पूछा कि महाराज ! कुरुक्षेत्र ऐसा तीर्थ कैसेहुआ सो कृपाकर हमको समझायके कहिए श्रीकृष्णचन्द्र बोलेकि, सुनो जमदग्नि

ऋषि बड़े ज्ञानी तपस्वीथे, तिनके तीन पुत्र हुये उनमें सबसे बड़े परशुराम सो वैराग्य ले घरछोड़ चित्रकूट जाय रहे और सदाशिवकी तपस्या करने लगे लड़कोंके होतेही जमदग्नि ऋषि गृहस्थाश्रम छोड़ वैराग्यले स्त्री सहित बनमेंजाय जपतप करनेलगे उनकी स्त्रीका नाम रेणुका सो एकदिन अपनी बहनको नौतनेगई, उसकी बहन राजा सहस्रार्जुनकी स्त्री थी नौता देतेही अहंकार कर राजा सहस्रार्जुन की रानी रेणुका की बहन हँस कर बोली बहन तुम हमें हमारे कटक समेत जिमाय सको तो नौता दो नहीं तो न दो कि महाराज यह बातसुन रेणुका अपनासा मुंहले चुपचाप वहाँसे उठ अपने घर आई इसे उदास देख जमदग्नि ऋषिने पूछा कि आज क्या है जो तू अनमनी हो रहीहै महाराज ! बातके पूछतेही रेणुकाने रोकर सब ज्योंकीत्यों बात कही सुनतेही जमदग्निऋषिने स्त्रीसे कहा कि अच्छा तू जायके अभी अपनी बहन को कटक समेत नौतआ पतिकी आज्ञा पाय रेणुका बहन के घरजाय नौतआई उसकी बहनने अपने स्वामीसे कहा-कल तुम्हें हमें दलसमेत जमदग्नि के यहाँ भोजन करने जानाहै स्त्री की बात सुन अच्छा कह वह हँस चुप हो रहा, भोरहोतेही जमदग्नि उठकर राजा इन्द्रके पास गए और कामधेनु माँग लाए पुनि जाय सहस्रार्जुनको बुलाय

लाये यह कटक समेत आया तिसे जमदग्नि ने इच्छा भोजन खिलाया कटक समेत भोजन कर राजा सहस्राजु न अति लज्जित हुआ और मन ही मन कहने लगाकि, इसने इतने लोगों की सामिग्री रात भर में, कहाँ पाई और कैसे बनाई इसका भेद कुछ जाना नहीं जाता इतना कह विदा होय उसने अपने घर जाय योंकह एक ब्राह्मण को भेजदिया कि, देवता तुम जमदग्नि ऋषि के घरजाय इस बातका भेद लावो कि, उसने किसके बलसे एक दिनके बीच मुझे कटक समेत नौत जिमाया, इतनी बातके सुनते ही ब्राह्मण जाय देख आया सहस्राजु नसे कहाकि महाराज उसके घरमें कामधेनु है उसीके प्रभावसे तुम्हें एक दिनमें नौत जिमाया यह समाचारपाय सहस्राजु नने उसीब्राह्मण से कहा कि देवता तुम जाय हमारी ओर से जमदग्नि ऋषि से कहो कि सहस्राजु न ने कामधेनु मांगी है इस बातके सुनते ही वह ब्राह्मण सन्देश ले ऋषि के पास गया और उसने सहस्राजु न की बात कही ऋषी बोले कि यह गाय हमारी नहीं जो हमदें, यह तो राजा इन्द्र की है, हम दे नहीं सकते तुम जाय अपने राजासे कहो बातके सुनते ही ब्राह्मणने जाय राजा सहस्राजु नसे कहा कि महाराज ऋषि ने कहा है कि कामधेनु हमारी नहीं, यह तो राजा इन्द्र की है इसे हम नहीं दे सकते इतनी बात ब्राह्मण के मुख से निकलतेही सहस्राजु न ने अपने कितने एक योद्धाओं को बुलाय के कहा तुम सभी जाय जमदग्निके घरसे कामधेनु खोल लाओ, स्वामी की आज्ञा पाय योद्धा ऋषिके स्थान परगये औरजो धेनुको खोल जमदग्निके घरसेचले तो ऋषि ने दौड़ कर बाट में जाय कामधेनु को रोका यह समाचार पाय क्रोध कर सहस्राजु न ने आ ऋषि का शिर काट डाला. कामधेनु भाग इन्द्र के यहाँ गई रेणुका आय पति के पास खड़ी भई।

दोहा—शिर खसोट लोटति फिरै, बैठि रहे गहि पाय।
छाती पीटे रुदन कर, पिय पिय कह बिलखाय॥

उस काल रेणुका का बिलखना बिलाप करना और रोना सुन दश दिशा के दिक्पाल काँप उठे और परशुरामजी का तप करते आसन डिगा

और ध्यानछूटा ध्यान छूटतेही ज्ञानकर परशुरामजी अपना कुठार ले वहाँ आये जहाँ पिताकी लाशपड़ीथी, और माता रोती पीटती खड़ीथी देखतेही परशुरामजीको महाकोप हुआ, इसमें रेणुकाने पतिके मरजाने का सबभेद पुत्रको रोरो कहसुनाया, बातके सुनतेही परशुरामजीइतना कह तहाँगयेजहाँ सहस्त्रार्जुन अपनी सभामें बैठा थाकि माता पहलेमें अपने पिताके बैरीको मारआऊं तबआय पिताकोउठाऊंगा उसेदेखतेही परशुराम कोपकरबोलेकि

अरे क्रूर कायर कुल द्रोही। तात मारि दुख दीन्हों मोही॥

ऐसे कह जब फरसा ले परशुरामजी महाकोपमें आए,तब वह भी धनुष बाणले इनकेसोंही खड़ा हुआ, दोनों बली महायुद्ध करनेलगे निदान लड़ते२ परशुरामजीने चारघड़ीके बीच सहस्त्रार्जुन को मार गिराया, पुनि उसका कटक चढ़ आया तिसे भी उन्होंने उसीके पास काटडाला फिर वहाँसे आय पिताकी गतिकरी और माताको समझायपुनि उसीठौर परशुरामजीने रुद्रयज्ञकिया तभीसे वह स्थान कुरुक्षेत्र कह कर प्रसिद्धहुआ वहाँजाकर जो कोई दान, स्नान तप यज्ञ, करताहै, उसे सहस्त्र गुण फल होता है।

इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज! इस प्रसङ्गके सुनने ही सब यदुवंशियों ने प्रसन्न हो श्रीकृष्णचन्द्रजी से कहा कि महाराज! शीघ्र कुरुक्षेत्र को चलिये अब बिलम्ब न करिए क्योंकि पर्वपर पहुँचनाचाहिए इसबातके सुनतेही श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजी ने राजा उग्रसेन से पूछा कि महाराज! सब कोई कुरुक्षेत्र चलेंगे यहाँ पुरी की चौकसी को कौन रहेगा, राजा उग्रसेन ने कहा अनिरुद्धजी को रख चलिए राजा की आज्ञा पाय प्रभुने अनिरुद्धजी को बुलाय समझाकर कहा कि बेटा, तुम यहाँ रहो, गौ ब्राह्मणकी रक्षा करो और प्रजाको पालो, हम राजाजी के साथ सब यदुवंशियोंके साथ कुरुक्षेत्र न्हाय आवें, अनिरुद्धजीने कहा जो आज्ञा, महाराज! एक अनिरुद्धजी को पुरीकी रखवाली में छोड़ शूरसेन, बसुदेव, उद्धव, अक्रूर,

कृतवर्मा आदि छोटे बड़े यदु वंशी अपनी२ स्त्रियों समेत राजा उग्रसेन के साथ कुरुक्षेत्र चलनेको उपस्थित हुए जिस समय कटक समेत राजा उग्रसेनने पुरीके बाहर डेरा किया उस काल सब जाय मिले, तिनके पीछे से श्रीकृष्णजी भाई भौजाई को साथ ले और पटरानी और सोलह सहस्त्र एक सौ रानियों व बेटों पोतों समेत जाय मिले प्रभु के पहुँचते ही राजा उग्रसेन ने वहाँ से डेरा उठाय राजा इन्द्र की भाँति बड़ी धूमधाम से आगे को प्रस्थान किया, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! कितने एक दिनों में चले२ श्रीकृष्णचन्द्र सब यदुवंशियों समेत आनन्द मङ्गल से कुरुक्षेत्र में पहुँचे वहाँ जाय पर्व में सबने स्नान किया और यथा शक्ति हर एक ने हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी अस्त्र शस्त्र, आभूषण अन्न धन दान दिया पुनि वहाँ सबों ने डेरे डारे महाराज ! श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजी के कुरुक्षेत्र के जाने का समाचार पाय चहुँ ओर के राजा कुटुम्ब सहित अपनी२ सेना ले ले वहां आये और श्रीकृष्ण बलराम जी से मिले, पुनि सब कौरव पाण्डव भी अपना२ दल ले ले सकुटुम्ब वहां आय मिले उस काल कुन्ती और द्रौपदी यदुवंशियों के रनिवास में जाय सबसे मिलीं आगे कुन्ती ने भाई के सन्मुख जाय कहा कि, भाई मैं बड़ी अभागी जिसदिन से भागी उसी दिनसे दुःख उठाती हूँ तुम ने जबसे ब्याह दी तब से मेरी सुध कभी न ली और राम कृष्ण जो सबके सुखदाई, उनको भी दया कुछ न आई, महाराज ! इस बात के सुनते ही करुणा कर आँखें भर वसुदेवजी बोले कि, बहन ! मुझे क्या कहती है इस में मेरा कुछ वश नहीं कर्म की गति जानी नहीं जाती हरि इच्छा प्रबल है देखो कंस के हाथ मैंने भी क्या२ दुख न पाया। महाराज ! इतना कह बहन को समझाय बुझाय वसुदेवजी वहाँ गये जहां सब राजा उग्रसेन की सभा में बैठे थे और, राजा दुर्योधन आदि बड़े२ नृप और पाण्डव उग्रसेन की ही बड़ाई करते थे कि राजा ! तुम बड़ भागी हो जो सदा श्री कृष्णचन्द्र का दर्शन पाते हो और जन्म२ का पाप गंवाते हो जिन्हें शिव

विरंचि आदि सब देवता खोजते फिरें सो प्रभु तुम्हारी सदा रक्षा करें,जिन का भेद योगीयती,मुनि ऋषि न पावें,सो हरि तुम्हारी आज्ञालेने आवें,जो हैं सब जगकेईश वेहीतुम्हें नवाते शीश इतना कह श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज! ऐसे सब राजा आय राजा उग्रसेनकी प्रसंशा करतेथे और वे यथायोग्य सबको समाधान करतेथे इसमें श्रीकृष्ण बलरामजीका आना सुन नन्द उप नन्दजी सकुटुम्ब सबगोपीगोपग्वालबालसमेत आनपहुँचे स्नानदानसेशुचित्त हो नन्दजीवहाँ गये,जहाँ पुत्रसहित बसुदेव विराजतेथे,इन्हेंदेखतेही बसुदेवजी उठकरमिले और दोनोंने परस्पर प्रेमकर ऐसे सुखमानाकि जैसे कोई गईवस्तु पाय सुखमाने आगे बसुदेवजीने नन्दरायसे ब्रजकीसबपिछलीबात कहसुनाई, जैसे नन्दरायजीने श्रीकृष्णबलरामजीको पालाथा,महाराज इस बातके सुनते ही नन्दरायजीने नयनोंमें नीरभर बसुदेवजीका मुख देखरहे उस काल श्री कृष्णबलदेवजी प्रथम नन्द यशोदाजीको यथायोग्य दण्डवत् प्रणाम कर पुनि ग्वाल बालोंसे जायकर मिले तहाँ गोपियोंने आय हरि का चन्द्रमुख निरख२ अपने नयनचकोरोंको बहुतसा सुखदिया औरजीवनका फललिया।

प्रभु आधीन सकल जग आहिं। कित दुखकरो देख जग माहिं॥

इतनी कह श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! बसुदेव देवकी रोहिणी श्रीकृष्ण बलरामसे मिलेजो कुछ प्रेम नन्दउपनन्द यशोदा गोपी ग्वालबालों ने किया, सो मुझसे कहा नहीं जाता वह देखते ही बनि आवे, निदान सबको स्नेहमें निपट अति व्याकुल देख श्रीकृष्णचन्द्रजी बोलेकि सुनो।

मेरी भक्ति जो प्राणी करे। भव सागर निर्भय सो तरे॥
तन मन धन तुम अर्पण कीन्हौं। नेह निरन्तर कर मोहि चीन्हौं॥
तुम सम बड़ भागी नहिं कोय। ब्रह्म रुद्र इन्द्रादिक होय॥
योगीश्वरके ध्यान न आयो। तुमसङ्ग रहिनित प्रेम बढ़ायो॥
हौं सबही के घट घट रहौं। अगम अगाध जु बाणी वहौं॥

जैसे तेज,जल अग्नि पृथ्वी आकाश का है देहमें वास, तैसे सर्वघट में भरा है प्रकाश। श्रीशुकदेवजी बोलेकि-महाराज,जब श्रीकृष्णचन्द्रने यह सब भेद कह सुनाया तब सब ब्रजवासियों को धीरज आया।

अध्याय ८३

(स्त्री गीत वर्णन)

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज! द्रौपदी और श्रीकृष्णचन्द्रजी की स्त्रियों में परस्पर बातें हुई सो प्रसङ्ग मैं कहता हूँ, तुम सुनो एक दिन कौरव और पाण्डवोंकी स्त्रियाँ श्रीकृष्णजीकी नारियोंके पास बैठी थीं और गुण गाती थीं इसमें कुछ वार्ता जो चली तो द्रौपदीने रुक्मिणीजी से कहा कि सुन्दरी! कह तूने श्रीकृष्णचन्द्रजीको कैसे पाया श्रीरुक्मिणीजी बोलीं मेरे पिताको मनोरथ था कि मैं अपनी कन्या श्रीकृष्णचन्द्र को दूं और भाईने राजा शिशुपाल के देने का मन किया, वह बरात ले व्याहने को आया और श्रीकृष्णचन्द्रजीको मैंने ब्राह्मण भेज बुलाया व्याहके दिन मैं जो गौरी की पूजाकर घर को चली तो श्रीकृष्णचन्द्रने सब असुर दल के बीचसे मुझे उठायके ले रथ में बैठाय अपनी बाट ली तिस पीछे समाचार पाय सब असुर दल प्रभुपर आय टूटा, सो हरिने सहजही मार भगाया पुनि मुझे ले द्वारका पधारे वहाँ जातेही राजाउग्रसेन शूरसेन बसुदेवजीने वेदकी विधिसे श्रीकृष्णचन्द्रजी के साथ मेरा व्याह किया विवाहके समाचार पाय मेरे पिताने बहुतसा यौतुक भिजवाय दिया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षितसे कहा कि महाराज। इसी प्रकार द्रौपदी ने सत्यभामा

जाम्बवती, कालिन्दी, भद्रा, सत्या मित्रविन्दा लक्ष्मणा आदि श्रीकृष्णजीकी सोलह सहस्त्र एकसौ आठ पटरानियोंसे पूछा और एक२ ने सब समाचार अपने२ विवाह का ब्यौरे समेत कहा।

अध्याय ८४

(बसुदेव कृत यज्ञ वर्णन)

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज! अब मैं सब ऋषियोंके आनेकी और बसुदेवजी के यज्ञ करनेकी कथा कहताहूँ तुम चितदे सुनो महाराज! एक दिन राजा, उग्रसेन शूरसेन, बसुदेव, श्रीकृष्ण बलराम सब यदुवंशियों समेत सभा किए बैठे थे और सब देश२ के नरेश वहाँ उपस्थितथे कि इस बीच आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्रके दर्शनकी अभिलाषा कर व्यास वसिष्ठ, वामदेव विश्वामित्र पराशर भृगु, पुलस्त्य, भरद्वाज मार्कण्डेयआदि अट्ठासी सहस्त्र ऋषि वहाँ आए तिनके साथ नारद भी आये, उन्हें देखतेही सभा सब उठ खड़ी हुई, पुनि सब दण्डवत् कर पाटम्बरके पावड़े डाल सब को सभामें लेगए, आगे श्रीकृष्णचन्द्रने सबको आसनपरबैठा पाँवधोय चरणामृतले पिया और सारी सभा पर छिड़क कर फिर चन्दन अक्षत, धूप दीप नवेद्यकर भगवानने सबकी पूजा कर परिक्रमाकी, पुनि हाथजोड़ सन्मुख खड़े हो हरि बोलेकि धन्यभाग्य हमारे जो आपने आय घर बैठे दर्शन दिया साधु का दर्शन गङ्गा के स्नान समान है जिसने साधु का दर्शन पाया उसने जन्म जन्म का पाप गँवाया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज!

श्री भगवान वचन जब कहे। तब सब ऋषी विचारत रहे॥

किजो प्रभु ज्योति स्वरूप और सकल सृष्टिका कर्ता सो जब यह बात कहे तब और की किसने चलाई मन ही मन सब मुनियों ने जब इतना कहा तब नारदजी बोले।

सुनो सभी तुम सब मन लाय। हरि माया जानी नहिं जाय॥

ये आपही ब्रह्माहो उपजातेहैं, विष्णुहो पालतेहैं शिवहो संहारतेहैं इनकी

गति अपरम्पारहै इसमें किसीकी बुद्धि कुछ काम नहीं करती पर इतना इन की कृपासे हमजानतेहैं, कि साधुओंको सुखदेने को और दुष्टोंको मारने को और सनातन धर्म चलावनेको बार बार अवतार ले प्रभु आतेहैं महाराज! जो इतनी बात कह नारदजी सभासे उठने को हुए तो बसुदेवजी सन्मुख आय हाथ जोड़ बिनती कर बोलेकि हे ऋषिराज! मनुष्य संसार में आय कर्म बन्धनसे कैसे छूटे कृपाकर कहिये, महाराज! यह बात बसुदेवजी के मुखसे निकलतेही सब ऋषिमुनि नारदजीका मुख देख रहे नारद जी ने मुनियोंके मनका अभिप्राय समझकर कहाकि हे देवताओ! तुम इस बात का अचरज मत करो, श्रीकृष्णजीकी माया प्रबलहै, इसने सारे संसार को जीत रक्खाहै, इसीसे बसुदेवजीने यह बातकही और दूसरे ऐसा भी कहा है कि, जो जन जिसके समीप रहता है वह उसका गुण प्रवाह और प्रताप माया के वश हो नहीं जानता, जैसे–

गङ्गावासी अनहित जाई। तजि के गङ्ग कूप जल न्हाई॥
योंही यादव भये अयाने। नाहीं कछुक कृष्ण गति जाने॥

इतनी बात कह नारदजीने मुनियोंके मनका सन्देहमिटाय बसुदेवजी से कहाकि, महाराज शास्त्रमें कहाहै जो नर तीर्थ दान, तप व्रत यज्ञ करता है, सो संसारके बन्धनसे छूटकर मुक्ति पाताहै, इसबातके सुनतेही प्रसन्न हो बसुदेवजीने बातकीबातमें सब यज्ञकी सामा मँगवाय उपस्थितकी और ऋषियों से और मुनियों से कहा कि, महाराज! कृपा कर यज्ञ का आरम्भ कीजिये, महाराज! बसुदेवजीके मुखसे इतना वचन निकलतेही ब्राह्मणों ने यज्ञ का स्थान बनाय सँवारा इस बीच स्त्रियों समेत बसुदेवजी वेदीमें जाय बैठे सब राजा और यादव यज्ञ की टहल में आ उपस्थित हुवे, इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितसे कहाकि, महाराज! जिस समय बसुदेवजी वेदी में जाय बैठे उसकाल वेदकी विधिसे मुनियोंने यज्ञ का आरम्भ किया और लगे वेद मन्त्र पढ़२ आहुति देने और देवता सब भाग आय लैने, महाराज! जिसकाल यज्ञ होने लगा उसकाल उधर किन्नर गन्धर्व भेरी, दुन्दुभी बजाय२ गुण गाते थे, इधर चारण बन्दीजन यश

बखानतेथे उर्वशी आदि अप्सरा नाचती थीं और देवता अपने२ विमानों में फूल बरसातेथे और याचक जयजयकार करतेथे, इसमें यज्ञ पूर्ण हुआ और बसुदेवजीने पूर्णाहुतिदे ब्राह्मणोंको पाटम्बर पहिराय अलंकार,रत्न धन, बहुतसा दिया उन्होंने वेदमन्त्र पढ़२ आशीर्वाद किया आगे सब देश के नरेशों को भी बसुदेव ने पहिराया और जिमाया पुनि उन्होंने यज्ञकी भेंट कर बिदाहो अपनी२ बाटली महाराज! सब राजाओंके जातेही नारद जी समेत सारे ऋषिभी विदा हुए पुनि नन्दराय जी गोप गोपी ग्वालबाल समेत जब बसुदेवजी विदा होने लगे, उस समय की बात कुछ कही नहीं जाती इधरतो यदुवंशी करुणाकर अनेक २ प्रकारकी बात करतेथे और उधर सब ब्रजवासी उसका बखान, कुछ कहा नहीं जाता सो देखते ही बनि आवै, निदान बसुदेवजी श्रीकृष्ण बलरामजीने सब समेत नन्द रायजी को समझाय बुझाय, पहराय और बहुत सा धन दे बिदा किया इतनी कथा कह श्रीशुदेवजी बोलेकि महाराज इसी भाँति श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजी पर्व न्हाय यज्ञकर सब समेत जब द्वारकापुरी में आये तो घर घर मङ्गल आनन्दभये बधाये।

अध्याय ८४

(देवकी मृतक पुत्रानयन)

श्रीशुकदेवजी बोले कि, महाराज। द्वारकापुरी के बीच एक दिन श्रीकृष्णचन्द्रजी और बलरामजी बसुदेवजी के पास गये तो वे इन दोनों भाइयों को देख यह बात मनमें विचार उठ खड़े हुए कि कुरुक्षेत्र में नारदजीने कहा था कि श्रीकृष्णचन्द्र जगत के कर्ता दुखहर्ता हैं और हाथ जोड़ बोले, हे प्रभो ! अलख, अगोचर, अविनाशी सदा सेवतीहैं तुम्हें कमला भई दासी, तुमहो सब देवनके देव, कोई नहीं जानता तुम्हारा भेद, तुम्हारी ही ज्योति हे चन्द्र, सूर्य, पृथ्वी आकाश,तुम्हीं करतेहो सब ठौर२ में प्रकाश तुम्हारी माया है प्रबल, उसने सारे संसार भुलाय रक्खाहो त्रिलोक में सुर, नर, मुनि ऐसा कोई नहीं जोउसके हाथ से बच गया हो महाराज, इतना कह पुनि, वसुदेव बोले कि हे कृपानाथ।

कोउ न भेद तुम्हारो जानै । वेदन माँझ अगाध बखानै ॥
शत्रु मित्र कोऊ न तिहारो । पुत्र पिता न सहोदर प्यारो ॥
पृथ्वी भार हरण अवतारौ । जनके हेत वेष बहु धारौ ॥

महाराज, ऐसे कह बसुदेवजी बोले कि, हेकरुणासिन्धु ! दीनबन्धु !! जैसे आपने अनेक लोगोंको तारा तैसे कृपाकर मेरा भी निस्तार कीजे जो भवसागर पारहो आपके गुण गाऊँ श्रीकृष्णजी बोले कि हे पिता तुमज्ञानी होय पुत्रों की बड़ाई क्यों करते हो, टुक आपही मनमें विचारो कि भगवान की लीला अपरम्पार है उसका पार किसीने आजतक नहीं पाया देखोवह।

घट घट माहिं ज्योति ह्वै रहै । ताही सों जग निर्गुण कहै ॥
आपहि सिरजे आपहिं हरै । रहै मिल्यौ वांच्यौ नहिं परै ॥
भू आकाश अग्नि जल ज्योति । पंच तत्व ते देह जु होति ॥
प्रभु की शक्ति सबन में रहै । वेद माहिं विधि ऐसे कहै ॥

महाराज ! इतनीबात श्रीकृष्णजीके मुखसे सुनतेही बसुदेवजी मोहवश होय चुपकर हरिका मुख देखरहे तब प्रभु वहाँसे चले माताके निकटगयेतो पुत्रका मुख देखतेही देवकीजी बोलीं हे आनन्दकन्द कृष्णचन्द्र ! एकदुख मुझे जब तब शालेहै प्रभु बोले सो क्या देवकीजीने कहाकि पुत्र ! तुम्हारे छः बड़े भाई सो कंसने मार डालेहैं उसका दुख मेरे मनसे नहीं जाता ।

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! बातके सुनतेही श्रीकृष्णजी इतना कह पाताल पुरीको गये कि माता ! तुम अब मत कुढ़ो मैं अपने भाइयोंको अभी जाय ले आताहूँ प्रभु के जातेही समाचार पाय राजा बलि आय अति

धूमधाम से पाटम्बर पाँवड़े डाल निजमन्दिर में लिवायलेगया, आगे सिंहासनपर बिठाय राजा बलिने चन्दन, अक्षत, पुष्प चढ़ाय धूपदीपनैवेद्य कर श्रीकृष्णजीकी पूजा की पुनि सन्मुख खड़ाहो हाथ जोड़ अति स्तुति कर बोलाकि, महाराज ! आपका आना यहाँ कैसेहुआ ? हरि बोले कि राजा ! सत्ययुगमें मरीचि नाम एक ऋषि बड़े ब्रह्मचारी, ज्ञानी, सत्यवादी और हरिभक्तथे उनकी स्त्री का नाम उरना, उनके छः बेटे थे एकदिन वे छहों भाई तरुण अवस्था में प्रजापति के सन्मुख जाय हँसे उनको हंसता देख प्रजापतिने महा कोपकर यह शापदिय कि तुमजाय अवतार ले असुर हो महाराज ! इसबातके सुनतेही ऋषिपुत्र अति भय खाय प्रजापतिके चरणों पर जा गिरे और बहुत गिड़गिड़ाय अति विनती कर बोलेकि कृपासिन्धु ! आपने शापदिया, पर अब कृपाकर कहिए कि इस शाप से हम कब मोक्ष पावेंगे, इनके दीनवचन सुन प्रजापतिने दयालु हो कहा कि, तुम श्रीकृष्ण जी का दर्शन पाय मुक्त होगे महाराज ।

इतनी कहत प्राण तजिगये । ते हिरणाकुश पुत्र जु भये ॥
पुनि वसुदेव के जन्मे जाय । तिनको हत्यो कंस ने आय ॥
मारि तिन्हैं माया ले आई । इहठाँ राखि गई सुखदाई ॥

उनका दुःख मातादेवकी करती हैं इसलिये हम यहाँ आएहैंकि अपने भाइयों को ले जाँय माता को देवें और उनके चित्तकी चिन्ता दूर करें । श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा ! इतना वचन हरि के मुख से निकलते ही राजा बलिने छहों बालक ला दिए और बहुत सी भेंट आगे धरी तब प्रभु वहाँ से भाइयों को साथले माता के पास आये माता पुत्रोंको देख अति प्रसन्न हुई इस बात को सुन सारी पुरीमें आनन्द हुआ और उनका शाप छूटा ।

अध्याय ८९

[सुभद्रा हरण]

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! जैसे द्वारका से अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्रजी की बहन सुभद्रा को हर ले गया और जैसे श्रीकृष्णचन्द्र मिथिला

में जाय रहे तैसे कथा कहता हूँ तुम मन लगाय सुनो, देवकी की बेटी कृष्णचन्द्रजी से छोटी जिसका नाम सुभद्रा, वह ब्याहन योग्य हुई तब वसुदेवजी ने कितने एक यदुवंशी और श्रीकृष्ण बलरामजीको बुलाय के कहा कि अब कन्या ब्याहन योग्य हुई, कहो किसे दें! बलरामजी बोलेकि कहा है ब्याह बैर प्रीति समान से कीजे, एक बात मेरे मन में आई है कि यह कन्या दुर्योधन को दीजे, तो जगत में यश और बड़ाई लीजे, श्री कृष्णचन्द्रजी ने कहा मेरे विचार में आता है जो अर्जुनको लड़की दें तो संसारमें यश लें श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज बलरामजी के कहने पर तो कोई कुछ न बोला पर श्रीकृष्णजीके मुखसे बातनिकलते हीसब पुकार

उठे कि अर्जुन को कन्या देना अति उत्तम है इस बात के सुनते ही बलरामजी बुरा मान वहाँ से उठ गए और उनका बुरा मानना देख सब लोग चुपरहे आगे यह समाचार पाय अर्जुन सन्यासी का वेष बनाय दण्ड कमण्डल ले द्वारिका में जाय एक भली सी ठौर देख मृगछाला बिछाय आसन मार बैठा—

चार मास वर्षा भर रह्यो । काहू मर्म न ताको लह्यो ॥
अतिथि जानि सब सेवन लागे । विष्णु हेतु वासों अनुरागे ॥
वाको भेद कृष्ण सब जान्यो । काहू सों तिन नाहिं बखान्यो ॥

महाराज एक दिन बलदेवजी अर्जुनको साधु जानकर घर जिमाने

लिवाय ले गए जो अर्जुन भोजन करने बैठे चन्द्र बदनी मृगलोचनी सुभद्राजी दृष्टि आईं देखते ही इधर तो अर्जुन मोहित हो सबकी दीठि बचाय फिर२ देखने लगे और मन ही मन यह विचार करने लगे कि देखिए विधाता कब जन्म पत्री की विधि मिलावे और उधर सुभद्रा जी इनके रूप की छटा देख रीझ मन ही मन यों कहतीं थीं।

है कोऊ नृपति नाहिं सन्यासी। का कारण यह भये उदासी॥

महाराज! इतना कह उधर तो सुभद्रा घर में जाय पतिके मिलने की चिन्ता करने लगीं और इधर भोजन कर अर्जुन अपने आसन पर आय प्रिया से मिलने को अनेक प्रकार की भावना करने लगे इसमें कितने एक दिन पीछे एक समय शिवरात्रि के दिन सब पुरवासी क्या स्त्री क्या पुरुष नगर के बाहर शिव पूजन को गए तब सुभद्राजी अपनी सखी सहेलियों समेत गईं उनके जानेका समाचार पाय अर्जुन भी रथ पर चढ़ धनुष बाण ले वहाँ जाय उपस्थित हुआ महाराज! ज्यों शिव पूजन कर सखियों को साथ ले सुभद्राजी फिरीं त्यों देखते ही सोच सङ्कोच तज अर्जुन ने हाथ पकड़ उठाय सुभद्रा को रथ में बिठाय अपनी बाट ली।

सुनतहिं राम कोप अति करयौ। हल मूसल ले काँधे धरयौ॥
राते नयन रक्त से करे। घन सम गरज बोल उच्चरे॥
अबहीं जाय प्रलय में करिहौं। छिति उठाय कर माथे धरिहौं॥
मेरी बहन सुभद्रा प्यारी। याको कैसे हरे भिखारी॥
अब हौं जहँ सन्यासी पाऊं। तिनका सब कुल खोज मिटाऊं॥

महाराज! बलरामजी तो महा क्रोध में बकझक रहे ही थे कि इस बात का समाचार पाय प्रद्युम्न अनिरुद्ध शांब और बड़ेर यादव बलदेवजी के सन्मुख आय हाथ जोड़ बोलेकि महाराज! हमें आज्ञा होय तो जाय शत्रु को पकड़ लावें इतनी कथा सुनाय श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज जिस समय बलरामजा सब यदुवंशियों को साथ ले अर्जुन के पीछे चलने को उपस्थित हुए, उस काल श्रीकृष्णचन्द्रजी ने आय बलदेवजी को सुभद्रा हरण का सब भेद समझाय और अतिविनती

कर कहा कि भाई अर्जुन एकतोहमारी फूफीकाबेटाहै औरदूसरे परम मित्र उसके जाने अनजानेसमझे बिनसमझे यहकर्मकियातोकिया. पर हमें उससे लड़ना कभी उचित नहीं यह धर्मविरुद्ध है और लोक विरुद्धहै इसबात को जोसुनेगा सोकहेगाकि यदुवंशियों की प्रीतिहै बालू की सी भीत, इतनी बात सुनतेही बलरामजी शिरधुन झुंझला कर बोलेकि भाई यह तुम्हाराकाम है कि आगलगाय पानीको दौड़ना नहीं तो अर्जुन की क्या सामर्थ्य थी जो हमारी बहन को ले जाता इतनी कह मन ही मन पछिताय तावपेच खाय बलरामजी भाईका मुखदेख हलमूसल पटक बैठरहे औरउनकेसाथ यदुवंशी भी। श्रीशुकदेवजी बोले कि राजा इधरतो श्रीकृष्णचन्द्रजीने सबको समझाय बुझाय रक्खा और उधर अर्जुनने घरजाय वेद की विधिसे सुभद्रा के साथ ब्याहकिया, ब्याहके समाचारपाय श्रीकृष्ण बलरामजीने वस्त्रआभूषण दास, दासी, हाथी घोड़े, रथ और बहुतसे रुपये एक ब्राह्मणके हाथ सङ्कल्प कर हस्तिनापुर को भेजदिए, आगे श्रीमुरारी भक्तहितकारी रथ पर बैठ मिथिला को चले जहाँ श्रुतदेव बहुलाश्व नामके एकराजा एकब्राह्मण दो भक्त थे, महाराज प्रभु के चलते ही नारद वामदेव व्यास, अत्रि, परशुराम आदि कितने एक मुनि आन मिले और श्रीकृष्णचन्द्रजीके साथ हो लिये पुनि जिस दिशामें हो प्रभु जाते थे वहाँ के राजा आगू आय२ पूज२ भेंट धरते जातें थे निदान चले२ कितनेदिनों में प्रभु वहाँ पधारे, हरि के आने के समाचारपाय वे दोनों जैसे बैठे थे तैसे ही भेंटले२ उठधाए औरश्रीकृष्ण जी के पासआये प्रभुका दर्शन करते ही दोनों भेंट धर दण्डवत कर हाथजोड़ सन्मुख खड़े हो अतिविनय कर बोले, हेकृपासिन्धु दीनबन्धु आपने बड़ी दयाकी जो हमसे पतितको दर्शनदे पावन किया और जन्म मरण को चुका दिया इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी बोले राजा! अन्तर्यामी श्रीकृष्णचन्द्र उनदोनों भक्तोंके मनकी भक्ति देख दोस्वरूप धारणकर दोनोंके घर जाय रहे उन्होंने मनमानता सब रावचावकिया और हरिने कितने एक दिन वहाँ ठहर उन्हें अधिक सुख दिया, और प्रभु उनके मनका मनोरथ पूराकरज्ञान

हटाय जब द्वारिका को चले तब ऋषि मुनि पन्थ में बिदा हुए और हरि द्वारिका में जा बिराजे ।

अध्याय ८७

इतनीकथाकह राजापरीक्षितने श्रीशुकदेवजी सेपूछाकि, महाराज आपजो आगे कहआयेकि, वेदने परमेश्वरकी स्तुतिकीसो निर्गुणब्रह्मकी स्तुतिवेदने क्योंकरकी? यहमुझेसमझाकरकहो जोमेरेमनका सन्देह जाय श्रीशुकदेवजी बोलेकिमहाराज सुनिये किजिसनेबुद्धिइन्द्रिय,मन,प्राण,धर्म,अर्थ,काम,मोक्ष

कोबनायासोप्रभु सदा निर्गुण रहताहै, परजबब्रह्माण्डरचताहै,तब सगुणरूप होताहै इससे निर्गुण सगुणवही एकईश्वरहै,इतनाकहमुनि श्रीशुकदेवमुनि बोलेकि, महाराज जो तुम ने प्रश्न किया सोप्रश्न एकसमय नारदजी ने नारायणजीसे कियाथा परीक्षितनेकहाकि महाराज यह प्रसङ्ग मुझेसमझाकर कहिए जो मेरेमनका सन्देहजाय श्रीशुकदेवजीबोलेकि राजा सतयुगमें एक समय सत्यलोकमें जाय जहाँनारायण अनेकमुनियोंके सङ्गबैठे तपकरतेथे नारदनेपूछाकि महाराज निराकारब्रह्मकी स्तुति वेदकिसभांति करतेहैं सो कृपाकर कहिये नर नारायण बोलेकि सुन नारद ! जो सन्देश तूनेमुझसे पूछा,यही सन्देश ,एकसमय जनलोकमें जहांसनातनादिऋषि बैठेतपकरते थे तहां सम्वाद हुआ था, नारदजी बोले, महाराज ! मैं भी वहींरहताहूँ जो

यहप्रसङ्गचलतातो मैंभीसुनता नरनारायणनेकहा, नारदजी!तुम श्वेतद्वीपमें भगवानकेदर्शनको गयेतभीयहप्रसङ्गचलाथा इससेतुमनेनहीं सुना इतनीबात सुननारदजीनेपूछा माहाराज! वहाँ क्याप्रसङ्गचलाथा सोकृपाकरकहिये। नर नारायणबोलेकि' सुननारद! जबमुनियोंने यहप्रश्नकिया तबसनन्दनमुनि कहने लगेकि, सुनो, जिससमय महाप्रलयहो चौदहब्रह्माण्डजलाकारहोजातेहैं उससमयपूर्णब्रह्म अकेले सोतेरहतेहैं, जबभगवानकोसृष्टिकरनेकीइच्छाहोती है तबउनकेश्वाससेवेदनिकलहाथजोड़ स्तुतिकरतेहैं ऐसेकि, जैसेकोई राजाअपने स्थानपरसोताहोऔरबन्दीजनभोरहीउसकायशगायउसीकोजगावे इसलियेकि चैतन्य हो शीघ्र अपना कार्य करे–

इतना प्रसङ्गकह नरनारायण बोलेकि, सुन नारद प्रभकेमुखसे निकल वेद यहकहतेहैंकि हेनाथ! वेग चैतन्यहो सृष्टि रचोऔर जीवों के मन से अपनी मायादूरकरो, क्योंकि, वेतुम्हारे रूपकोपहिचानें मायातुम्हारीप्रबलहै, वहसब जीवोंको अज्ञानकररखतीहै, जोउससे छूटेतो जीवनको तुम्हारेसमझनेका ज्ञान हो हेनाथ! तुमबिनइसेकोई वशनहींकरसकता जिसके हृदयमें ज्ञानरूपहोतुम बिराजतेहो सोई इसमायाको जीतताहै, नहींतो किसकी सामर्थ्यहैजो मायाके हाथसेबचे? तुमसबकेकर्ताहो, सबजीवतुम्हींसे उत्पन्नहो तुम्हींमें समातेहैं ऐसे कि, जैसेपृथ्वीसे अनेक वस्तुहोपृथ्वीमें मिलजाती हैं कोईकिसी देवताकीपूजा स्तुति करें, पर वह तुम्हारीही पूजास्तुति होती है ऐसे कि, जैसेकोई कञ्चनके आभरण बनाय अनेकनाम धरे पर वह कञ्चन ही है तिसी भाँति तुम्हारे अनेकरूपहैं और ज्ञानकर देखियेतोकोई कुछ नहीं जिधरदेखिए तिधर तुम्हीं तुम दृष्टि आतेहो नाथ! तुम्हारी मायाअपरम्पारहै यहीसत्वरजतमतीन गुणहो तीन स्वरूप धारणकर सृष्टिको उपजाय पालन नाश करती है इसका भेद न किसीने पाया नकोई पावेगा इससे जीवकोउचित यहहैकि सब बासना छोड़ कर तुम्हाराध्यानकरे, इसीसे इसका कल्याणहै, महाराज इतना प्रसङ्ग सुनाय नारायणने कहा कि, हेनारद! सनकादिक मुनियोंनेवेदकी विधिसे सनन्दन मुनि की पूजा की।

इतनी कथाकह श्रीशुकदेवजीबोलेकि हेराजा ! यह नरनारायण नारद का सम्वाद जोकोई सुनेगा निस्सन्देह भक्ति पदार्थपाय मुक्त होगा, जो कथा पूर्ण ब्रह्मकी वेदनेगाई सोकथा सनन्दनमुनिने सनकादिक मुनियोंकोसुनाई पुनि वहीकथा नरनारायणने नारदकेआगेगाई, नारदसे व्यासनेपाई व्यास ने मुझे पढ़ाई सो मैंनेअब तुम्हें सुनाई, इसकथाको जो जन सुनेसुनावेगा, सो मन मानता फल पवेगा, जो पुण्यहोताहै तप, यज्ञ, दान ब्रततीर्थ करने में सोई पुण्य होता है इस कथा के कहने सुनने में।

अध्याय ८८

श्रीशुकदेवजी बोले—कि महाराज ! भगवत की अद्भुत लीला है, इसे सब कोई जानते हैं जो जन हरि की पूजा करे सो दरिद्री होय और महा-

देवजी को माने सो धनवान देखो हरि की कैसी रीति है ये लक्ष्मी पति वे गौरी पति, ये धरे बनमाला वे मुण्डमाला, ये चक्रपाणि वे शूलपाणि ये धरणीधर वे गङ्गाधर ये मुरली बजावें वे सींगी, ये वैकुण्ठ वे कैलाश, वासी ये प्रतिपालें वेसंहारें, ये चर्चित चन्दन वे लगावें विभूति, ये ओढ़ें पीताम्बर वे बाघम्बर ये पढ़ें वेद वे आगम, इनकावाहन गरुड़ उनकानन्दी ये रहें ग्वाल बाल में वे भूत प्रेतों में:-

दोऊ प्रभू की उलटी रीती। जित इच्छा तित कीजै प्रीती

इतनी कथा कह श्री शुक देवजी बोले कि महाराज ! राजा युधिष्ठिर

से श्रीकृष्णचन्द्र ने कहा कि हे युधिष्ठिर ! जिस पर मैं अनुग्रह करता हूँ हौलेर उसका धन सब खोता हूँ, इसलिये कि धन हीन को भाई बन्धु, स्त्री, पुत्र आदि सब कुटुम्ब के लोग तज देते हैं तब उसे वैराग उपजता है वैराग होने से धन जन की माया छोड़ निर्मोही हो मन लगाय मेरा भजन करता है भजन प्रताप से अटल निर्वाण पद पाता है इतना कह पुनि शुकदेवजी कहने लगे कि महाराज ! और देवता की पूजा करने से मनःकामना, पूरी होती है पर भक्ति नहीं मिलती यह प्रसङ्ग सुनाय मुनि ने पुनि राजा परीक्षित से कहा कि महाराज ! एक समय कश्यप का पुत्र वृकासुर तप करने की अभिलाषा कर जो घर से निकला तो पन्थ में उसे नारद मुनि मिले नारदजी को देखते ही उन्हें दण्डवत कर हाथ जोड़ सन्मुख खड़ेहो अति दीनताकर बोला, कि महाराज ब्रह्मा विष्णु महादेव इन तीनों देवताओं में शीघ्र वरदाता कौन हैं सो कृपा कर कहो तो मैं उन्हीं की तपस्या करूं, नारदजी बोले कि सुन वृकासुर इन तीनों देवताओं में महादेव जी बड़े वर दायक हैं, इनको न रीझते बिलम्ब न खीजते, देखो ! शिव ने थोड़े से तप करने से प्रसन्न हो सहस्त्रार्जुन को सहस्त्र हाथ दिये और अल्प ही अपराध में महा क्रोधकर उसकानाशकिया महाराज ! इतनीकह नारद मुनितो चलेगये और वृकासुर अपने स्थान पर आय महादेवका अति तप करने लगा सातदिनके बीच उसने छुरी से अपने शिर का मांस सब काटर होम दिया आठवें दिन जब शिर काटने का मन किया तब भोला नाथ ने आय उसका हाथ पकड़ के कहा कि मैं तुझसे प्रसन्न हुआ, जो तेरी इच्छा आवे वर माँग मैं तुझे अभी दूंगा इतना वचन शिवजी के मुख से निकलते ही वृकासुर हाथ जोड़ बोला –

दोहा—ऐसा वर दीजे अबै, धरौं जाहि शिर हाथ। भस्म होय सोपलक में, करहु कृपा तुम नाथ ॥

महाराज ! बात के कहते ही महादेवजी ने उसे मुँहमांगा वर दिया वर पाय वह शिवजी के ही शिर पर हाथ धरने चला उस काल भय खाय महादेवजी आसन छोड़ भागे, उनके पीछे असुर भी दौड़ा महाराज सदा

शिवजी जहाँ२ फिरे तहाँ२ वह भी उनके पीछे ही लगा आया निदान अति व्याकुल हो महादेवजी वैकुण्ठ में गये, उनको महादुखित देख भक्त हित-कारी वैकुण्ठनाथ श्रीमुरारी करुणा करके विप्र वेष धर वृकासुर के सन्मुख जाय बोले कि हे असुर राय तुम उनके पीछे क्यों श्रम करते हो यह समझा कर कहो बातके सुनते ही वृकासुर ने सब भेद कह सुनाया, पुनि भगवान बोले कि हे असुर राय ! तुमने सयाना हो धोखा खाया, यह बड़े अचरज की बात है इस नंगे मुनंगे बावले भाँग धतूरा खाने वाले योगी की बात को जो सत्य मानो, ये सदा राख लगाए सर्प लिपटाए भयानक वेष किए भूत प्रेतों को संग में लिए स्मशान में रहता है इसकी बात किसके साँच आवै महाराज ! यह बात कह श्रीनारायणजी बोले कि हे असुर राय जो तुम मेरा कहा झूंठ मानो तो अपने शिर पर हाथ रख देखलो महाराज ! प्रभुके मुखसे इतनी बात सुनते ही मायाके वश अज्ञान हो ज्यों वृकासुर ने अपने शिर पर हाथ रख लिया त्योंही जलकर भस्म का ढेरहुआ, असुर के मरते ही सुरपुर में आनन्द के बाजे बजने लगे और लगे देवता जय जयकार कर फूल बरसावने, विद्याधर गन्धर्व, किन्नर हरि गुण गाने उसकाल हरि ने हर की स्तुति कर बिदा किया और वृकासुर को मोक्ष पदार्थ दिया, श्रीशुकदेवजी बोलेकि—महाराज! इस प्रसंग को जो सुने सुनावेगा, सो निस्सन्देह हरिकी कृपासे परम पद पावेगा।

अध्याय ८९

श्रीशुकदेवजी बोले कि महाराज ! एक समय सरस्वती के तीर सब ऋषि मुनि बैठे तप यज्ञ करते थे, उनमें से किसी ने पूछा कि ब्रह्मा विष्णु महेश इन तीनों देवताओं में बड़ा कौन है ? सो कृपा कर कहो इस में किसी ने कहा शिव किसी ने कहा विष्णु और किसी ने कहा ब्रह्मा पर सब ने मिल एक को बड़ा न बताया, तब कई एक बड़े मुनीशों ऋषीशों ने कहा कि हम यों तो किसी

की बात नहीं मानते, पर हाँ जो कोई इनतीनों देवताओंकी जाके परीक्षा कर आवे और धर्म स्वरूपी कहे तो उसका कहना सत्य मानें महाराज यह बात सुन सबने प्रणाम की और ब्रह्माके पुत्र भृगु को तीनों देवताओं की परीक्षाकर आनेकी आज्ञादी आज्ञापाय भृगुमुनि प्रथम ब्रह्मलोक में गये और चुपचाप ब्रह्माकी सभामें जाकरबैठे न दण्डवतकी, नस्तुति नपरिक्रमा, राजा! तब पुत्र का अनाचार देख ब्रह्माने कोपकिया और चाहाकि शाप दूं, पर पुत्र की ममता कर न दिया उस काल भृगु पिताको रजोगण में आसक्त देख वहाँसेउठ कैलाशमें गये और जहाँ शिव पार्वती बिराजते थे तहाँ जा खड़े भये इसेदेख शिवजी खड़ेहो ज्यों हाथ पसार मिलने को हुए

त्यों यह बैठगया बैठतेही शिवजी ने अति क्रोधकर इसे मारने के त्रिशूल हाथ में लिया उस समय पार्वतीने अतिविनती कर पाँवों पड़ महादेवजी को समझाया और कहा कि यह तुम्हारा छोटा भाई है, इसका अपराध क्षमा कीजये कहा है—

बालक सों जो चूक कछु परे। साधु न कबहू मन में धरे॥

महाराज! जब पार्वतीजी ने शिवजी को समझा कर ठंडाकिया, तब भृगुमहादेवजी को तमोगण में लीन देख चल खड़े हुए पुनि वैकुण्ठ में गये जहां भगवान मणिमय कञ्चनके छप्पर खटपर फूलोंकी सेजमें लक्ष्मी के साथ सोतेथे जातेही भृगु ने भगवान के हृदय में एकलात ऐसी मारीकि वे

नींदसे चौंकपड़े मुनिको देख लक्ष्मीको छोड़ छप्पर खटसे उतर हरि भृगुजी का पग शिर आँखों से लगाय, लगे दाबने और यों कहनेकि हे ऋषिराय! मेरा अपराध क्षमा कीजे, मेरे कठिन हृदय की चोट तुम्हारे कोमल कमल चरण में अनजाने लगी यह दोष चितमें न लीजै, इतना वचन प्रभुके मुख से निकलते ही भृगुजी अति प्रसन्न हो स्तुति कर विदा हो वहाँ आये, जहाँ सरस्वती तीर सब ऋषि मुनि बैठे थे, आतेही भृगुजीने तीनों देवताओं का भेद सब ज्यों का त्यों कह सुनाया कि ---

ब्रह्मा राजस में लिपटाम्यो । महादेव तामस में सान्यो ॥
विष्णु जु सात्विक माहि प्रधान । तिनते बड़ौ देव नहिं आन ॥
सुनत ऋषिन को संशय गयो । सबही के मन आनन्द भयो ॥
विष्णु प्रसंशा सबने करी । अविचल भक्ति हृदय में धरी ॥

इतनो कथा कह श्रीशुकदेवजीने राजापरीक्षित से कहाकि महाराज! मैं अन्तर कथा कहताहूँ तुममनलगाय सुनो द्वारकपुरीमें राजाउग्रसेन तो धर्मराज करते थे और श्रीकृष्ण बलराम उनके आज्ञाकारी राजा के राज्य में सब लोग अपने २ स्वधर्म में सावधान, राजकर्म में सज्ञान रहते और आनन्द चैन करतेथे तहाँ एक ब्राह्मण भी अति सुशील धर्मनिष्ठ रहता था एक समय उसके पुत्रहो मरगया, वह उस मरेपुत्रको ले राजा उग्रसेनके द्वारपर गया और उसके मुँहमें जो आया सो कहने लगा कि तुम बड़े अधर्मी दुष्कर्मी पापीहो तुम्हारे ही कर्म धर्म से प्रजा दुख पाते हैं, मेरा भी पुत्र तुम्हारे पाप से मरा, महाराज! इसी भांति अनेक २ बात कह मरा लड़का राजद्वारपर रख ब्राह्मण अपने घर को आया, आगे उसके आठ बेटे हुए औरआठों को वह उसी रीति से राजद्वारपर रखआया, जब नवाँपुत्र होने को हुआ, तब ब्राह्मण राजा उग्रसेन की सभामें जा श्रीकृष्णचन्द्रजी के सन्मुख खड़े हो पुत्रों के मरनेका दुःख सुमिर२ रोरो ये कहने लगा कि धिक्कार है, राजा और इसके राज्य को, पुनि धिक्कार है उनलोगों को जो अधर्मीकी सेवाकरतेहैं और धिक्कारहै मुझेजो इस पुरी में रहताहूँ, जो इन पापियों के देशमें न रहता तो मेरे पुत्र बचते इन्हीं के अधर्म से मेरे पुत्र मरे

और किसी ने उपाय न किया, महाराज! इस ढब की सभा के बीच खड़े हो ब्राह्मणने रो रो बहुत सी बात कहीं पर कोई कुछ न बोला निदान श्रीकृष्णचन्द्र के पास बैठा सुन२ घबड़ा कर अर्जुनबोला कि, हे देवता! तुम किसी के आगे यह बात क्यों कहते हो और क्यों इतना खेद करते हो? इस सभा में कोई धनुर्धारी नहीं जो तुम्हारा दुःख दूर करे आज कलके राजा आप काजी हैं पर दुःखनिवारक नहीं, जो प्रजा को सुख दे और गौ ब्राह्मण की सेवा करे, ऐसा सुनाय पुनि अर्जुन ने ब्राह्मण से कहा कि देवता! तुम जाय अपने घर निश्चिन्त बैठ रहो जब तुम्हारे लड़का होने का दिन आवे तब तुम मेरे पास आइयो, मैं तुम्हारे साथ चलूंगा और लड़के को न मरनेदूंगा महाराज! इतनी बात के सुनते ही ब्राह्मण खिजलाय कर बोला कि, मैं इस सभा के बीच श्रीकृष्ण, बलराम प्रद्युम्न और अनिरुद्ध सिवाय ऐसा बलवान किसी को नहीं देखता जो मेरे पुत्र को काल के हाथ से बचावै अर्जुन बोला कि ब्राह्मण तू मुझे नहीं जानता कि मेरानाम धनञ्जय है तुझसे प्रतिज्ञा करता हूँकि जो मैं तेरा सुत काल के हाथ से न बचाऊं तो तेरे मरे हुएलड़के पाऊं तहाँ से ले आय तुझे दिख लाउँ और वे भी न मिलें तो गाँडीव धनुष समेत अपने को अग्निमें जलाऊं महाराज! जब प्रतिज्ञा कर अर्जुन ने ऐसा कहा तब वह ब्राह्मण सन्तोषकर अपनेघरको गया पुनि पुत्र होनेके समय विप्र अर्जुन के निकट आया, उस समय अर्जुन धनुष बाण ले उसके साथ उठ धाया आगे वहाँ जाय उसका घर अर्जुन ने बाणों से ऐसा छायाकि जिस में पवन भी प्रवेश न कर सके और आप धनुष बाण लिये उसके चारों ओर फिरने लगा।

इतनीकथाकह श्रीशुकदेवजीने, राजापरीक्षितसे कहाकि महाराज अर्जुन ने बहुतसा उपायबालकके बचानेका किया परनबचा और दिनबालक होने के समय रोता था, उसदिन श्वासभीनलिया, वरनपेटहीसे मरानिकला, मरे लड़के का होनासुन लज्जितहो अर्जुन श्रीकृष्णचन्द्रजीके निकटआया और इसके पीछे ब्राह्मण भी आया, महाराज! वहाँ आते ही रोर ब्राह्मण कहने

लगाकि रे अर्जुन ! धिक्कार है तुझे और तेरे जपतपको जो मिथ्या बचनकह संसारमें लोगोंको मुखदिखाता है अरे नपुंसक जोतूमेरेपुत्रको कालकेहाथसे न बचासकताथा, तोतैंनेप्रतिज्ञा क्योंकीथी कि मैं तेरे पुत्र को बचाऊँगा और न बचा सकूंगातो तेरे मरेपुत्र लादूंगा, इतनीबातके सुनतेही अर्जुन धनुषबाण लेवहाँसे उठ चला२ संयमनी पुरीमें धर्मराजके पासगया, उसे देख धर्मराज उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ स्तुति कर बोला कि, महाराज ! आपका आगमन कहाँसे हुआ ? अर्जुन बोलेकि अमुक ब्राह्मण के बालक लेने आया हूँ धर्मराज ने कहा वे बालक यहाँ नहींआये, महाराज ? इतना वचन धर्मराज के मुखसे निकलते ही अर्जुन वहांसे विदा हो सब ठौर फिरा पर उसने ब्राह्मणके लड़कोंकोकहीं न पाया, निदान अछतापछता द्वारकापुरीमें आया और चितावनाय धनुषबाण समेत जलने को उपस्थित हुआ आगे अग्नि जलाय अर्जुन जो चाहेकि चितापर बैठूं तो श्रीमुरारी गर्वप्रहारी ने आय हाथ पकड़ा और हँसकर कहाकि, हे अर्जुन तू मत जले तेरी प्रतिज्ञा मैं पूरी करूँगा जहाँ उस ब्राह्मण के पुत्र होंगे तहाँ से लादूँगा, महाराज ऐसे कह त्रिलोकीनाथ रथ पर बैठे अर्जुन को साथले पूर्वदिशाकी ओरको चले और सात समुद्रपार हो कन्दरामें पैठे उस समय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सुदर्शन चक्रको आज्ञादी,वहकोटिसूर्यप्रकाशकिये प्रभु के आगे महाअन्धकार को टालताचला—

तम, तजि केतिक आगे गये । जलमें सबै जु पैठत भये
महा तरंग तासु में लसे । मूंदि आंखि वे तामें धसे ॥
पहुढे हुते शेषजी जहाँ । अर्जुन कृष्ण पहुँचे तहां ॥

जातेही आँखखोलकर देखा कि एक बड़ा लम्बा चौड़ा ऊँचा कंचन का मणिमय मन्दिर अतिसुन्दर है तहाँशेषजी के शीशपर रत्न जटित सिंहासन धरा है तिस पर श्यामघनरूप सुन्दर स्वरूप चन्द्रबदन कमल नयन किरीट कुण्डल पहने पीत बसनओढ़े पीताम्बरकाछे बनमाल मुक्तमाल डाले आगे प्रभुमोहिनी मूर्तिबिराजे हैं और ब्रह्मा,रुद्र,इन्द्र, आदि सब देवता सन्मुख खड़े स्तुति करते हैं, महाराज ! ऐसा उत्तम स्वरूप देख अर्जुन और श्रीकृष्ण चन्द्रजी ने प्रभुके सौंही जाय दण्डवत प्रणामकर हाथ जोड़ अपने आने का सब

कारण कहा बातके सुनतेही प्रभुने ब्राह्मणके बालक सब मंगा दिये और अर्जुन ने देख भाल प्रसन्न हो लिये तब प्रभु बोले—

तुम दोऊ मेरी कला जु आहि । हरि अर्जुन देखो चितय हि ॥
भार उतारन भुवि पर गये । साधु सन्त को बहु सुख दये ॥
असुर दैत्य तुमने संहारे । सुर नर मुनि के काज सुधारे ॥
मेरे अंश जु तुम से है हैं । पूरण काम तुम्हारे ह्वै हैं ॥

इतनी कह भगवान ने अर्जुन और श्रीकृष्ण को बिदा किया, ये बालक ले पुरी में आये, घर घर आनन्द मङ्गल भये बधाये, इतनी कथा कह श्रीशुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कहा कि महाराज—

जो यह कथा सुनें धर ध्यान । तिनके पुत्र होय कल्यान ॥

इति श्री लल्लूलाल कृते प्रेम सागर द्विज राजकुमार हरण व प्राप्ती नाम नवासीतितमोऽध्याय ॥८९॥

अध्याय ९०

श्रीशुकदेवजी बोलेकि महाराज ! द्वारकापुरी में श्रीकृष्णचन्द्र सदा विराजें ऋद्धि सिद्धि सब यदुवंशियों के घर २ बिराजे, नरनारी सब आभूषण ले नववेष बनावें, चोवा चन्दन, चरच सुगन्ध लगावें, महाराज ! हाट बाट चौहाटे झाड़ बुहार छिड़कावें, तहाँ देश२ के व्यापारी अनेक२ पदार्थ बेचने को लावें, जिधर तिधर पुरवासी कुतूहल करें ठौर२ ब्राह्मण वेद उच्चारें, घर२ मँगली लोग कथा पुराण सुनें सुनावें साधुसन्त आठों याम हरि यश गावें, सारथी रथ घुड़बहल जोत२ राजद्वार लावें, रथीमहा